

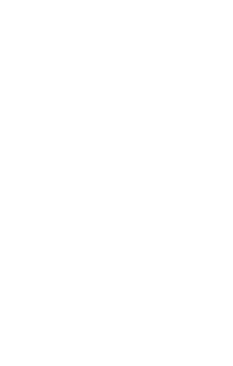
প<u>্রবাদ্য</u>





महात्मा गांधी एक मार्क्सवादी परिचर्चा





नहात्मा गांधी



जननरी १६५१ (11/123) नामिराइट रूपीपुट्य प्रसिध्य हाल्य (बा) निनिदेव

संपारन (अग्रेजी गरन रण) एम. वी. राव

अनुवाद अन्तिम निवन्ध को छोड़, जिसकी हिन्दी पांडुलिपि स्वयं लेखक ने दी, अन्य निवन्दों के अनुवादक :

वद्रीनाथ तिवारी

मूल्य : ४ रुपये

न्यू एज प्रिटिंग प्रेस, रानी कांसी रोड, नई दिल्ली में डी. पी. सिनहा द्वारा मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड, रानी कांसी रोड, नई दिल्ली, की तरफ से प्रकाशित।





प्रकाशकीय टिप्पणी

महात्मा गांधी अपने जीवत काल में भारतीय राजनीति में सदा एक विवादा-स्पद व्यक्तित्व रहे । हर राजनीतिक विचार प्रवाह का, स्वयं उनके अनुपायियों और उत्तराधिकारियों के विचार प्रवाह का भी, किसी न किसी समय, किसी न निसी मुद्दे पर, उनके विचारों और तौर-तरीकों से टकराव हुआ। स्वयं कांग्रेस के भीतर के दक्षिणपंच (बस्तमभाई) और वामपंच (जवाहरलाल), दोनों का एकाधिक बार गांधी जी में उप मतभेद रहा । यह सब है कि इसके बावबूद वे माय-साथ निर्वाह करते रहे, परन्तु यह कह सकना कठिन है कि यह कहां तक अवाम पर गांधी जी के जबर्दस्त प्रमाव के कारण था और कहा तक मात्र अवसरबाद के कारण।

भरम दक्षिणपंची हिन्द सम्प्रदायवाद ने २१ वर्ष पूर्व महात्मा गांधी की हत्या का शिकार बना कर उनके संबंध में अपना फैसला दे दिया था. जबकि मुस्लिम सम्प्रदायबाद साल भर पहले ही विश्वावन द्वारा उन्हें अधगरा कर पुका था। देश के बामपंथी तत्वों में गांघी जी के व्यक्तित्व के प्रति एक

मञ्जा दहरा रत रहा है।

कम्पनिस्ट पार्टी भी कई मौकों पर गांधी जी से उम्र रूप से टकरागी। यह उनके विभिन्न मिद्धान्तों को स्वीकार नहीं कर सकी, न ही साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन में उनकी मूमिका से इनकार कर सकी। दोनों के बीच इस बात को लेकर कट संघर्ष रहा कि अवाम की कौन अपनी तरफ लायेगा और किम विचारधारा के लिए लायेगा ।

गायी जी के स्वर्गवास के बाद के इन दी दशकों में लोगों के सामने यह माफ हो गया है कि उन्होंने बाहे जो कुछ बाहा हो, पर उनके कुछ सिद्धान्तों के फलस्वरूप, तथा उनके तथाकवित अनुवावियों के व्यवहार के फलस्वरूप

तो निश्चित रूप से, देश गंभीर संकटों मे आ फंसा है। गांधी जी की जन्म शती की स्मृति में और भी अधिक व्यापकता के

साय इस ग्रंथ की योजना बनायी गयी थी। लेकिन अमसी राजनीति के कारण तया कांग्रेस महाममिति के बंगलीर अधिवेशन के बाद कांग्रेम के भीतर हान के उलटफेर के कारण, अनेक लोग जिन्होंने लिखने का आह्वामन दिया था, दसरे कामों में स्वस्त रहे।

फिर भी हमारा निश्याम है कि कुछ नेस, साम यह मीभी जी और जनते के प्रश्न का निश्याण करने नाता भीपाद अमृत दांगे का नेस्त समा श्रीतिवास सर्देसाई, मोहित सेन ओर श्री, हीरेन मुखर्जी के नेस्त गांधी जी के जीवत-काल की घटनाओं पर कुछ नया प्रकाश दानेंगे।

ययोगूज कालिकारी भी मन्ययाय गुंज के प्रति जिन्होंने कालिकारी आन्दोलन की और गांधी भी के लग्धीयक विशेष भाग की उमार का रसा है, श्री गुरेन्द्र गोंपात के प्रति जिन्होंने राष्ट्रभाषा के रूप में गांधी जें के हिन्दुस्तानी सिद्धान्त का निरूपण किया है, तथा भदन आनन्द्र कोसलाम के प्रति जिन्होंने अपनी अदिशीय शैंसी में गांधी जो के जीयन की कुछ सल किया प्रस्तुत की हैं, प्रकाशन गृह आभारी है।

क्रम

~	A(
	महारमा को जन्य-शतास्त्री			
	थीपाद अमृत होंग	***	8	
	ाथो जो और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी			
	थानिवास मरदेसाई		৬	
	र्गाचीबाद : स्वतंत्रता के बाद			
	मोहित सेन	•••	**	
	एक अदिलीय नेता			
	हीरेन मुखर्जी	***	50	
	गांधी जो और १६२५ के बीप के कान्ति	हारी		
	मन्मवनाच गुप्त	•••	52	

355

... १२६

भारत की राष्ट्रमाथा और गांधी जी सुरेन्द्र गोपाल

गोबी सी, जैसा कि मैंने उन्हें जाना भदन्त आनन्द कौसल्यायन

महातमा की जन्म-शताब्दी श्रीपाद अमृत हांगे

हमारे देशवासी इस वर्ष अक्तूबर में महात्मा गायी की जन्म-राताकरी मना

ु जिस समय जनकाजन्म हुआ या उस समय भारत अभीभी १८५७ के स्वाधीनता संग्राम में काम आये वीरों और भारत की पराजय के दुप्परिणामों पर शोक मना रहा था। बच्चे का जन्म उस महान संपर्य के बारह वर्ष बाद हुआ था और उसका सातन-पातन एक ऐसे सम्पन्न, धर्मनिष्ठ हिन्दू परिवार में हुआ था जो एक ओर भारत के उस हिस्से के बातावरण से सराबोर था जहा ब्रिटिश साझाज्य के चारूर रजवाड़ों की बहुतायत थी, दूगरी और वह गरीचो से प्रताहित उस भारत से थिरा हुआ था जहां विक्टोरिया-साझाज्य की थी-समृद्धिका निर्माण करने में सालो लोगों ने हुमिशों में जानें गता दी थीं। परिवार की समृद्धि से युवक गांधी को बिटिस साम्राज्य के हृदय-स्थत संदन में विशा के श्रेष्टतम तहाँ को आत्मतान करने तथा बिटिस कानून के वकादार बकीत के रूप में उतने में मदद मिली।

किन्तु जब बह दक्षिण असीका गये और वहां उसी कानून के आयार पर जरोड़ित मारतीयों की बकानत की, तो गोरे शासक बर्ग के बातीय हुए और देशें के सामने समानता और समर्राध्ट सम्बंधी सारी पारणामें बाहर ही गयी। बहा उन्होंने समानता के लिए संपर्य करने का, मानद गरिमा के लिए जुमने का और तस्तवाद का विरोध करते का पहला पाठ पद्मा। किर भी कह सामाज्य के प्रति बकादार बने रहे। उन दिनों उनके अनुसार वह सम्पता, न्याय और प्रगति का प्रतिनिधित्व करना था। इसनिए जब प्रदम विश्व पुढ विहा, तो गामी जी मामान्य के बकादार सेवक वे और सामान्य की रता के जिए भारत के मुक्कों को मनीं करा रहें थे। इस बात पर मीतमान्य जिसक में उनका मतभेद था। सीनमान्य तक तक प्रनित्सा के निए काम करने को तैयार नहीं थे जब तक कि 'होम रूल' की उनकी मान नहीं मान की बाकी !

युद्ध समाप्त होने के बाद बढ़ लोग स्वतंत्रना और राष्ट्रीय स्वापीनना के तिए ग्रीर मबाने सब बीर बिटिश शासाओं ने पहुने सी शेनिट ऐस्ट अने

निष्ठुरतम कानूनों द्वारा, और बाद में लोमहर्षक नरसंहारों और कर्लेश्राम (जैसा कि जिल्यावाला बाग में किया गया) तथा विष्वयी पंजाब के मांतिपूर्ण नगरों और गांबों पर बमबारी द्वारा, जनता की मांग की कुललना शुरू किया तो गांधी के भीतर का राजभक्त, बिटिय कानून का वकील और बिटिय न्याय में विश्वास राने वाला, एक कुलमंकला कृद्ध विद्वोही में बदल गया जो उसके बाद साझाज्यवाद-विरोधी आन्दोलन का महानतम संगठनकर्ता तथा स्वतंत्रता और स्वाधीनता के लिए बगावत में उठ खड़े हुए अवाम का नेता बना।

प्रचंद कलाना मिक्त और आततायियों के लिलाफ अदम्य आकोप के साय यह जन आन्दोलन के महान नायक के रूप में उभर आये। उनका कहना या कि ब्रिटिश सरकार पैशाचिक सरकार है और उन्होंने उने पूरी तरह व्यस्त कर देने का आह्वान किया। जैसा कि यह कहते थे, शैतान और पाप के साथ कोई समभीता नहीं हो सकता।

उन्होंने सम्पूर्ण देश के लाखों-फरोड़ों लोगों को एकता में यांचने, अनुशासित करने और संवर्ष में उतारने के लिए आज के 'वंद' के पूर्व रूप—अखिल भार-तीय हड़तालों—के हिययार का इस्तेमाल किया। उन्होंने वहिष्कार और वरने के नारों के साथ लाखों लोगों को सड़कों-गिलयों में उतार दिया, जिसके फल-स्वरूप ब्रिटिश अधिकारियों और उनकी अमन-कानून की शक्तियों से जुफारू मुठभेड़ें हुई। उन्होंने स्कूली वच्चों से लेकर वड़े-वूढों तक, धनी लोगों से लेकर गरीव किसानों तक, सभी का, पैशाचिक सरकार के विच्छ असहयोग करने तथा भारत की ऐक्यवछ जनता के विराट संकल्प और संघर्ष द्वारा उसे घरा-शायी कर देने का आह्वान किया। उन्होंने भारतीय जनता का आह्वान किया कि वह सरकार के लिए काम करने, उसके लिए कोई भुगतान करने, उससे कुछ सीखने या उसकी आज्ञा-पालन करने से इनकार कर दे। उन्होंने कांग्रेस को स्वतंत्रता की तथा स्वतंत्रता के लिए ठोस कार्रवाई की कामना करने वाले सभी वर्गों समेत सम्पूर्ण भारतीय जनता के राष्ट्रीय मोर्चे के मंच और संगठन के रूप में निर्मित किया।

उन्होंने जनता को संघर्ष के लिए उभारने या कभी उसकी गलत कार्रवाई (जैसे हिन्दू-मुस्लिम दंगों) का परिशोध करने या अपने अनुयायियों के भटकाव को रोकने के लिए कभी-कभी अपने जीवन तक को खतरे में डाल कर व्यक्तिगत उपवासों को अपने शस्त्रागार में एक नये अस्त्र के रूप में जोड़ा। उनकी जबर्दस्त क्रान्तिकारी प्रतिष्ठा और ईमानदारी के कारण यह व्यक्तिगत अस्त्र कारगर अवश्य होता था, हालांकि सदैव नहीं।

चम्पारन में अपने संघर्ष में, जो भारत में उनका प्रथम संघर्ष था, उन्होंने भारतीय किसान को तथा ब्रिटिश वागान मालिकों के उत्पीड़न को भी निकट से देखा। यहां उन्होंने नील की दीती करने वालों के आतंक और उर-दिवताफ़ इन रख अपना कर अपेटों की पीते हटने की बाध्य कर दिया। हुं-में तकाल बाद अहमदाबाद मिलों के हड़तालियों का नेट्राल करते हुए उन्होंने मनहरों को, सिखान करने, करट फ़्रेलने और समर्थ करने की उनकी धानता को तथा उन सत्यपितयों की सीद्युवता और स्वायंत्रप्रकाता की भी देखा बा जिनसे बह यह आधा करते थे कि की दस्य उनके और मनदुरों के करटों तथा "हिस्तरेखा" में देख कर यांत्र और नरम पड़ी।

हिन्तु अपने मुन्य सदय का अनुसरण करने के लिए उन्होंने अपने समयें के इन पहुनुवों का परित्यात कर दिया और अपने असहसीय संप्राम के ठीक पूर्व, प्रसिद्ध तेल "दोर ने अवान फहुराया" लिखा और बारदोत्ती सूच करते हुए इस संवाम को "बहुकाल का नृष्य" वहां ।

भीरी-भीरा के निरस्त्र किसानों पर गोती बताने वाते पर पुतिसमें नो की हत्या से महात्मा जी ने संतुतन को दिया और उन्होंने अपने "नहारात के मृत्य" को वापस ले किया तथा "तैर" यह वर्ष भी सजा के साथ विदिश्त कारणार में प्राणित हो गया। उन्होंने यह आयह किया कि वहां जनना का प्रतिरोग न्यायपूर्ण भीर सामीजेन तथा उत्सोहनहर्ता अन्यायपूर्ण और शवत हो, बहुं भी सामान्य की एक्टिंक का हनन अहिसा द्वारा ही किया जाना चाहिए।

ऐमे पहुत से सीण, जो उनके दर्जन के उत्तराधिकारी होने का दाना करते हैं और जिल्होंने सत्ता और धन ऑक्टन करने के लिए उनके नाम तथा उनके खताये गये महान संघर्षों नी प्रतिच्या का उपयोग किया है, तिकं उनकी ऑहमा का, मा विह्नाओं के प्रति उनकी नामी का, या ईस्वर, धमें और चरणे के प्रति उनकी निखा ना ही, राग अनायते हैं।

विन्तु यह बाद रसना बकरी है कि जहां महारमा गांधो ने बनता के उम्र कप अपना सेने के कारण १६२१ में अपना आन्योनन बाउम से निया था, बही १६३० और १६४२ के संपर्धों का सूत्रपत और नेतृत्व करते के बाद, विनके सालस्वस्य बनता आरत आजाद हुआ, उन्होंने यह गसती कभी नहीं देउसपी।

हम नवे बात में बब बभी बिटिश उत्तीहरों का नामना जनता के हायों वस या जुनारू प्रतिशोध से पड़ जाना और वे महात्मा की से बनता की भारता करने की बहुत, तो बहु अपने महिला के दर्शन का पानन करने हुए भी ऐसा करने से हमनार कर देने और ज-अनिशीय का रोच सीथे बिटिश शामक वर्ष की 'मिहतूब दिला" के माथे सह देने।

महारमा वी को कम्प-सताब्दी वर नारी उत्तीदित जनता को उनके जिम सतापारम मुन को अवस्व स्मरण रतना चाहिए, वह है माओक्सवाट के प्रति उनका तीव विरोध-भाष, जनता के संगठन और सकिय प्रतिरोध के प्रति उनका गत्रा लगाय, जो कुछ भी उत्योहनकारी, जयमानजनक और अमानवीय है उसके प्रति उनकी तीव पुणा। उनका कहना था कि बुराई का सिक्यता के साथ प्रतिरोध किया जाना चाहिए, न कि उसके मामने निष्किय होकर घुटने टेक दिये जाने चाहिए।

एक दूरदर्भी व्यक्ति की तरह उन्होंने माझाज्ययाद का प्रतिरोध करने तथा भारतीय जनता को विभाजित करने की उमकी चाल को विकल करने के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को भारत की राजनीतिक और सामाजिक एकता का मूल नारा बनाया।

एक महान मानवतावादी के रूप में उन्होंने अस्पृत्यता के उन्मूलन का आह्वान किया, हालांकि एक धर्मनिष्ट हिन्दू की तरह वह हिन्दू समाज के वर्ण विभाजन में विश्वास करते थे, जैसा कि हिन्दू मानवतावाद के अनेक संत उनसे पहले कर चुके थे और घोषक वर्णों और जातियों के हाथ प्रतारणा भेल चुके थे।

आरम्भ में हालांकि उन्होंने भारत को दस्तकारी और ग्राम्य जीवन के प्राचीन संसार में फिर से प्रतिष्ठित कर देने और आधुनिक मशीनों के संसार को मिटा देने का स्वप्न देखा था, पर शीघ्र ही उन्होंने बतीत में वापसी के विचार का परित्याग कर दिया तथा आधुनिक उद्योग-वंघों का निर्माण करने, उद्योगपितयों के लिए अच्छी विनिमय दर और सुरक्षा प्राप्त करने में भी मदद की—वशर्ते वे स्वायीनता प्राप्त करने में उनकी मदद करें।

जब वह जीवित थे और कांग्रेस का नेतृत्व कर रहे थे, उस समय भी कम्युनिस्टों, कांग्रेस सोशलिस्टों आदि जैसे अनेक लोग थे जो उनसे, उनके दर्शन से, उनके कुछ वर्ग गठवंधनों और उनके तरीकों से मतभेद रखते थे। तब भी वे सभी उस महान राष्ट्रीय मोर्चे में काम करते रहे, जिसका प्रतीक कांग्रेस थी और जिसको महात्मा जी ने मुख्यतः स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए जन संघर्ष और नेतृत्व के साधन के रूप में निर्मित किया था।

जैसे-जैसे संघर्ष के तरीकों और कार्यनीति के प्रश्नों पर मतभेद बढ़ते गये, उन दिनों के अनुदारपंथियों ने उन नयी चिंतन-घाराओं और नयी पार्टियों को कांग्रेस और आन्दोलन के भीतर बने रहने देने पर पाबंदी की मांग की।

किन्तु महात्मा गांघी ने ऐसे मतभेदों के आधार पर कांग्रेस में ऐसी पार्टियों या समूहों पर प्रतिरोध लगाने की मंजूरी देने से इनकार कर दिया। वह न केवल अनुदारपंथ से लड़े, बिल्क उन्होंने अपने अनुयािषयों में व्याप्त पद और सत्ता की लोलुपता से भी लोहा लिया और जहां कहीं उनमें भ्रष्टाचार दिखायी ।, उसका पर्दाफाश किया। महारता गांधी रूस के महान मानवताबादी, जनवादी और साम्राज्यवाद-विरोधी नेव तोत्स्तोय के प्रधांतक थे और इतसे प्रीरंत होकर उन्होंने १६०४ की मानित की रावर मुनने पर उनकी सफताता की कामना की। हालांकि वह बोत्सीवादी के अनीदवरणद की चतन्द नहीं करते थे, फिर भी उन्होंने उन सोगों का साथ नहीं दिया निन्होंने साम्राज्यवादियों के साथ पिन कर १६१७ की सहान प्रकारत कानित की निन्दा की थी।

महारमा मांधी के सतेक कार्यों और विचारों ने नवजान-विरोधी रूप जरूर महण कर लिया था, पर उसके बावदूर वह संतार के महानतम साम्राज्यबार-विरोधी योदाओं में ते थे, मानव जाति के हतिहास के महानतम सामवता-बादियों में में में, तथा, निस्था हो, स्वतंत्रता और स्वायीनता के लिए मारवीय वालिक के महानवम नेवाड़ों में तथे थे

इन्ही बानों से हमें उनके जन्म की पाताब्दी इस प्रकार मनाने के लिए प्रेरित होना माहिए, निससे उन सोचों को स्कृतिया पुनर्जीवित हो उठे जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए सड़वे हुए, नस्तवाद के सिलाक, अध्यानता और उन्होंडन के रिसाक, हुआदून, अन्त ना में विभाजन और पूट के सिलाक तथा व्यक्तिया और सावेंजीक जीवन की प्रदान के लिए जमने तए सपने प्राण गंवासे।

उन्होंने दिस अंगजू तरीके से राज्य सत्ता और यन के विकरात ब्यूह की जोसा की, जिस तरह बहु मानव को और लास तीर घर गरीकों की, दिदि-नारायण भीर उत्तरीहिंतों की गरिया के लिए तहे, उसे पुनर्नीतित करना अकरी है। वह मतसे वह कर यम के गीरव के समर्थक ये और इसी के अतीक के रूप में तर प्रति दिन सस कातते थे।

पान हमें सभी को स्वापीनता की विरामत को धीर आगे बढ़ाते हुए समाव-बाद के लिए सड़ना चाहिए बगीकि इसी से धनकुषेदों की सता का अंतिन निषेत्र होगा तथा उन नारों-नरोड़ों मेहनतकसों की सता की पुष्टि होगी जो स्वतंत्र मारत के गेतों और कारलानों में शरीर और मस्तिष्क के क्षम के आधार पर जीवन विना रहे हैं।

महारमा गाँधी का जन्म १-६६ में हुमा या जिस समय मारत के स्वाधी-नता संवास की प्रीक्तम पीछ हुट रही यो और धीरण पर वसा कास-जर्मन गुढ़ की नी प्रापा पढ़ने सभी थी, जिसके बाद साम्राज्यवाद पुण्ति-पस्तवित हुआ प्राणी दुम्मी संदर्भ सिंद्य की आकांत्र कर निक्क पर।

हिन्तु १६४५ में जब उनकी मृत्यु हुई, उस समय साझान्यवाद पीछे हुट रहा या, एक-निहार्स संसार समाजवारी बन चुका या तथा ओपनिवेसिक साझान्य वह रहे थे। उन्होंने भारत जैसे अस्यना महत्वपूर्ण भूतंड में साझाज्य-बाद-विरोधी पाति में महान भूतिका करा की और अन्त में एक दूपट हस्तारे में प्रमति भीर जनवारी कालि की दिला में भारत के भीर जामें के प्रयान की अवस्य मतने के सूचित पहुँचा में जनकी हत्या कर दी।

अन्तरत भरत के पूर्णक जहरा के अवका का गाउँ । । आहार, जनकी जन्म अनावजी के इम नवें में हम मक्ति करें कि महाता गांधी में जी मुद्द भी जनित्तजारी और जनवादी, धर्मातिशीन और एउटा है सूध में बाधने बादा, मान तेय जीर निष्टताये, विद्योहणूर्व और महत्त्वणूर्व गा, इते हम जामे बहुायेंगे।

गांधी जी और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी श्रीनवास सरदेसाई

महाराग गांधी और भारतीय कम्युनिस्टों के सम्बंध, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा प्रथम विश्व युद्ध के बाद असहयोग आदोलन के उनके नेतृत्व से लेकर १८४८ में उनकी दुखद मृत्यु तक, अनेक उतार-चढ़ावों से गुजरे हैं।

क भारतीय कम्युनिस्ट सद्ध का प्रयोग इससिए कर रहा हूँ कि, हालांकि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना १९२५ में हुई दी, स्थिर भी एम. एन. राय ने १६२० से ही गांधी की स्थाप उनके नेतृत्व भी स्वतने यांके आरातेल का कम्युनिस्ट भूत्यांकन करना और उस आन्दोलन के प्रति कम्युनिस्ट हॉटिकोण निर्धारित करना शुरू कर दिया था। औपाद अमृत कांगे ने मही कार्य १६२१-२२ से साह किया था।

यह कहना अधिक सही होगा कि यह प्रक्रिया १६२० में कम्युमिस्ट इंटर-में अपने ने शुरू की थी। उसी वर्ष आयोदिक कॉमिस्टर्न की हुसरी कांग्रेस में ओपनिवेदिक अस्त पर हुए विस्तार-दिसर्य में रात में सक्तिय भाग नित्या था। १६३५ में हुई उसको अंतिम कांग्रेस के सिया, और सभी में भारतीय कम्युमिस्ट, उचाहरणार्थ अवनी भुवनी, कॉमिस्टर्न के भारत संबंधी विचार-विमारी और निर्णोगों में मान कीरे रहे।

संबंधों के उलट-फेर को चर्चा हम आगे करेंगे। किन्तु अपर आरम्भ में ही कुछ मूल सच्य और मुद्दे कह दिये जाये तो वे बाद को बांतों को सममने में सहामक होंगे।

` `

: 9:

प्रयमतः, सारे उलड-फेरों के दौरान और उन उसड-फेरों के बावदूर हम कम्युनिस्टों में महासमा बायों के मुलकूत विचारखारातक सिद्धानतों के मु एक बारों बिलुप्या बनी रही। दस्तर नारण केवत यह नहीं वा कि उनमें मध्ययुगीनवा और रहस्यबादिता मौदूर यी, बल्कि यह भी कि स्वावहारिक राजनीति में छनदा अभे या गासाध्यवादी, गामग्री और भागनीय पूर्णीयही हिंदों के गाम अमेल्य समभौति दरना, जिसस देश में मान्त्रीय क्रांनिकारी मासियों के पूर्ण विदास में याचा यह से थी ।

इसी सरह, हालाकि माथों की की हैमान हारी के माथ यह अब देना पड़ेगा कि उन्होंने न तो परम्मिरही या परम्भिरह पार्टी के मिताफ यमनवारी करमी की कभी मांग की, और से ऐसे कपमी भी रामग्रीवार ठहराया। यास्तव में बहु भारतीय करमुनिरहों के प्रति यह हिटियोग अपनाते रहे कि ये समाजित किन्तु गुमराह बीजवान है। किर भी उनके प्रति हम सोग्री की प्रतिभूत निष्टुका पी उसके 'जनाव' में उनमें भी मानसेताद के प्रति, तमें मंगदे की अवनारण मान के प्रति और हमी कारण हम सोग्री के प्रति, तेमी ही निष्टुक्या ने घर कर जिया था।

दूसरे, सारे उत्तट-फेरो के दोरान और उन उत्तट-फेरो के यावजूद, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी कभी गायी जी और गायीवाद को उसके समस्टि रूप में ब्रह्म नहीं कर सकी । यह इस प्रकार की पकड़ से गदा यथ निकलते रहे और इस अर्थ में हमारी सारी आस्यस्तता के यायसूद यह हमारे लिए एक पहेली बने रहें।

आगिरकार राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आन्योलन में गांधी जी और उनकी भूनित को समभने के हमारे प्रयास का आधारभूत उद्देश्य यह था कि उनके नेतृत्व में चलने वाले जन-आन्दोलन के नाथ ऐसे संबंध स्थापित किये जायें जो उसके वैचारिक आवरण को फाड़ देने तथा गांधी जी के प्रभाव में आने वाले लायों लोगों को सच्चे क्रान्तिकारी संघर्ष की दिशा में बड़ा सकते में सहायक हों।

क्या हम ऐसा करने में सफल हो सके ? बहुत ही नाकाफी और आंशिक तौर पर ही। इसी अर्थ में—पूर्णंतर क्रान्तिकारी. ऐतिहासिक और वैज्ञानिक अर्थ में—यह स्वीकार करना जरूरी है कि हम गांधी जी के विचारों और नीतियों को समभने की जो कोशिशों करते रहे, यह उनसे बच निकलते रहे।

तीसरे, क्या इसका यह अर्थ है कि गांवी जी और उनकी भूमिका का हमारा मूल्यांकन 'सर्वथा गलत' था ? क्या इसका यह अर्थ है कि इतिहास की कसौटी पर वह आदि से अन्त तक सही सावित हुए, और हम गलत ?

इन सवालों का जवाव साफ साफ 'नहीं' में होगा। राष्ट्रीय आन्दोलन के गांधी जी के निर्विवाद नेतृत्व के संपूर्ण काल में हमारी यही दलील रही है कि गांधी जी की ईमानदारी और उनके विश्वासों के वावजूद वह और उनका नेतृत्व सारतः और अंतिम विश्लेषण में राष्ट्रीय पूंजीवादी नेतृत्व था। अनुभव से और गांधी जी के नेतृत्व में हासिल की गयी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के चिरत्र से, अर्थात स्वतंत्र भारत की राज्यसत्ता के वर्ग चिरत्र से, इस दलील की पूर्ण पुष्टि हो चुकी है।

यही नहीं। हम उस समूचे काल में यह बलीस भी देते रहे कि हमारे देश में राष्ट्रीय-जनवादी जानित की सफत चरम परिणति के लिए यह जरूरी है कि मारतीय मजदूर वने एक स्वरान कर्म डाक्त के रूप में लिलात हो और उस्तान साविभाव राष्ट्रीय क्यांनि के नेता, नायक, के रूप में हो। यह दसील भी सही साविश्व हुई है, हालांकि चढ़िक्समती से नकारायक रूप में, अर्थात हमारे स्वातंत्र्य बाल्योजन में जिस सबेहारा नेतृत्व का निर्माण करने की आवश्यकता भी, उसमें हमारी असफतता के कारण हमें ऐसी स्वतंत्रता प्राप्त हुई जिसका मित्र पूंजीवादी या और जो साझाज्यवादी तथा भारतीय सामंती हितों के साथ जनेक सम्मोतीं पर दिकते हुई जी

गांची जो और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के बीच आदि से अन्त तक मतभेद की जड़ गही ची-और दोनों ही इसके प्रति गहराई से और समान इच से सचेत थे-कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी राष्ट्रीय पूंजीवादी नेतृत्व को राष्ट्रीय आन्त्रोक्त में नेतृत्वकारी स्थित से अपस्थक मत्रे और उसके स्थान पर मजदूर वर्ग का नेतृत्व स्थापित करने के निरा आयोगान समर्परत रही, साकि सवीसीण और सफल राष्ट्रीय-जनवादी क्यांनि संगन्न हो सके।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की तलती यह नहीं थी कि उसने अपने और राष्ट्रीय आव्दीलन के समझ यह लड़ब रखा। उसकी यनती यह नहीं थी कि उसने इस लड़ब की बयायं में उतारने के लिए संबर्ध किया—और बहु भी, उसके सबस्य इस लड़ब के लिए जितना उससाँ बिजा सकते से और जितना उससाँ कर सकते थे उतने सारे उससाई और उससाँ के साथ किया।

अगर यह प्रयास ही गलतं या तो इस बात की सकाई दे सकता असंगत है कि भारतीय कन्युसिक्ट पार्टी देश के स्वतंत्र होने तक मारतीय राजनीति में यह कर कैंसे : इतनी यनतंदार ताहत वन गयी, क्योंकि सर्वया जला-अलग कारणों से ही सही, आदि से अल तक विदिश्य धारतमें और गांधी औ से भी उसका संग्ये ही बना रहा। अगर राष्ट्रीय आत्योजन में गांधी औ की तालां वर्णने वाजित्व की हुमारी तमकदारी दुनियारी तौर पर गलत की तो भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, भारतीय मजदूर वर्ष की तथा भारतीय हिकामों के बड़े दिसों क्यांति प्रामासाली नेता नहीं वन गयी होती और भारत के काल्तिकारी युवा वर्ष का बेस्टतम दिसा हुमारी पार्टी में न बाया होता।

यनती यह वो कि अपने दाबित्व को भारतीय कम्मुनिस्ट पार्टी को समभ्रमारी अपरित्यन, एकांगी और अंतिमत्त्रीकृत थी; यानती यह वो कि इतिहास ने उस पर को स्वीमत्त्र बाला था, उसकी व्यक्तिताओं को समभ्रम में यह असकत रही। और, इसी में इस बात का वर्ष और व्याच्या निहिन्त है कि गोंभी जो बंगों भारतीय कम्मुनिस्ट यांटी के लिए एक पहेली बिद्ध हुए। माह निरम इन मही है कि काकि के रूप में और मंत्री की मृत आहे कि स्थानित के हिन है कि मानित के कि स्थानित की मृत्य आहे में मिल के स्थानित की होती नाहिए कि माथि में में भूमित को पूर्व नहीं होती नाहिए कि माथि में में भूमित को पूर्व निर्माण मानित में को भूमित की मुख्य भारतीय मृत्रीयित को को भूमित की मुख्य नहीं मुख्य नहीं मुख्य करते ए या नहीं मानित में मुख्य स्थानित में स्थानित की मुख्य करते ए या नहीं मानित में मुख्य स्थानित में स्थानित की मुख्य करते ए या नहीं मानित में मुख्य स्थानित में स्थानित में

उम तथा में इस मलते भी मुनत जोग वह जाते है कि मेनिट है इतियों ने, तथा ११२० में हुई कर्तिवन्दने की इसमें कर्तिय में प्रमृति सिंग क उनके मुप्रतिय राष्ट्रीय तथा ओपनिवेदिक्स प्रश्नों पर प्रमणानाओं के आर्थि मस्यिये ने, एशिया में शब्दीय पृजीपति नमें के उनके आक्षण है और तथा उस सीध के बारे में भी मोद्रों के निए कोई अध्याद नकी सीहें है जिसका कम्युनिस्टों हो एशियाई देशों में पृजीपादी नेवाओं के नेवृत्त में इ रहे राष्ट्रीय स्वासम्य आस्थानन के प्रति अनुस्था करना चाहिए।

मई १६१३ में लिंग गंग विद्युत्त मोरप ओर समुन्नत एतिमा शि प्रसिद्ध लेग में लेनिन ने प्रतिक्रिया के पक्ष में चुने गंग गोर्गीय पूंजीपति की भूमिका तथा एशियायी पूजीपति वमें की भूमिका में अगमानता प्रस्तुत थी। उन्होंने कहा था: "एशिया में हर कही एक जबर्दस्त आन्दोलन बड़ें है, फैल रहा है और सदाक्त हो रहा है। वहां अभी भी पूंजीपति वमें प्रतिहि के खिलाफ जनता का पक्ष ले रहा है। अर्गों लोगों में जीयन, आलोक र स्वतंत्रता की जागृति फैल रही है।" (जोर मूल में—शी.स-)।

लेनिन द्वारा तिलक और सन यात-सन को अपित की गयी श्रद्धांजि सुविख्यात हैं। उनकी अन्य कृतियों से ऐसे अनेक प्रसंग उद्धृत किये जा स हैं जो स्पष्टतः प्रमाणित कर देते हैं कि उनका यह मूल्यांकन कतई नैिर्मा या अल्पकालिक नहीं था। और रूसी कान्ति के बाद भी वह इसी भावन अन्तर्गत लिखते रहे।

सबसे स्पष्ट प्रमाण तो निश्चय ही १६२० में कॉमिन्टर्न की दूसरी कों में उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्नों पर प्रस् पनाओं का आरंभिक मसविदा है।

उसमें उन पिछड़े राज्यों और राष्ट्रों के संदर्भ में, जहां सामंती या पितृ-सत्तात्मक या पितृसत्तात्मक-कृषक संबंध प्रवल थे, लेनिन ने कहा है: "इस बात को स्मरण रखना खास तौर पर महत्वपूर्ण है: पहला: इन देशों में सारी कम्युनिस्ट पार्टियों को पूंजीवादी-जनवादी मुक्ति आन्दोलन में अवश्य सहायक बनना चाहिए...।" क्या इसका यह अर्थ है कि लेनिन को राष्ट्रीय पूनीपति वर्ग के बारे में कोई भाग था, कि वह पराधीन देशों के बच्दुनिस्टों को यह सलाह दें। 'रहे पे कि वे पूंजीबादी-जनवादी स्वातंत्र्य आन्दोतनों में विगीन हो जायें और 'अपनी पद्भाग सुप्त नर दें?' तिनिक भी नहीं! क्योंकि उन्हीं प्रस्वापनाओं में निन्नीनिभेत अनुष्युद्ध भी हैं:

"पायवां: पिछा देनों में पूंतीयारी-जनवादी श्रीक की धाराओं की कम्युनितर रंग देने ही कोशियां के विकास हत्यंकरण समर्थ की आन्द्र स्थान : कम्युनितर रंग्टरनेशनन को अधिनदिशित और सिछा दे अध्यान प्रमुख्य रंग्टरनेशनन को अधिनदिशित और सिछा दे अध्यान प्रमुख्य निर्माण कार्यानों की मान इस ग्रंत पर समर्थन देना पार्टित कि तर देवों में जन भागी सबझार वादियों के तत्वों की, धो नाम मान में कम्युनितर नहीं होंगी, समुक्त किया जाता है और अपने विवास वादियों को—स्वास अपने राष्ट्रों के भीतर पूजीयारी-जनवादी आन्दोक्तों के विस्तान संपर्ध के स्वाधित्यों को—समने अपने पार्ट्रों के भीतर पूजीयारी-जनवादी आन्दोक्तों के विस्तान संपर्ध के स्वाधित्य को—समने को प्रतिश्वक दिवा जाता है। कम्युनितर इंटरनेशनत को धोर्यनिविधिक और पिछा है दोंगे प्रश्लीवरी-जनवाद के गाय अत्याधों में भी स्थापित करनी चाहिए किन्तु उनमें विज्ञीन नहीं होना पाहिए, तथा चाहे सर्वहारा आन्दोनन सर्वमा भून अवस्था में ही ब्यों न ही, उसकी स्वाधीनता की हर हालत में रसा करनी चाहिए।

इसलिए इस बात का सवाल ही नहीं उठता कि सेनिन ने राष्ट्रीय पूत्री-पति वर्ष का अतिराजित मुखांक्न किया गा, उसकी सममीजीपपरस प्रकृतियों से लड़ने, स्वतंत्र, कम्युनिस्ट, सर्वहारा पाहियों का संगठन करने, सजहर किसान अल्डोबन निर्मात करने आदि के दाविष्यों को पटा कर आका था।

वेनिन ने राष्ट्रीय पूंत्रीयित बसे की भूमिका के इन दोनों पहलुओं को यथार्थ, इतिहास-नियारित पहलू माना। उन्होंने बिस्ती भी एक पहलू को विदाद रूप में, अथवा ध्यावहारिक नीति के मामलों में, अस्वीकार नहीं किया।

इसी कारण एक ही प्रस्थापना में उन्होंने "पूत्रीवादी-जनवादी मुक्ति आयोतन के सहायक होने" के कम्युनिस्ट पार्टियों के (अनिवाय) कर्सव्य की तथा "पिछड़े देशों में पूंजीयादी-जनवादी मुक्ति की पाराओं की कम्मुनिस्ट रंग देने की कोविशों के लिखाक कृतमंकला संगर्ग की आवश्यकता" की चर्चा की । इसी कारण उन्होंने "औपनियेशिक और पिछड़े देशों में पूंजीवादी-जनवाद के माय अस्त्रामी मैदी करने", पर "उसमें विलीन न हीने" की चर्चा की ।

इस बात को भी स्पष्ट कर देना जरूरी है कि लेनिन ने यह कहीं नहीं कहा है कि पिछड़े और पराचीन देशों में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की यह दुहरी भूमिका राष्ट्रीय जनवादी फांति के पूर्ण होने तक बनी रहेगी।

पूंजीवादी नेतृत्व पर राष्ट्रीय जनवादी क्रान्ति के हावी हो जाने के तात्कालिक, उत्कट और भयावह "ज़तरे" का सामना आ पड़ने पर (यह खतरा संबद्ध देश में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सर्वती पुत्ती मजदूर-किसान मोर्चे के निर्मित होने के साथ पैदा हो जाता है) राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग मुख्यतः प्रतिकांति के पक्ष में चला जाता है।

जिन्तु यह भी समानतः सही है कि लेनिन राष्ट्रीय पूंजीवादी नेतृत्व और साम्राज्यवाद के बीच हर समभौते को उक्त नेतृत्व के प्रतिकान्ति के पक्ष में चले जाने का पर्याय मानने की जल्दी में नहीं थे। वह ऐसे हर समभौते को राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग की विरोध-पक्षीय, साम्राज्यवाद-विरोधी भूमिका की समाप्ति कह कर लांछित करने की जल्दी में नहीं थे। वह हर समभौते को राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग द्वारा अंतिम गहारी और आत्मसमर्पण करार देने की जल्दी में नहीं थे।

भारत पर, तथा हमारे देश के प्रथम विश्व युद्ध के वाद के जन-उभार पर, लागू करने पर लेनिन के इस विश्लेपण और मूल्यांकन का क्या अर्थ था ?

मुक्ते ऐसा कोई प्रसंग देखने को नहीं मिलता है जिसमें लेनिन ने महात्मा गांवी या उनके नेतृत्व में चलने वाले आंदोलन का प्रत्यक्ष उल्लेख किया हो। किन्तु यह सावित करने के लिए पर्याप्त से भी अधिक साक्ष्य हैं (जिन्हें मैंने अपनी पुस्तिका भारत और रूसी क्रान्ति में प्रस्तुत किया है) कि वह यह चाहते थे कि नये-नये भारतीय कम्युनिस्ट गांघी जी और उनके नेतृत्व में चलने वाले आन्दोलन के प्रति सकारात्मक हिंद से आलोचनात्मक रवैया अख्तियार करें।

एम. एन. राय के संस्मरणों से यह तथ्य अत्यंत स्पष्ट रूप में सामने आ जाता है—हालांकि राय, जैसा कि सुविदित है, कॉमिन्टर्न की दूसरी कांग्रेस में 'वामपंथ' की ओर अत्यविक उन्मुख थे। इसके अलावा भी बहुत-सा अन्य साक्ष्य है।

र '
मेरे विचार से लेनिन, गांघी जी और उनकी भूमिका के वारे में आननफानन 'प्रस्थापनाएं' पेश कर देने को जो तैयार नहीं थे, उसका कारण यह था
कि वह गांधी जी और उनकी नीतियों के जिंदल और दुहरे स्वरूप के प्रति गह-

राई ने सबेत थे। साझाज्यवादी शक्तियों को पूर्ण पेरावंदी में जबड़े रुस में विधाद और जटिल मारतीय समस्या की विशिष्टताओं के बारे में जितनी तथ्यात्यक मूचना सुत्रम थी, लेनिन उमसे नहीं और अधिक गुबना चाहते थे। यह इम बात के प्रति सबेन थे कि अपन ब्रुटावाबेचन में एक इकड़िये प्रस्तापना पंता कर देंगे तो इससे सत्तरा है कि अंदुरित हो रहे मारतीय मानिकारी या हो संगीचेतावादी या मुपारबादी दिशाओं में मटक जायेंगे।

और जब लेनिन ने देशा कि दूनरी कांग्रेस में मौदूर सबसे विश्वत कन्यु-निस्ट एम. एन. राव गांधो जो की पुराणांधी सामाजिक विवारभारा पर गया ग्राह कर, गोर मवा कर, गांधी जी के नेतृद्ध में चतने वाने जन-आन्दोक्षन के प्रति संप्रीणंतावारी ट्रिट होच की दिशा में भटक रहे हैं, तब उन्हें फिड़क कर उन्होंने यह नहां कि भाष गांधी जी के सामाजिक दर्शन के ज्यादा, गांधीवादी नेतृत्व में बनाम को आप से जाने के बारे में शीचए।

: 3:

प्रवंगांतर का कुछ जोतिय लेकर भी वहा यह सवाल उठा देता जरूरी है कि विश्व है देवों में उत्पोदन और तोवण के बिताफ जन-विरोध के उभार तथा विरोध की दन भावताओं की अभिक्यांकि के सामान्य वैधारिक रूपों के बीच मंदी की वास्या का त्रीजन ने कैंगे जिल्ला किया है।

मैं तो पीछे मुद्द कर एगेला के जमेंनी में किसान युद्ध तक वढ़ जाना चाहुंगा, जिसमें इस बात की जनतंत ब्याल्या की गयी है कि योरत में कैसे और क्यों मध्युमीन किसान विद्रोह धार्मिक आवरण में तथा वाह्यिक के मूल पाठ की मुलत: फिन्ट ब्याल्या करते हुए कूट पड़े थे। ऐसा ही कुछ भारत के कुछ मतों में तैरुवी और अटाउड़ी सरियों में हुआ था।

पंनिन ने कैसे और वयों तोक्तोय को कसी क्रान्ति का दर्गण कहा? दरअसल अपने मुम्बिद्ध लेख के प्रथम बावन में ही सीमन ने सवाज उठाया है अपेर जवाब का संकेत किया है: "यदि इस महान कलाकार का उस क्रानित के साथ बारावर स्थापित किया जाता है जिसे नह प्रकटत: नहीं समझते और जिससे यह प्रकटत: दूर यो, तो पहली नजर में यह अनुवा और बनावटो अतीत हो सकता है। ऐसे दर्गण को मुक्तित हो हो दर्गण पुठारा जा सकता है जो बीजों को टीक क्रिकेट अतिविधित्यत न करता हो। किन्तु हमारी क्रानित अत्वंत लिटन प्रोत हो

इसके बाद लेनिन ने तोल्स्तोय के अंतिवरोधों का चरित्र अंकित किया है। इनमें से एक का उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया है: "एक ओर सौम्यतम वधारीनाः, सारे मृत्यीत्रं का छिन्न-भिन्न कर दिया जाना; दूसरी और, घरती की एक मध्य निस्देनीय भीज अर्थात पर्म का उपदेश ।..."

सामे विनय हम अन्यविरोधीं की व्याप्या करते हैं:

एक्ति नोल्स्कीय के विनारों और मिद्रान्तों के अंतर्विरोध आकस्मिक नतीं हैं; ने जन्नीसयीं शताब्दी के लंतिम नृतीयांश के रूसी जीवन की अंगितरोगी परिस्थितियों को अभिव्यक्त करते हैं ।...तोल्स्तोय के विचारों के अंतिवरीयों का मूल्यांकन आज के मजदूर वर्ग आंदोलन और आज के समाजवाद के ट्रिटिकोण से नहीं (ऐसे मूल्यांकन की वस्तुतः जरूरत है, पर वह काफी नहीं है), बहिक आगे बढ़ते हुए पूंजीवाद के खिलाफ, उस हा । र विनिष्ट किये जाने के खिलाफ जिसे उसकी जमीन से वंचित कर दिया जा रहा है, विरोध की अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए—विरोध का ऐसा स्वर जिसे पितृसत्तात्मक रूसी ग्रामांचल से उभरना पड़ा।"

"तोल्स्तोय उन विचारों और भावनाओं के महान प्रवक्ता हैं जो रूसी और आगे: किसानों में उस समय आविभूत हुए थे जब रूस में पूंजीवादी क्रान्ति समीप अ रही थी। तोल्स्तोय मीलिक हैं, क्योंकि समिष्ट रूप में उनके संपूर्ण जा पट्टा ना कि कि कि में हमारी क्रान्ति के विशिष्ट पह-विचार कृषक पूंजीवादी क्रान्ति के रूप में हमारी क्रान्ति के विशिष्ट पह-विचार अपन पूजा करते हैं। इस दृष्टिकोण से तोल्स्तोय के विचारों के लुओं को अभिव्यक्त करते हैं। इस दृष्टिकोण से तोल्स्तोय के विचारों के लुला का जानुज्यात कर्जा विरोधपूर्ण परिस्थितियों के दर्पण हैं जिनके अंतर्विरोध सचमुच उन अंतर्विरोधपूर्ण परिस्थितियों के दर्पण हैं जिनके अतापराच भाग को हमारी क्रान्ति में अपनी ऐतिहासिक भूमिका अदा करनी पड़ी ।...निस्संदेह, तोल्स्तोय की रचनाओं का संदेश अमूर्त 'ईसाई अराजकतावाद' की अपेक्षा, जैसा कि उनके विचारों की 'प्रणाली' को कभी-कभी मूल्यांकित किया जाता है, इस किसान सिक्रयता के अधिव

ल्प ए। "दूसरी ओर, नयी जीवन-पद्धति की दिशा में कियाशील किसान व अनुरूप है।" के पास इस ब्रात की अत्यंत अपरिष्कृत, पितृसत्तात्मक, अर्घ-धार्मिक क पात रा पात जीवन किस प्रकार का होना चाहिए, किस संघर्ष द्वाः चारणा थी कि यह जीवन किस प्रकार का निकार के भारणा आ गा ति ति सकती है, इस संघर्ष में कौन उसके नेता वन सक फेंका जाना क्यों जरूरी है।"

और इसके वाद लेनिन कहते हैं कि "तोल्स्तोय के विचारों" के "ज्वल

शंतिवरोध" "हमारी कान्ति की", किसान विद्रोह की, "खामियों और कम-जीरियों की" परिलक्षित करते हैं।

यहां हुम देखते हैं कि फिल प्रकार लेनिन तोल्स्तोय के विचारों के प्रति-किसाबारी स्वरूप के प्रति, जो "समिद्ध रूप में हानिकर" है, तेरा मात्र रियायत किये बिना उनकी ऐतिहासिक अन्तर्वस्तु और उनकी अवधारणात्मक अन्तर्वस्तु के बीच अन्तर को भी जदमायित कर देते हैं।

गांधी जी कई हरिटवों से तोल्लोगवारी थे। वस्तुतः यह तोल्लोग की जपना गृह मानते थे। पर एक महत्वपूर्ण वर्ष में होनों में व्रात्मिक व्यन्तर मा। सील्लोव कभी वानतीतिक जननेता नहीं रहे, न कभी वानते की निर्मास की। गांधी वी व्यन्ते सारे पार्मिक, रहत्यवादी, आध्यारियक, "देश्वर ही मेम है और प्रेम ही देखर हैं" के कवाड़ के यावजूद, अन्तरताम तक एक राजनीतिक जन-नेता थे।

भीर जगर लितन ने जन सोलस्तीय के विचारों की ऐतिहासिक और अव-पारणात्मक अवर्तस्तु के बीच भेर करना हतना जरूरी समझा, जो "अन्दर्तः ऋतित से अवना-पत्ता राहे थें", अवार नितन ने होतस्तीय के बत्तरियों की व्याख्या "एक प्रतिक्रियावादी, विकाने-कुरही वार्ते बनाने वाले, जमींदार के वैचा-रिक वितंदा के रूप में मही, बरिक हमारी कालि की लागियों और समझीरियों अतिहत्त के रूप में "रूरना सही माना, तो हमारे नित्य उत्तमें भी कहीं प्यादा जरूरी था कि हम गांधी जी और उनते अन्तिविरोगों को समझने का प्रवास कर क्योंकि हमें तो एक ऐसे स्थिति से निवटना था जो संघर्ष से दूर नहीं था, बहिक उनमें आकंड हमा हुआ था? और तोलसोग की ही मानि गांधों जो के विचार और कार्य के किस्त में नी सहा विद्यान हो प्रतिक्टित पर न

इसके सताबा, हमारी त्रान्ति भी तत्वतः एक कृपक राष्ट्रीय-जनवादी त्रान्ति यो और वास्तव में शाल भी है।

शन्ति को ओर बास्तव में आज भी है। हम एक और मिसान सें—चीन में जनवाद और नरोदवाद (सोकाधिकार-

बाद) के बीच सर्व्य की मिसात । विवारपारा भी हरिट ने का सन यान-मेन और गांवी जो के बीच तुनना की बोदें गुंजादस नहीं हैं। बैसा कि विदिन है, सन यान-मेन का बैचारिक हरिटोंगेन एक बंगड़, आपनिक जनवारी का हरिटोंगेन था।

स्वयं लेनिन ने सन बाउनेन का वर्णन "जगद और विजयो थोनो जनवाद का बहु प्रवृद्ध प्रवृद्धा" कह कर किया था (१४ जुनाई १६१२ को नेसकावर क्षेत्रका में प्रकृतिक "बीन में जनकाद और नरोदकार" धोवंक सेल मे)।

बहरहाल, सब्द यह है कि मन चार-नेन ने जंगह जनवाद की विनारधारा का अपने 'ममाजनादी' स्वप्तों के माप, इन आधाओं के साप समन्तर दिया कि चीन मूलगामी कृषि सुधार के आधार पर विकास के पूंजीबादी पथ से बच सकता है । रूसी नरोदवादी इसी सिद्धान्त का उपदेश देते थे ।

डा. सन यात-सेन द्वारा प्रकाशित कार्यक्रम पर लेनिन की टिप्पणी अत्यंत महत्वपूर्ण है:

"मनवाद के दृष्टिकोण में यह सिद्धान्त एक निम्न-पूंजीवादी 'समाज-वादी' प्रतिशियावादी का सिद्धान्त है। कारण यह कि यह विचार सर्वेषा प्रतिश्चियावादी है कि चीन में पृजीवाद को 'रोका' जा सकता है और वहाँ, देश के पिछड़ेपन के कारण, 'सामाजिक क्रान्ति' ज्यादा आसान हो जायेगी, आदि।'' (बहो)।

इसके बाद लेनिन इस बात की व्याख्या करते हैं कि कैसे एशिया की परिस्थितियों में यह अन्तर्विरोध समका जा सकता है, कैसे ऐसी परिस्थितियों में जंगजू जनवाद नरोदवादी विचारों का पोषण करते हुए भी आगे वढ़ सका।

प्रश्न वस्तुतः यह नहीं है कि किसी पिछड़े, पराधीन देश के राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आन्दोलन में उन प्रतिक्रियावादी विचारधाराओं की आलोचना नहीं की जानी चाहिए या उनका पर्दाकाश नहीं किया जाना चाहिए, जिनके कि नीचे वह आन्दोलन विकसित हो रहा हो। उनसे पहुंचने वाली हानि का पर्दाकाश करना जरूरी है क्योंकि वे ऐसे आन्दोलनों के पूर्ण क्रान्तिकारी विकास को पंगु बना देती हैं और उसे जीखिम तक में डाल देती हैं।

किन्तु आलोचना को ऐतिहासिक होना चाहिए, अर्थात ऐसी विचारवाराओं की आलोचना करते समय उनकी प्रेरणा से विकसित होने वाले वास्तविक, साम्राज्यवाद-विरोधी, और प्रायः ही सामन्तवाद-विरोधी, जन-आन्दोलनों पर भी विचार अवश्य करना चाहिए—वह भी उनकी सराहना करते हुए। ऐसी विचारवाराओं की अवधारणात्मक और ऐतिहासिक अन्तवंस्तु के वीच घालमेल नहीं किया जा सकता, किया भी नहीं जाना चाहिए; उन्हें समतुल्य नहीं माना जा सकता है, माना भी नहीं जाना चाहिए। कारण यह कि ऐसे समीकरण पर आधारित आलोचना अनैतिहासिक और यांत्रिक होती है तथा विचाराधीन जन-आन्दोलन के प्रति संकीणंतावादी इष्टिकोण की दिशा में ले जाती है।

: 8 :

यह काफी स्वाभाविक था कि गांधी जी और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के संवंध भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग की भूमिका के मूल्यांकन के साथ, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा देश में स्वयं को और मजदूर-किसान आन्दोलन को, एक स्वतंत्र शक्ति के रूप में निर्मित करने की

कीपियों के साथ, तथा भारतीय राष्ट्रीय संविध और उसके नेहुत्व में बचने वाले जन-आन्दोलन के अबि उसके (भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के) इच्छिकीण के साथ, पुंचे हुए ये। ये सभी प्रस्त एक-दूसरे से मिनक रूप से जुड़े हुए ये और इसी रूप में हुमें इनकी विजेषना करती होगी।

यह समस्या इतिहास के भंग पर उस प्रचंड जन-उमार के समय आयी जिसने १९१० और १९२२ के बीच संपूर्ण देश की हिला दिया था।

मैं पहले ही यह स्पष्ट कर बुका हूँ कि १६२० में आयोजित कॉमिन्टनें की इसरी कांग्रेस में संबद्ध सवालों पर लेनिन का क्या इण्टिकोण था।

बीस वर्ष से अधिक समय बाद लिखे गये अपने संस्मरणों में राम ने दूसरी कांग्रेस में क्षेत्रिन से हुए अपने मतभेदों का इन शब्दों में बर्णन किया है:

"सेनिन ने वह दतीन दी कि साम्राज्यवाद ने जीपनिवेदात देशों को सामंती सामानिक परिस्थितियों में रोक रखा है, जिससे पूंजीवाद के दिकास में वाया पढ़ती है और राष्ट्रीय पूंजीवित वर्ग की महत्यकांत्रा विफल होती है। ऐतिहासिक होट से राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोतन का वही महत्व या जो पूंजीवादी-जनवादी कान्ति का होता है... इसिए कम्युनिस्टों को पाहिए कि वे पाष्ट्रीय पूंजीवित वर्ग को एक बस्तुमत तौर पर क्रानिक स्वार्थित माने हुए, उसके नेतृत्व में चतने वाले ओपनिवेदाक मुक्ति आन्दोतन की सहस्वता करें...

"सांधी जी की भूमिक मतभेद का ताजुक पुरा थी। तेनिन का विस्तास या कि एक जन-आन्दोलन के प्रेरक और नेता होने के ताते वह (गांधी) एक कातिकारी थे। मैं यह कहता रहा कि वह राजनीतिक होन्ट से क्तिने सी कार्तिकारी के गाँव प्रतित हों, पर एक पासिक और सांस्कृतिक पुनक्ष्यानवादी होने के नाँते सामाजिक होन्ट से उनका प्रतिक्रियावादी होता कार्यिको था।"

राय ने इस प्रस्त पर तेनित के हरिटकोण के एक महत्वपूर्ण पहलू का उत्तेख नहीं किया है और बढ़ पह कि यहां लेनित निरक्य ही यह आहते ये कि स्थित हुए देवों में कम्युनित्तर लोग एंजीयां-अनवारी सामानीत्त का समर्थन करें, यहाँ उन्होंने इस बात पर भी कम जोर नहीं दिया है कि साय-साथ उन्हें एक स्वाद अपनुस्तिकाल आन्दोत्तन उपा एक सचतुन्य सर्वहारा, कम्युनित एसों का भी निर्माण करना चाहिए।

यही नहीं; नेनिन हालांकि यह निरुचय ही मानते ये कि उत्पोदित एशियाई देशों में, जिनमें मारत भी शामित था, राष्ट्रीय पूंडीपति वर्ग साम्रा-व्यवाद और प्रतिक्रियाबाद की शक्तियों के सिलाफ वनता के पक्ष में सहा है, फिर भी इसका कोई मौलिक साध्य नहीं है कि विभिन्न एशियाई देशों के राष्ट्रीय पंजीपतियों के बीच के परिमाण की दृष्टि से यह कितना अंतर करते थे।

बहरहाल, राय का लेनिन से जिस मुख्य मुद्दे पर मतभेद था, वह कार के **उद्धरण में स्पष्ट हो गया है । राय महारमा गायी की समाजिक हुट्टि से कड़िन** वादी विचारमारा से अति-प्रस्त में जबकि सैनिम, जैसा कि पूर्ववर्सी संड में स्पष्ट किया गया है, गांधी जी के बैनारिक इंटिकोण की अववारणात्मक अंतर्यस्तु और ऐतिहासिक भूमिका के बीच अवस्य गम्भीर अंतर मानते होंगे।

असहयोग आन्दोलन के वापस ने निये जाने के बाद १६२२ में निसी गयी आपटरमैय ऑफ नॉन-कोआपरेशन और इंडिया इन ट्रांजिशन नामक अपनी पुस्तकों में राय ने गांधी जी पर और भी कट प्रहार किये। इंटिमा इन ट्रांजिशन में उन्होंने गांधी जी को "प्रतिक्रिया की शक्तियों का उग्रतम और सबसे असाध्य मूर्त रूप" कहा । (पृष्ट २०५)।

चौरी-चौरा कांट के बाद गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन स्यगित कर दिया था । इससे जनके हजारों सिक्रय अनुयायी और कार्यकर्ता जन पर कुपित थे-और उचित ही कुपित थे। जवाहरलाल और उनके पिता मोतीलाल नेहरू तक ने आन्दोलन की वापसी पर जेल से अपना विरोध व्यक्त किया। और आन्दोलन का स्यगित किया जाना, निस्संदेह, उनकी उन दार्शनिक अववारणाओं का नतीजा था जिन्होंने जनता को संघर्ष के लिए उभारने में गांधी जी की सहायता तो की, किन्तु जिन्होंने अपने समभौतापरस्त, वर्ग-सहयोगवादी चरित्र के कारण पंजीपतियों के वर्ग हितों का अतिक्रमण करने से उन्हें रोका भी।

वहरहाल, गलत तो इस तरह के अतिव्याप्त निष्कर्प निकालना था कि गांघी जी ने साम्राज्यवाद के सामने सर्वया आत्मसमपंण कर दिया था, प्रति-कान्ति के पक्ष में चले गये थे, आदि। और, राय की रचनाओं का यही मूल स्वर था. जो वाद के इतिहास ने गलत सिद्ध कर दिया।

राय के साथ न्याय करने के लिए इतना तो कहना ही होगा कि उन्होंने इस प्रकार का कोई निष्कर्ष नहीं निकाला कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्वतः प्रतिक्रान्तिकारी संगठन था या उसके नेतृत्व में चलने वाला संपूर्ण जन-आन्दोलन प्रतिकियावादी शक्ति के रूप में निन्दनीय था।

राय ने १६२० में ताशकंद में कुछ भारतीय प्रवासियों के साथ मिल कर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी कायम करने की कोशिश की थी और उसके नाम पर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को एक अपील जारी की थी जो १६२१ में अहमदावाद में हुए अधिवेशन को सम्वोधित थी। अपील में कहा गया था:

"अगर कांग्रेस उस क्रान्ति का नेतृत्व करना चाहती है जो भारत की जड़ों

की हिला रही है, जो उसे मात्र प्रदर्शनों और जोश-करोता पर मरोसा करना स्टेड देना चाहिए। उसे ट्रेट गूनियनों की मांगों को अपनी मांगें बनाय जाहिए; उसे हमात्र कमाओं की मांगों को अपना कार्यक्रम बनाया चाहिए; वह समय चीप्र ही आयेगा जब कांग्रेस किसी भी अवरोध के सामने नहीं रुकेगी; और अपने हिलों के लिए सबेद रूप से सहने वाली संपूर्ण जनता अदम्य सांकि से साम उसका समर्थन करीगी।

साल भर बाद कावेस के गया अधिवेशन के लिए भी इसी प्रकार की एक अपील जारी की गयी थी। उसमें कामेत के लिए एक कार्यक्रम पेश किया गया यह जिसमें निम्नलिखन बार्ते शामिल थी:

"पूर्ण राष्ट्रीय स्वाधीनता, सार्विनक मताधिकार, जमीदारी का जन्मूलन, स्रोकोरयोगी सेवाओं का राष्ट्रीयकरण, मजदूरों को संगठन का पूर्ण अधिकार, सभी वर्धोगों में "यूनतम बैतन, आठ पंटी का कार्य-दिवस, गुनाफे में हिस्सा, नि-गुल्क और अनिवाधी विभाग, राष्ट्रीय स्वतंत्रता की रक्षार्थ संपूर्ण जनता को हथियारवंद करना "

ये दोनों बपोलें न सिर्फ राजनीतिक हृष्टि से बल्जि काग्रेस और उसके नेतरव में चलने वाले जन-जान्दीतन के कार्यनीतिक मजरिये से भी ठीक थी।

हांगे ने जिस समय १६२१ में पांची बनाम लेनिन निर्सी थी, उस समय उनकी आयु मुक्तिस से २२ वर्ष थी। उन दिनों कम्युनिस्ट साहित्य का बिटिश सासकों द्वारा लड़ी की गयी बभेदा दीवारों से दिस-दिस कर मारत में आना पुरू से हुवा था। इसलिए मोबी बनाम लेनिन एक पूर्वत: विकसित मानसेवादी की कृति नहीं है।

तथापि उस प्रकारन का बाराधिक ऐतिहासिक महत्व है। यह भारतीय निकारों की उस पहली पीड़ी के संघर्ष को परिलक्षित करती है जो गांधी जी की प्रेरण से यन्ने व्याचित के बिल आये से। किन्तू गांधी जी के प्राचिक और पुराणपंची विवारों से, उनकी समस्रीतायरका मीतियों से, इन नीजवानों का मोहमेंग होने लगा था और वे एक बस्तुतः वैवानिक क्रान्तिकारी दर्शन की दिशा में संघर्ष कर रहे से।

क्षणे कहते हैं कि गायों की और लेकिन, दोनों ही, अपने समय के सामाजिक दुगुंगों को, खास तीर से गरीबों को मुंदीबत को, जिनट करना तथा निर्दुकतंत्र को उलाइ फैनटा नाहते वे। इसके बाद वह सिंदान करते हैं कि भागी जी और वैनिन ने इतिहास का, बाधुनिक औदोगीकरण के कारणों का, उसके सकस्य बीर परिणामों का, तथा जन सामाजिक सौंकभी का जो बाधुनिक समाज को पुनोंदिन करने जा रही है, जो विश्तेषण किया है, वह किस प्रकार किन्त है।

वीर वह यह स्पष्ट करते हैं कि वयों मजदूर वर्ग और उसके हड़ताल

संपर्षों को भारतीय स्थाभीनता के लिए संपर्ष में मुस्पट भूमिका है। उनता कहना यह है कि जिस समय कितान देवनों की कर्व अदावधी न करने के लिए कदम यहां देते हैं, उस समय मजदूर तमें की हड़तातें ही सरकार की दमनकारी दाकियों—सेना और पुलिय—के संवालन की पंगु बना सकती हैं और दैनसों की मैर-अदायभी को कामवाब बना सकती हैं।

यह अत्यन्त अयेपूर्ण है कि डांगे मजदूर यमें की भूमिका पर आते हैं— अभी सामान्य ऐतिहासिक इंटिडकोण से नहीं, यक्ति उस असहगोग आन्दीतन के व्यावहारिक दायित्यों के इंटिडकोण से, जो उन दिनीं परमोत्कर्य पर मा।

में समभता हूं कि भारत में हांगे प्रथम भारतीय ये जिन्होंने राष्ट्रीय स्वाघीनता के वास्तविक संघये में मजदूर नगे की भूमिका का प्रश्न उठावा और इस इष्टिकीण से मजदूर वर्ग के संगठन का भी कार्य हाथ में लिया। वह निश्चय ही इस क्षेत्र के बादि अग्रणियों में एक हैं।

व्यापक तौर पर कहा जाय तो गांगी जी और कांग्रेस के प्रति कॉमिन्टर्न और भारतीय कम्युनिस्टों का यह हिंदिकीण १६२८ में छठी कांग्रेस तक जारी रहा । किन्तु वह एकरूप नहीं रहा और उस काल में भी विभिन्न स्वर साफ साफ सुने जा सकते थे।

मिसाल के लिए, स्तालिन ने पूर्व के मेहनतकशों के विश्वविद्यालय के विद्यविद्यालय के विद्यविद्यालय के विद्यविद्यालय के विद्यविद्यालय के विद्यविद्यालय के समा में दिये गये अपने सुप्रसिद्ध भाषण में (१८ मई १६२५) भारत की परिस्थित और दायित्वों का चरित्र-निरूपण निम्न प्रकार किया था:

"भारत जैसे देशों में स्थिति कुछ भिन्न है। भारत जैसे उपनिवेशों में अस्तित्व की परिस्थितियों के आघारभूत और नये पहलू मात्र ये नहीं हैं कि राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग एक क्रान्तिकारी पार्टी और एक समकौता परस्त पार्टी में विभक्त हो गया है, विल्क प्राथमिक तौर पर यह है कि इस पूंजीपित वर्ग का समकौतापरस्त तवका पहले ही मुख्य रूप से साम्राज्यवाद के साथ समकौता करने में सफल हो गया है।...पूंजीपित वर्ग का यह हिस्सा, जो सबसे घनाढ्य और प्रभावशाली है, पूरी तरह से क्रान्ति के कट्टर दुश्मनों के खेमे में जा रहा है, यह स्वयं अपने देश में मजदूरों और किसानों के खिलाफ साम्राज्यवाद के साथ एक गुट निर्मित कर रहा है। इस गुट को जब तक व्यस्त नहीं किया जाता, तब तक क्रान्ति की विजय नहीं हो सकती। किन्तु इस गुट को व्वस्त करने के लिए समकौता परस्त राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग पर प्रहार केन्द्रित करना होगा; इसकी गद्दारी का पर्दाफाश करना होगा।..."

स्तालिन ने इस भाषण में पूंजीपित वर्ग के किस तबके को क्रान्तिकारी

माना ? इस विषय पर भी उन्होंने संदेह के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ा। उन्होंने "पट्टीय पूरीपति बर्ग के कान्तिकारी ततके" के रूप में "निम्न-पूर्वीभति वर्ग" का स्टब्ट उत्तेख किया है। इस प्रकार नियम-पूरीपति वर्ग के खनावा सभी "पूरी उत्तरह से कान्ति के कहुर दुस्पनी के धेमें में जा रहे हैं।"

किन्तु रजनी पामदत्त की पुस्तक मॉडनं इंडिया (१६२७) दूसरा ही

मुल्यांकन पेश करती है।

सबैप्रयम, एमप्टल के धनुसार, बड़े पूंजीयति वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व कामेत के बाहर के उदारपंथी और नरमहती कर रहे थे। उनका यह भी कहता था कि गांधी को द्वारा कांग्रेत का नेतृत्व बड़े पूंजीयति धर्ग का प्रत्यक्ष नेतृत्व नहीं था और यह कि काह्योग आन्दोनन निष्न-यूंजीबादी बुद्धिजीवी सत्वीं का आत्मोनन था।

पामदत्त ने गांपी जी की भूमिका की भी विदिष्ट तौर पर मीमांसा की थी:

"गांधी जी की उपलब्धि इस बात में निहित थी कि सारे नेताओं के बीच प्रथमन अफेत पह ही अवाम को समक्त सके और अवाम तक पहुंच सके। यह नाधी जी की पहली महान उपलब्धि थी—एक मौके पर यह अवाम तक अवस्य पहुंच गये थे।

"गांधी जी की यह सकायारमक उपलब्धि उन सारी सनकों और कथ-जीरियों से उच्चतर है जिन्हें उनके निरोध में पेश किया जा सकता है, भीर वह सारतीय राष्ट्रवाद की उनका एक सच्चा धोगदान है।" (१७० ७२-७३)।

पामदस्त के अनुसार गांधी जी की दूसरी उपलब्धि वी "स्वराज पाने के सिए किमाग्रीसता की, जवाम की किमाग्रीसता की, जवहसीन की नीति तथा जान्योतन के चरम उसके पर पहुंचने पर सामृहिक सविनय अवशा की नीति।" उन्होंने नह में कहा कि "अहिंसा और आध्यातिक अन्तवंस्तु इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं।" (पट ७२-७३)।

इसके बाद पामबस घीरी-वीरा में पीछे हटने की घंटना की व्याख्या करते हैं।

"गाधी जी राष्ट्रीय संघर्ष के मैठा के रूप में इप्ततिए क्षप्तकत हुए कि यह उस उपन बर्ग के हिलों और पूर्वसहीं से स्वयं को पुक्त नहीं कर सके जिनके बीच उनका जासन-पालन हुआ था।...गांघी जी की 'आस्पा-रिमस्ता' इस वर्ग हित की एक अभिन्यक्ति मात्र है। सभी परजीवी और संपत्तिकाली सभी को आने इन्नियर अस्तव्यस्त आपा, अंगविष्यात परंपरा, पर्म, पुनरत्यानवाद आदि का जाना-पाना गुनना पहुंगा है ताहि वे अपने भोषण के वश्य को अनाम को नियाहों से दिया सकी।" (पृ. =०)

गांधी भी के विचारों और स्थायहारिक नेतृत की मंतृत्व प्रक्रिया का जो विक्लेषण पामदत ने किया है, यह निम्मदेश आधारत अधिक महरा है और उनकी युहरी भूगिता की अपेशाइल अधिक ममूद्र और जीवंग मैसी में प्रस्तुत पारता है।

१६२७ में घापुरजी मकलातवाला की—गुप्रसिद्ध कामरेड 'सक' की— भारत गात्रा उस काल के गांधी औं और कम्युनिस्टों के संवंधी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटना थीं, हालांकि मकलातवाला के इंगलेड वापस जाने के बाद सम्हत्वपूर्ण घटना थीं, हालांकि मकलातवाला के इंगलेड वापस जाने के बाद सम्हत्वपूर्ण घटना थीं, हालांकि मकलातवाला के इंगलेड वापस जाने के बाद सम्हत्वपूर्ण घटना थीं, हालांकि महत्व महाचार मजदूर संगठन से संबंधित है, पर कह राजनीतिक इंग्लिस से महत्व-पूर्ण है।

सकलातवाला ने गांघी जी को अपनी ही विविष्ट भैनी में पत्र लिसा था। अपने सबसे विस्तृत पत्र में वह कहते हैं :

" मैं अपने आम मुंहफट तरीके से कहना चाहंगा कि मैं फिर आप पर 'हमला' करने जा रहा हूं। वेशक आप अपने ऊपर मेरे 'हमलों' का कर्य और स्वरूप समभते हैं, अर्थात आपको सच्चे प्रचारक के हृदय और गुणें से संपन्न अजय मनोवल वाला मान कर मैं यह चाहता हूं कि आप विविध भारतीय आन्दोलनों को उस तरह वरतें जिस तरह विश्व के अन्य भागें में इन आन्दोलनों को सफल बनाया गया है।"

इसके बाद पत्र में इस बात की व्याख्या की गयी है कि क्यों भारत है बाधुनिक उद्योग का बढ़ना अनिवाय है; कैसे वह मजदूरों के संयुक्त होने तथ। जाति और धर्म पर आघारित उनके विभाजन को निरस्त करने वाला सबसे शिक्तशाली हेतु साबित हुआ, कैसे भारतीय मजदूर वर्ग को अपनी अल्प संख्या के बावजूद स्वातंत्र्य आन्दोलन में बहुत बड़ी भूमिका अदा करनी थी; कैसे गांधी जी की अहमदाबाद मजूर-महाजन सच्चे ट्रेड यूनियन सिद्धांतों पर नहीं टिकी थी; कैसे गांधी जी के "श्रमिक के हिस्से" संबंधी सिद्धान्त प्रतिक्रियान्वादी थे, आदि, तथा गांधी जी से इस बात के लिए जोरदार अपील की गयी है कि वह मजूर-महाजन को अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस से संबद्ध करें

^९ देखिए : **ज्ञापुरजो स**कलातवाला, पी. पी. एच. प्रकाशन, पृ. ११०.

और कपनी सावत को भारतीय ट्रेड मूर्तिमन आन्दोलन की ध्यापक पारा में अवाहित करें।

इसके बार पुनः सरनातवासा गांधी जी की अभियान भीर संगठन की समनाओं की कोकरकी घटनों में सराहना करते हैं:

"साने सराव स्वास्थ्य के बावहर साथ एक सिक्य और सम्मुख सित्त सानतेय प्रवारक है और यो है तस्य में विश्वान दोनों को समंद तेने में साथ है। साथ सानी सोविध्यता और आवर्षण के कारण जन यानय को सिन्ध्रित कर महते हैं विसत्त करोड़ों निरशार, आविवस्त, सम्मुणी सावारी को नगीठा करने का अल्पाया गुरतार वार्य अरेसाइत स्वासी में सम्बूर्ण के लिए तराव करते का उत्तराह देश होगा, और मैं अर्गामी सावारी को निर्माण करता है देश होगा, और मैं सामने सावारी कह सावार है हिंदा सावारी देश नथी स्विवता से हमारे उन हसारी नवपुत्ती के मामने अगवहात्तिक कार्य ना उपयुक्त रास्ती गून आवेशा ओ क्षी आरके आव्योवन में सामित हुए थे, यर बार में सावहर्तिल और दिख्यातिस्थादक कार्यवनम में सामित हुए थे, यर बार में

यांथी जी के उत्तर अपेशाइत कारी शतित हैं किन्तु साथ ही वे अत्यन्त साध-चिक और रोषक है। एक पत्र में उन्होंने निस्ता है:

"बहा तक हमारे आदतीं का सवाल है, हम असम-अलग विदुओं पर मड़े हैं 1...

"एक एवट नीति के बारे से । यह (मेरी मीति) पूंजीवाद-विशोधी नहीं है। विश्वास प्रमुद्ध नहीं, और कुमी पूंजी को यह का हिस्सा के तिया जाते, उसी अधिक बुख नहीं, और कुमी पूंजी को यह जान कर नहीं, बिरूक अबहरों को अप्यंतर ते गुआर कर और स्वयं जनकी आस्य-वेतना के कियं, तथा गैर-जबूर नेताओं भी बालाती और वासों के जारिये नहीं, बहित अबहरों के स्वयं अपना नेतृत्व तिवस्तित करने के तिया है । सहक अबहरों के स्वयं अपना नेतृत्व तिवस्तित करने के तिया है । स्वा उनके अपने आस्वित्यंद स्वअतितत्वस्य संगठन के जारिये। इसका सीधा सदय मेरा माल राजनीतिक नहीं, बीलक अप्यानत सुचार और कार्तिक साति कार्यिक स्वा विकास है। जब कभी यह विकास पूर्ण हो जाता है भी दरावा परीस परिचार स्वास्त्रतः अव्योधक राजनीतिक होता है।

"... मेरे विचार से मजरूरों को राजनीतिक गुजांक में अवनीतिमों के हाप के मुद्दे नहीं बन जाना चाहिए, ज्यू मुद्दे स्थानियोंकि स्थान से स्थानिय के मुद्दे नहीं बन जाना चाहिए, ज्यू मुद्दे स्थानियोंकि स्थान से स्थानिय करते हैं। स्थानिय क्षानिय के स्थानिय करते हैं। स्थानिय क्षानिय के स्थानिय करते हैं। स्थानिय क्षानिय के स्थानिय के स्यानिय के स्थानिय के स्थानि

(France) &

"...मैं आपको मध्य मन एक सहपीजी मानता हूं...। हम सभी के निर्
यह जरूरी नहीं है कि हम अपनी दर राम पर एक नृसरे में सहमत ही
हों। पर हममें में हरेक के लिए यह जरूरी है कि हम अपने विचारों और
कार्यों के लिए दूसरों में जिनने सम्मान की आजा करने हैं उतना ही
दूसरों को दें।"

सकतातवाला को लिंग गये आने अतिम पत्त में गांधी औ कही दुहराउँ हैं कि उन्हें यह विश्वास नहीं हो गका है कि महर-महाजन का अखित भारतीय ट्रेट गूनियन कांग्रेस में संबद होना उपयोगी होगा, किन्तु "में आपको अपनी ओर से आद्वासन देता हूं कि जिस दास मुक्ते यह महसूस होगा कि मेरा प्रवेश उपयोगी हो सकता है, उसी क्षण में विना हिचक इस अखित भारतीय संगठन को अपनी सेवाएं अपित कर दूगा।"

वेशक, भारत में नयजात कम्युनिस्ट आन्दोलन गांधी जी के साथ केवल मीरिक और वैचारिक वहस-मुबाहमा ही नहीं चला रहा था। यह उस व्यक्ति और उसकी नीतियों के विश्लेषण और मूल्याकन का ही प्रयास नहीं कर रहा था।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना १६२५ में हुई थी। उसके बहुत पहले ही, १६२०, १६२१ और १६२४ में, भारत की ब्रिटिश सरकार युवा कम्युनिस्टों पर कई मुकदमें चला चुकी थी जो उन दिनों वोल्शेविक पढ़यंत्र मुक-दमों के नाम से प्रसिद्ध थे। कारण यह कि गांधी जी के दर्शन और समभौतापस्त राजनीतिक नीतियों से मोह-भंग हो जाने के कारण उन लोगों ने मावसंवाद-लेनिनवाद का प्रचार करना, मजदूरों और किसानों में आन्दोलनात्मक कम्यु-निस्ट साहित्य का वितरण करना तथा जुभारू, वर्ग ट्रेड यूनियनों, किसान समाओं, तरुण लीगों आदि का संगठन करना भी शुरू कर दिया था। पंजाव, वंगाल और वम्बई देश में इस प्रकार की गतिविधियों के सर्वप्रयम केन्द्र थे। साथ ही, गांधी जी की नीतियों से घोर मतभेद के वावजूद कम्युनिस्टों ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में काम करना भी जारी रखा था।

१६२५ में मुख्यतः वम्बई और वंगाल में मजदूर वर्ग के संघर्षों का प्रचंड ज्वार आया था। इन संघर्षों के नेतृत्व में कम्युनिस्टों का प्रभुत्व था। शक्ति- शाली गिरणी कामगार यूनियन, जो उन दिनों एशिया की सबसे बड़ी ट्रेड यूनियन मानी जाती थी, बंबई के कपड़ा मिल मजदूरों की छह महीने की आम हड़ताल से उत्पन्न हुई थी। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस में हमें शक्तिशाली स्थान प्राप्त हो गया।

^९.वही, पृ. १०७-११०

र इन्हों तेजी से बढ़ती हुई कम्युनिस्ट गतिबिधियों के कारण ब्रिटिश सरकार १९२६ के आरंभ में उन दिनों का विख्यात मेरठ कम्युनिस्ट पद्यंत्र केस लागा गा।

 श्रमी तक हमने गांपी जो के कम्युनिस्ट मुखांकन और उनके प्रति कम्यु-स्ट रिटिकोण की ही चर्चा की है। जाहिर है, कम्युनिन्म, बोत्येविन्म आदि

। प्रति गांधी भी के रख का उल्लेख भी जरूरी है।

स्वमानतः गांधी जी को पहले की अपेक्षा १६२६-१७ के बाद कम्युनिन्म गिर कम्युनिस्टों का कहीं अधिक उल्लेख करता पड़ा, व्याविक उस समय तक द्वा सीय भारतीय राजनीति के रंगमंत्र पर एक संगठित और प्रभावसाली रित्त के रूप में महिकत से हो ला पाये थे।

' भोषों जो द्वारा १६१६ में ही दिवा गया एक वक्तव्य अत्यंत अर्पगमित १। भारत के उत्तर-परिवमी सीमान्तों के उस पार विटेन ने जो आकामक शिवियां अपनायी पीं, उनके फुलस्वरूप सर्पन और अगस्त १६१६ के बीच

रीसरा अफगान युद्ध हवा या ।

तत्तातीन वाइसराम लॉर्ड वेम्सकोर्ड ने मुद्ध का दोप भारत के खिलाफ शेल्पेविक कुचकों के माथे मड़ दिया और गांधी जी से बोल्पेविक खतरे के नाम पर व्यवस्थीण आन्दोलन स्थानत कर देने की अपील को ।

गांधों जो ने उस अपोल पर फीरन उप प्रतिक्रिया स्पत्त की। उन्होंने 'यह कहते हुए अपोल को दुकरा दिया कि "मैंने कभी बोल्सेक्कि सतरे में 'विदयाम नहीं फिया है और आंक्रिर किसी भी भारतीय सरकार को कसी बोल्सेक्किय पा किसी भी सतरे से क्यों डरना चाहिए?" और उन्होंने इस होवे कि नाम पर जन-आन्दोलन को स्थित करने से इनकार कर दिया।

ं गांघो जो ने, दिरले हो सही, बोल्वेवियम के बारे में भी लिखा। ११ दिन-म्बर (१२४) को योग इंडिया (वनके प्रतिक्ष सामाहिक मुख्यम) में प्रकाशित एक सेला में कहती टिक्पणी की : "मुझे में भी कर यह नहीं मामुद्र कि बोल्वे-वियम टीक-टीक क्या है। मैं इसका अम्पयन नहीं कर सका हूं। मैं नहीं बानवा कि कालान्यर में यह इस के मने के लिए होगा। पर मैं इतना यानवा हूं कि जहां तक यह हिंगा और देखर के निषेष पर जायारित है, मुझे इसके प्रति 'विद्युच्या होती है।"

यंग इंग्डिया का एक और प्रसंग (१४ नवम्बर १६२८) और भी वर्षपूर्ण है , सवा गांपी भी के विचारों के बन्धोंबरीयी स्वरूप का साम्रणिक उदाहरण है :

> 'मेरा यह हड़ विश्वास है कि हिसा के आधार पर कोई भी स्थापी चीज नहीं सड़ी की जा सकती। विन्तु जो भी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं

कि बोल्डोबिक आयर्श के पीछे उन असंस्य नर-नारियों का पवित्रतम बिलदान छिपा है जिन्होंने इसके लिए अवना सब कुछ अपिन कर दिया है। लेनिन जैसी महान आत्माओं के चिनदानों द्वारा ऐसा पवित्र आदर्श निष्फल नहीं जा सकता; उनके त्याम का उदान उदाहरण सदा मुझोमित रहेगा तथा समय गुजरने के माथ उस आदर्ग को प्रिथक त्वस्ति तथा परि-

इस प्रकार १६२८ में कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस के समय तक गांधी जी और गांधीबाद की आम भूमिका और अर्थवत्ता मासी साफ हो चुकी थी।

एक ओर गांधी जी की ईस्वरवादी विचारपारा और सिद्धान्त सत्य, अहिंसा, प्रेम, त्याग, आत्मशुद्धि, अन्तर की आवाज, हदय-परिवर्तन, अमानत के सिद्धान्त, आदि, सम्बंघी उनके मतवाद—भारत के सामाजिक आविक पिछुड़ेपन को, खास तौर पर भारतीय किसान अवाम के पिछड़ेपन और अंचविश्वास को, अभिव्यक्त करते थे। इसी कारण वे पुराणपंथी और अवैज्ञानिक थे। भारत के क्रान्तिकारी साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष के पूरे विकास के जो वैचारिक तकाजे हैं, उनकी दृष्टि से वे अनिवायंतः अनुपयुक्त थे। जैसे हर अंचविश्वास तया ६) उ. ... ईश्वरीय निर्देश में विश्वास अविचल क्रान्तिकारी संघर्ष के हक में हानिकर होता है, वैसे ही अंतिम विश्लेपण में वे भी हानिकर थे।

दूसरी ओर, उन विशिष्ट ऐतिहासिक परिस्थितियों में इन्हीं सामाजिक, आचारगत और दार्शनिक विचारों ने उन करोड़ों भारतवासियों की आशाओं और आकांक्षाओं को अभिव्यक्त किया जिनमें नये जीवन तथा विदेशी शासन के प्रमुत्व और मुसीवतों के खिलाफ संघर्ष की नयी जागृति फैल गयी थी (उदाहरणार्थ, गांवी जी की इस प्रकार की घोषणाएं और रचनाएं हैं, जैसे, "इस पैशाचिक सरकार को सुघारा नहीं जा सकता, इसका खात्मा ही किया जाना चाहिए"; "ईश्वर गरीवों के सामने सिवा रोटी के और किसी रूप में अवतरित होने की हिम्मत नहीं कर सकता', आदि)।

इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि व्यवहार में इन विचारों ने हड़तालों, सामूहिक असहयोग, सत्याग्रह, सिवनय अवज्ञा आदि का, अर्थात हर्वाया, आक्रांत्र का खिलाफ सामूहिक विरोध प्रदर्शन की कार्रवाइयों का, रूप धारण कर लिया। निश्चय ही ये संघर्ष के क्रान्तिकारी रूप नहीं थे, किन्तु वारण कर तिया है कि इसके बावजूद वे हमारे स्वातंत्र्य आन्दोलन में संघर्ष के शक्तिशाली और कारगर रूप थे।

भीर इसी कारण भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन में गांधी जी के पुराणपंथी आर इता पारच का आ वैचारिक सिद्धान्तों को भी एक साम्राज्यवाद-विरोधी, प्रगतिशील भूमिका

प्राप्त हो गयी। उनसे निश्चय ही राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आन्दोलन की शक्तियों को मुक्त करने में मदद मिली।

बहु कहना सचमुन यांची जी और गांधीवाद का उपहास, मिण्या नित्या, होगी कि उन्होंने कभी 'दुराई का विरोध न करने' के 'हेवाई सवायर का उन्होंने विद्या कि उन्होंने स्वाया र का उन्होंने कि उन्होंने कि उन्होंने स्वाया र का उन्होंने कि उनहोंने कि उनहोंने कि उन्होंने कि उनहोंने कि उनहों

किंतु बेशक गांधी जी के सारे विचार सर्वया भारतीय किसान के तथा स्वातंत्र्य आंदोसन में पहली बार खिब कर आयी हमारी जनता की राजनीनिक

चैतना के पिछडेपन के परिणाम नहीं थे।

उनके हिष्टकोण में निद्रवय ही उनके उच्च-वर्गीय पूर्वपहों का भी तत्व या। भारतीय जनता के कार्यिक और रादनीतिक संगयों की ठोस समस्याओं में यह खहिशा, कमानत और हदम-पितन के अपने 'विदांतों' का जिस तरह अभीन करते थे, निहित स्वाची के प्रति जो वर्ग सहयोग की नीतिया अपनाते थे, उनमें यह बात सबसे ज्यादा देवले में आती थी।

जनकी वैवारिक संरचना के इन दोनों मुलों, इन दोनों तत्वों, तथा आन्दोलन संगठन और समझौता बातों की उनकी वैजोड़ अमताओं, दोनों ने, उन्हें भारत के पूजीवादी-जनवादी स्वातंत्र्य आन्दोलन का श्रेष्टतम सिद्धान्तकार और नेता

ना दिया।

कारण यह कि उनके इन गुणों से भारत के उदीयमान राष्ट्रीय पूत्रीपति वर्ग को ऐसी स्वाधीनता के तिए एक राष्ट्रीय जन-वान्दीसन संगठित करने में गृहाच्या मिनो जी सामित का मूल तस्त तो करतें पुत्रम करा दे, किंदु बान्दीतन को काब से बाहर न जाने दे; इनके उसे सामायनवाडी और सामंत्री हितों के साथ ऐसे सम्मौते करते हुए, जिन्हें बहु भागने क्ये हिन के निए जरूरी समस्ता या, राष्ट्रीय स्वाधीनता प्रायं करने में सहायता मिनी।

इस अतिम अर्थ में इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि मांधी जी एक पूंजीबारी राष्ट्रीय नेता थे। किंतु इससे इस तरब में सेश मात्र अंतर नहीं पहता, या पड़ सकता, कि ऐसी परिस्थित में जब कि मारन के सामने मूल, ऐतिहासिक दायित्व ब्रिटिश घासन में स्वतंत्रता ब्राप्त करने का था, गांधी जी ने, अपनी सारी यैचारिक और राजगीतिक सीमाओं के बावजूद, राष्ट्रीय स्नान्दोलन को ब्रेरणा और नेतृत्व देकर स्वामीनता की मंजिल तक पहुंचाया।

इसी तथ्य के कारण उन्हें राष्ट्रियता कहलाने का सम्मान प्राप्त हुआ।

: ų :

१६२= में हुई कॉमिन्टर्न की छठी कांग्रेस गांघी जी और कांग्रेस के नैतृत्व में चलने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नजरिये और नीतियों के क्षेत्र में एक स्पष्ट गार्ग-चिह्न थी।

कांग्रेस ने गुलाम और पराधीन देशों में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन संबंधी प्रस्थापनाएं स्वीकृत कीं, जिनका शीर्षक या उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों में फ्रान्तिकारी आन्दोलन ।

ये प्रस्यापनाएं आज भी साम्राज्यवादी प्रभुत्व के अधीन देशों के अर्थतंत्र के स्वरूप और विश्लेषण पर एक क्लासिकी दस्तावेज हैं। इस संदर्भ में उससे बेहतर विषय-निरूपण कर सकना मुश्किल है।

इसके बलावा, छठी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत कम्युनिस्ट इंटरनेशनल का कार्यक्रम और बौपनिवेशिक प्रस्थापनाओं को ही इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने स्वातंत्र्य आन्दोलन में बुनियादी वर्ग-तत्त्वों और मजदूर वर्ग की भूमिका की प्रखर समभदारी से समृद्ध भारतीय कम्युनिस्टों की एक पीढ़ी को दोक्षित करने में महान योगदान किया।

किंतु पराधीन देशों के राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग के संबंध में औपनिवेशिक प्रस्थापनाओं की राजनीतिक लाइन स्पष्टतः संकीणंतावादी थी।

छठी कांग्रेस ने इस प्रश्न पर कॉमिन्टर्न की पूर्ववर्ती नीतियों से ऐसा गहरा, संकीणंतावादी मोड़ क्यों ले लिया, यह ऐसा विषय है जिस पर अभी तक पूरी रोशनी नहीं पड़ी है।

एक खास कारण से आश्चर्य और भी वढ़ जाता है। छठी कांग्रेस के पहले राय ने अपने इस आकलन को सैद्धान्तिक जामा पहना दिया था कि भारतीय राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग सर्वथा प्रतिक्रान्तिकारी हो गया है। उनके कथनानुसार भारत में क्रान्तिकारी आन्दोलन से चौकन्ने होकर साम्राज्यवाद ने भारतीय पूंजीपित वर्ग को महत्वपूर्ण आर्थिक रियायतें दे दीं तािक उसे अवाम के खिलाफ प्रतिक्रान्तिकारी संघर्ष में अपने सहयोगियों, मित्रों, छुटभैयों आदि के रूप में अपने पक्ष में किया जा सके। इसे उस समय निरुपनिवेशन का सिद्धान्त कहा जाता था। छठी कांग्रेस ने राय के निरुपनिवेशन के सिद्धान्त को अस्वीकृत कर

दिया और यह प्रतिपादित किया कि साझाज्यवाद ने अभी भी भारतीय आर्थिक विकास को जरुड़ रक्षा है, तयापि व्यवहार में राष्ट्रीय पूर्वोपित वर्ग का बहै। राजनीतिक आकृषन पेपा किया—िक साझाज्यवाद-विरोधी संपर्ध की स्रातिः के रूप में उसकी भूमिका खत्म हो जुकी है। इन दोनों रिपतियों में स्पष्ट अंतविरोध या।

सबसे युक्तियंगत स्पाटीकरण १८२६ में कुओमिशांन और ज्यान कार्दिनेक इस्ता चीती कान्ति के साथ विश्वसायात हो सकता है जिसमें ज्यांन कार्दिनेक के नेतृत्व में द्वितासित दारा बीत यो भयानक हमते में दिखाँ हजार कर्यु-निस्ट और अन्य जनतंत्र-ग्रेमो सीये काट डाले गये। ऐसा हो सकता है कि जय कडु अनुभव के सन्दर्भ में छुड़ी कोशेस इस निकार्य पर पहुंची कि ओपिनेवेशिक पराधीन देशों में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ष महुज एक योवेबाज और नर्युरा सीने है। संक्रवर: यह दूस के जले का महुग कुल-कुल धीने का उदाहरण था।

प्रस्थापनाओं का आरंभ इस वक्तव्य के साथ होता है कि दूसरी कांग्रेस में स्वीकृत राष्ट्रीय ओपनिवेशिक प्रश्तो पर लेनिन की प्रस्थापनाएँ आज भी मान्य हैं। किंत प्रस्थापनाओं की अंतर्वस्त से इस कथन की पुष्टि नहीं होती।

दन प्रस्थापनाओं के निरुपण के विस्तार में जाने की जरूरत नहीं। जनमें अनेक इस प्रकार के सुष धार्मिन हैं: "दाप्ट्रीय पूंजीपति वर्ष का साम्राज्यवार-विरोध संदर्ध में एक सिक्त के रूप में सहत्व नहीं हैं"; "इसकी पुरूप विशेषता यह है कि यह कान्तिकरारी आत्योजन के विकार में अत्योज से अत्योज पेता करने वाला, यह है कि यह कान्तिकरारी आत्योजन के विकार में अत्योजन मारात और मिल में इस नमी भी फिलहास लाशिक पूंजीवादी-गाप्ट्रवादी वान्योजन देखता हैं", "क्या अवस्वस्यादी आत्योजन देखता हैं", "क्या अवस्वस्यादी आत्योजन करने हुए (और मुल में) अत्योजक हुवमुलाहट दिवाला है", "क्या अवस्वस्यादी और मुल में अत्योजक हुवमुलाहट दिवाला है", "क्या अवस्वत्यादी और प्रकार के पुरुप्तिमां करने हुए (और मुल में) अत्योजक हुवमुलाहट दिवाला है", "क्या करने आत्योजकार कर देशा जरूरी है", "क्याजवादी करने कार्योजकार कर देशा जरूरी है", "क्याजवादी करने कार्योजकार कर देशा जरूरी है", "क्याजवादी अपन्यायाती आर्थिक आत्या गाप्ट्रयोज कार्या सामती पर प्रकार के माराती के (और सिक्क कार्योजकार कर देशा जरूरी है", "क्याजवादी करने कार्योजकार कर देशा जरूरी है", "त्याजवादी करने कार्योजकार कार्य

विशेष रूप से भारत के बारे में कहा गया है: "कम्युनिस्टों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के शब्दीय मुमारवाद को केनकाब करना चाहिए तथा सविनय अवता के बारे में स्वराज्यादियों, गांधीवादियों जादि की सारी सपकानी के विरोध में देश की मुक्ति और साम्राज्यवादियों के निष्कासन के लिए संवर्ष का अकाट्य नारा देना चाहिए।" (जोर नेगक द्वारा)।

ऐसा नहीं है कि छठी कांग्रेस की प्रस्पापनाओं ने संकोणताबादी और दुरसाहसवादी कार्यनीति के गिनाफ नेतावनी नहीं दी। कांग्रेस ने श्रोपनिवेशिक देशों के कम्युनिस्टों को नेतावनी थी कि "मलाफाइ लफ्फाजी, नाहे वह कितनी भी क्रान्तिकारी गयों न लगे" राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग को बेनकाब नहीं कर सकती, तथा यह कि पूंजीयादी नेतृत्व द्वारा बार-बार किये गये विश्वासवातीं का अनिवायंतः यह अयं नहीं कि वह स्थापी रूप में साम्राज्यवाद के पक्ष में चला गया है। प्रस्थापनाओं का मसविदा तैयार करने थाने मुख्य व्यक्ति कुसिनेव ने छठी कांग्रेस में इम बात पर जोर दिया कि नीन के कुओमितांग से विपरीत भारतीय राष्ट्रवादियों ने साम्राज्यवादी जिविर में प्रयेश नहीं किया है और वे पूंजीवादी प्रतिकान्तिकारी पार्टी नहीं हैं।

किन्तु इन चेताविनयों और एहितयातों ने प्रस्थापनाओं की मुख्य दिशा नहीं चदली जा सकी। एक बार जब आप यह कह देते हैं कि राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग साम्राज्यवाद और क्रान्ति के बीच संतुलन स्थापित कर रहा है, कि वह साम्राज्यवाद विरोधी संघप में कोई शक्ति नहीं है, कि अब अपना कर्तव्य यह है कि उसके नेताओं का वेरहमी से पर्दाफाश किया जाये, कि कम्युनिस्टों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और उसके अहिंसात्मक जन-आन्दोलन का विरोध करना चाहिए—जब ये सारी स्थितियां अपना ली जाती हैं, तब स्वभावतः कम्युनिस्टों और कांग्रेस के नेतृत्व वाले जन-आन्दोलन के बीच टक्कर के सिवा और कोई संबंध रह ही नहीं जाता।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि छुठी कांग्रेस की प्रस्था-पनाओं ने भारतीय कम्युनिस्टों के लिए भारत में कांग्रेस के भीतर से राष्ट्रीय आन्दोलन विकसित करने के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी थी, और यही असली मुद्दा था। इस बात में कभी संदेह नहीं रहा कि आन्दोलन को वाहर से भी विकसित किया जाना था।

यह वात महत्वपूर्ण है कि छठी कांग्रेस की प्रस्थापनाओं में कहीं भी भार-तीय कम्युनिस्टों से कांग्रेस और उसके आन्दोलन के भीतर रह कर काम करने को नहीं कहा गया। और यह चूंकि संयोग की वात नहीं थी, इस तरह का सुभाव प्रस्थापनाओं के आम स्वर और लाइन के साथ-साथ नहीं चल सकता था।

यही वह नाजुक मुद्दा था जिस पर भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन के संवंध में लेनिन की समभदारी और निर्देश के आधार पर दूसरी कांग्रेस के समय से चलायी जा रही पूर्ववर्ती अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट लाइन से छठी कांग्रेस आमूल अलग हट गयी थी। यह अव्यंत महावयूर्ण बात है कि हालांकि छठी कांग्रेस की साइन १६२९
 के प्रीय्म से सिस-रिस कर मारत पहुंचने तनी थी, फिर भी गांधी जी थेरठ
 पढ़बंज केस के कम्युनिस्ट अभियुक्तों से मिसने १६२६ के उत्तरार्थ में भेरठ
 केत नाठे है।

जन्होंने भेरत पहलंत्र केस में चासे गये हमारे साधियों से कहा कि महीने-दो-महीने बाद होने बाना भारतीय राष्ट्रीय कादेस का साहीर अधिवेदान पूर्ण स्वाधीनता की कांग्रेस का प्रेय पोषित करते हुए प्रस्ताव क्वीकृत करेगा। जन्होंने जन क्षोगों से यह भी पूता कि अब इस प्रस्ताव की रोसनी में कम्यु-निस्ट लोग साहीर कांग्रेस के बाद देहें जाने बाते संपर्ण में उनका साथ देंगे या नहीं।

मेरठ के सावियों ने जवाब में महारमा गांधी से एक बहुत ही प्रासंगिक प्रस्त पूछा। वे सह जानना चाहते के कि अगर पुलिस को हिसा से जनता वर्षीनित हो गयी तो यह वीरी-चीरर कांड के समय की तरह गया किर से आस्टीनक को स्थानित कर होंगे।

गांधी जी ने बोड़ी देर कुछ सोवा और जवाब दिया : "नहीं।"

ये ऐसे तथ्य हैं जिनकी जांच-परत के बाद पुष्टि हो चुती है। यह वार्त भी भहत्वपूर्ण है कि कम्बुनिस्टों और कांग्रेस के बीच सारे भवेनेरों के बावबुद मीतीताल और जांचाराला जेहक की कांग्रेस के विश्वत नेताओं में मेरक अभिगुतों का साथ दिया और उनके कानूनी बचाव में सहस्था की। मीतीताल, जो उस समय के सर्वोच्च मारतीन वकीसों में से ऐ, क्युनिस्टों के बचावं के लिए मेरक की बदातल में व्यक्तिया तथा कर सर्वा

मोतीनाल ने भारतीय विधान सभा में भी, जिसके वह सदस्य थे, नेरठ की गिरस्तारियों की भारतना की । उन्होंने मोदपा की कि वे दिन सद गये जब करोति तारों की बाह सही करके ब्रिटिय शासक नये विधारों को भारत से बाहर फिर एक करने से ।

. इन बारे द्वामों की पोशानी में मह दुखर बात थी कि ? १६ क में— बोकक मारधीय अनाम को गुधारवारी, सामानीत्रपरता, गोधीवारी प्रमान में मुक्त करने तथा मजहूर वर्ष के नेतृत्व में सच्चा क्षानितकारी पार्ट्रीय स्वताच्य आपरी-बन्द पुष्ट करने के ईमानवारी नरे चढ़ेया से—हमने दव्य को नांधी जो के दिरोज में, जारधीय पार्ट्रीय को बात के विरोज में, जारधीय पार्ट्रीय को बात के विरोज में, जारधीय पार्ट्रीय को बात के विरोज में, बहुत कर दिया।

रें यह कह देना जरुरी है कि उस लक्ष्य की ओर बढ़ते हुए हुंस लोगों ने ठोस साम्राज्यवाद-विरोधी नारों के साथ अपने नेतृत्व में मजदूर वर्ग के कई जंगजू संघर्ष संगठित किये । किया ने हमारे तथा मिनिय अवजा आन्दोलन में भाग सिने वाली जनता के थीम सेनु का काम गई। कर मके ।

अगर १६२६ में भेरठ पहर्षन केस सम्बंधी मिरालारियों नहीं हुई होतीं तो यह सम्भव है कि हम लोगों ने कार्यस के नेतृस्य में चलने याले आन्दोलन के प्रति अपेक्षाकृत कम संकीर्णतालाकी कार्यनीति अपनायी होती और तब तस्त्रीर जरा दूसरी होती।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के संपर्य कार्यक्रम का मसविदा पहते-महत्त नवस्वर-दिसम्बर १६३० में इंटरनेशनस प्रेस कॉरेस्पान्डेंस (इंप्रेकॉर) में प्रता-शित हुआ था। जाहिर है, यह १६३० के मनचोर सविनय अवशा आन्दोलन के बीच तैयार किया गया था जिसके दौरान दिसयों हजार लोग जेल गर्ने ये, हजारों लोगों पर पुलिस की मार पड़ी थी और सैकड़ों लोग पुलिस की गोलियों से शहीद हुए थे।

वदिकस्मती से कार्यक्रम का यह मसविदा छठी कांग्रेस की लाइन की "कहीं और आगे" तक गींच ले गया या।

उसमें कहा गया था कि भारतीय

"पूंजीपति वर्ग बहुत पहले ही देश की स्वाघीनता के संघर्ष से गहारी कर चुका है,...इसका मौजूदा 'विरोध' (उद्धरण-चिन्ह मूल में) ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के साय दांव-पेंचों का ही प्रतीक है जिनका प्रयोजन मेहनतकश समुदाय को दगा देना है;...पूंजीपित वगं और उसके राज-नीतिक संगठन, राष्ट्रीय कांग्रेस, द्वारा ब्रिटिश साम्राज्यवाद की दी गयी सहायता आजकल ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ समभौते की सुसंगत नीति के रूप में सामने आ रही है; वह अवाम के क्रान्तिकारी संघर्ष के विघटन और साम्राज्यवाद की व्यवस्था को सुरक्षित रखने के रूप में सामने आ रही है।...गांघीवाद की नीति, जिस पर कांग्रेस का कार्यकन आधारित है, गोलमोल वाक्जाल के पर्दे का इस्तेमाल करती है।... भारतीय क्रान्ति की विजय में सबसे हानिकर और खतरनाक विघ्न है जवाहरलाल नेहरू, वोस आदि के नेतृत्व में राष्ट्रीय कांग्रेस के 'वामपंयी' (उद्धरण चिह्न मूल में) तत्वों द्वारा चलाया जाने वाला आन्दोलनः... 'वामपंथी' (उद्धरण चिह्न मूल में) कांग्रेस नेताओं का पर्दाफाश करती हमारी पार्टी का पहला कर्तव्य है;...राष्ट्रीय सुघारवादियों द्वारा स्यापित समभौते के पूंजीवादी मोर्चे के विरुद्ध कम्युनिस्टों को नीचे से मेहनतक्शी का संयुक्त मोर्चा निर्मित करना चाहिए;...।"

टिप्पणी की कोई जरूरत नहीं।

ं बायुनितर इंटरनेयनन की कार्यकारिकों के स्वारह दूर्वाधियेयन (मार्च-अर्धन १२३१) ने एक प्रताब स्थीहक दिया नितमें इस प्रकार की वार्व-तिस्मितित है की : "अवास का सामाप्रवाद-विरोधी संपर्ध प्रतिकानितकारी गोधीवार को क्षिपकाधिक स्थीतत कर आगे कह रहा है," "मात्त में मजहूर और दिवान आप्लोनमें की कृष्टि के कार्यकर, साम ही राष्ट्रीय मुख्यतार्थी पूर्वीपति को और बिटिंग सामाप्रवाद के वीच विस्तावधात्त्रम अधिकारियों और प्रतिकानिकारी मैंनी के प्रताबक्त किया सामाप्रवाद के विशाक क्रांतिकारी वर-आप्लोतन स्वारहनत और गहनतर होता जा रहा है। मजहूर को के सामने इस समय जो वर्तन्न है, यह है—विहिट्स सामाप्रवाद और स्थानी कार्यन के प्रताबद अधिकार कार्यकरीत कार्यकर सामाप्रवाद और

करना ।"

निषत जाते दिया।

— इनलिए सवान हमारे भीतर देशभक्ति की किसी तरह की कमी का नहीं भा। अगर कोई सात थी तो यह कि हम तीज अधीर हो रहे ये और गांधोनारी वेंगन की तोक साले के लिए कसमता रहे थे। मसला या अपरिवक्ता कर

पा। अवर कोई बात भी तो यह कि हम सोग अधीर हो रहे थे और गांधीवारी वंगन को तोड़ बातने के लिए कमससा रहे थे। मतता था अपरिश्वत का वायां परिस्थित की पंधीदांगियों की ध्वपायत सम्मदारी का। और पीदीनियां क्या भी ? वेधीदगी हम बात में निवित थी कि जहा देश

भीर पेरीवरिजयों क्या की ने देवीदरी हुत वात में निहित की कि जहां देश में निश्वय ही विराह राष्ट्रव्यापी साम्राज्यवाद-विरोधी उभार आया हुआ था, जहां गोथी भी की मीनि निश्चय हो उस जभार की नियंत्रण में रखने की थी, बहुँ जुद भी सही वा कि गोधी जी जन-अर्तनीय की मुक्त कर रहे ये और साथ हैं जह पर अंतुष्ठ मी तथा रहे थे, कि जह एक साम्राज्यवाद-विरोधी भूमिका करें। कर पर अंतुष्ठ मी तथा रहे थे, कि जह एक साम्राज्यवाद-विरोधी भूमिका में बहुत बड़े बहुमत का विश्वाम और भरोगा मा, और यह कि ऐसी किति में हमारे लिए उनकी मकारात्मक भूमिका पर समुखित ब्यान देना, उनके नेहल में बत रहे आत्वीपन में जामिल होता, उसे कालिकारी एप देना, तथा उन मजदूर-कियान धिकार्यों की भी उत्सुका कर देना जक्षी मा जो सीथे और पूर्णतर रूप में हमारे प्रभाव में भी।

्मारा यह दाया गही है कि यह काम आसाम या। वेकिन आपर मही समभदारी रही होती थी इसमें संदेह नहीं कि रवार्तथ्य-आद्योलन की किंति गारी प्रय पर आगे से जाने में, जिसकी हम इनमी तीच कामना करने थे, हर्ने काफी सफलता प्राप्त की होती।

१८६१ के आरम्भ में एक निहायन दिलनस्य—गम्तुतः निहाप्तद्र—घटना घटी। गांभी जी ने परेल, बम्बई, में एक मभा सम्बोधित की। हम लींगों ने बहा प्रदर्शन किया थीर सभा के संगठनकर्जाओं ने बी. टी. रणदिवे की भारत देने के लिए बुलाया। गांधी जी रणदिवे के बाद बोले। उनके भाषण का (अंबेडी में अनूदित) सारांग यंग इण्डिया (२६ मार्च १६३१) में प्रकाणित हुआ। यहां में यंग इण्डिया से चंद बाक्य उद्धुन करांगा:

"मैंने यहां नीजवान कम्युनिस्टों के पैदा होने के बहुत पहले ही मेहनत करने वालों के ध्येय को अपना ध्येय बनाया। मैंने अपने जीवन का सबते जच्छा समय दक्षिण अफीका में उन लोगों के लिए काम करते हुए विताया। मैं उन्हीं लोगों के साथ रहा करता था और उनके सुय-दुस का साभीदार था। इसलिए आपको यह सममना चाहिए कि में मजदूरों की लोर से बोलने का दावा क्यों करता हूं।...मैं आपको आमंत्रित करता हूं कि आप मेरे पास आयें और जितना सुल कर बात करना चाहें करें।

"... अगर आप देश को अपने साथ ते चलना चाहते हैं तो यह जहरी है कि आप उसके साथ तर्क-वितर्क कर उससे बात कह-मुन सकें। ...आज आप मुद्दीभर से ज्यादा नहीं हैं। ...मैं तो यह चाहता हूं कि अगर आप कांग्रेस को बदल सकें तो बदल दें और इसका कार्यभार सम्हाल लें। ...अपने विचारों को पूरी तरह अभिव्यक्त करने की आपको ख़ुली छूट है।

"... अगर सम्मेलन में (यहां लंदन में हुए द्वितीय गोलमेज सम्मेलन का संदर्भ है जिसमें गांधीजी जाने वाले थे —श्री. स.) कांग्रेस अपना प्रतिनिधि भेजती है तो वह मजदूरों और किसानों के लिए स्वराज के सिवा और किसी स्वराज के लिए दवाव नहीं डालेगा।

्राप्त में आपको सोखा नहीं देना चाहता । मैं आपको आगाह कर देना चाहता । मैं आपको आगाह कर देना चाहता । मैं आपको आगाह कर देना चाहता । मैं अपको आगाह कर देना चाहता । मैं

मह बाहता हूं कि कप्ट सह कर उन्हें उनके कर्दव्य-श्रोध के प्रति जाग्रत कर दं 1 --- "...ईस्वर ने आपको बुद्धि और प्रतिभा दी है। जनका सही उपयोग

, कीजिए। मैं आपसे प्रार्थना करता है कि आप अपने विवेक पर रोक न लगायें । ईश्वर आपकी सहायता करे।" मह ठेठ गांधीबादी किस्म का भाषण है, पर किसी भी दर्षिट मे कम्युनिज्म का प्रतिकान्तिकारी प्रत्याय्यान नहीं है। इसके अलावा, गांधी जी यहां कम्यु-

निस्टों को खुली बहुस के लिए आमंत्रित करते हैं और इस बात का साफ-साफ विस्वास दिलाते हैं कि वह खुली बहुसी के चरिये युवा कंन्युनिस्टों से कही अधिक विशाल जन समुदामों को अपने साम ले चल सकते की स्थिति में हैं। गांची जी उस मीटिंग के बहुत ज़ल्द बाद ही लंदन खाना हो गये। वहां

कई युवा, उदीयमान कम्युनिस्टों से उनकी बहस हुई, जिनमें शीमती सरोजनी नायह के पुत्र भी शामिल थे। भीचे गांधी जी से पूछे गये कुछ सवाल और उनके जवाब प्रस्तुत है : "आपके विचार से भारत के रजवाडे, जमीदार, मिल मालिक, महाजन

और दसरे मालिकानं कैसे घनाइय बनते हैं ?" .. "अभी इस समय, जनता का शोयण करके।"

"अगर आप मजदरों और किसानों को लाभ पहुंचाते हैं तो क्या आप

वर्ग युद्ध से बच सकते हैं ?" "जरूर, तिरुवय ही, बरातें लोग ऑहसा की पद्धति पर चलें। हम

" शहिसा की पद्धति से पूंजीपति को नहीं विनय्ट करना चाहते हैं, हम 'पूंजीवाद को विनष्ट करना बाहते हैं। हम पंजीपति को इस बात के लिए

आमंत्रित करते हैं कि वह स्वयं उनका अमानतदार बने जिन पर वह अपनी पंत्री के निर्माण, रक्षा और वृद्धि के लिए निर्मर करता है। अगर पूंजी दाति है, तो थम भी दाति है।"

" "क्या इन (शोधक) बर्गों के पास इस बात का कोई मामाजिक वौचित्य है कि वे उन साधारण मजदूरों और किसानों से ज्यादा आराम ' से रहें जिनके काम से उन्हें घन प्राप्त होता है।"

"कोई भौवित्य नहीं।"

"बाप अमानतदारी कैंद्र स्वापित करेंगे ? क्या सममा-बुमा कर ?" "जवानी तीर पर समम्य-बन्ध कर ही नहीं। मैं अपने साधनों पर

., ध्यान केन्द्रित करूंगा ।...मेरा यह विश्वास है कि मैं कान्तिकारी हं--

वॉहसारमर कान्तिकारी । मेरा हथियार है असहयोग ।"

"किसान और मजदूर को अपने भाग्य का निर्णय करने के हेतु पूर्व सत्ता प्रदान करने के लिए ठोस रूप में आपका कार्यंत्रम क्या है ?"

"भेरा कार्यक्रम यही कार्यक्रम है जिसे में कांग्रेस के जिस्से तैयार कर रहा हूं। भेरा पूरा विश्वास है कि इसके फलस्वरूप बाज उनकी स्थिति उससे बेहद अधिक अच्छी है, जैसी हमारी यादवान में कभी भी रही है। मैं इस समय उनकी भौतिक स्थिति का उल्लेख नहीं कर रहा हूं। मैं उनमें आयी अपार जागृति और उसके फलस्वरूप अन्याय बीर शोषण का प्रतिरोध कर सकते की उनकी धमता का उल्लेख कर रहा हूं।" (यंग इंडिया, २६ नयस्वर १६६१)।

इस सम्पूर्ण वार्तालाप में एक बार पुनः गांधी जी, उनके विचारों बीर उनकी नीतियों की यक्ति बीर सीमाएं, सकारात्मक और नकारात्मक प्या, दोनों, सामने वा जाते हैं।

१६३३ से १६३६ के बीच भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और गांघी जी के संबंधों के बारे में कहने को कोई सास बात नहीं है। यह काल पुनः १६३४ में गांघी जी द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन के स्यगित कर दिये जाने के बाद जन-आन्दोलन के जतार और ह्वास का काल था।

किन्तु साथ हो यह राष्ट्रीय आन्दोलन में पुनर्विचार का तथा नये विचारों के अंकुरण का काल था।

ब्रिटिश, जर्मन और चीनी कम्युनिस्ट पार्टियों ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को खुले पत्र लिखे जिसके साथ हमारी पार्टी द्वारा उस संकीणंतावादी लीक से निकलने के लिए संघर्ष की प्रक्रिया शुरू हुई जिसने उसे राष्ट्रीय आन्दोलन के व्यापक प्रवाह से अलग कर दिया था।

दूसरी थ्रोर से, अर्थात कांग्रेस के भीतर से, नेहरू जी इतिहास के एक मात्र वैज्ञानिक दर्शन मार्क्सवाद के समर्थन में, कांग्रेस के लिए मूलगामी कृषि कार्यक्रम के समर्थन में, मजदूर वर्ग आन्दोलन के राजनीतिक महत्व के समर्थन में, और सर्वोपरि, इस बात के समर्थन में ज्यादा से ज्यादा खुल कर आने लगे कि भारत को सोवियत संघ और चीन, स्पेन आदि के नये क्रान्तिकारी उभार के साथ कंबे से कंघा मिला कर संपूर्ण-विश्व में चल रहे आम फासिस्ट-विरोवी संघर्ष में घरीक होना चाहिए।

पहली वार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर एक जागरूक समाजवादी समूह का आविर्भाव होने लगा, जो कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के नाम से पुकारा जाता था। १६३५ से हुई कॉमिन्टने की मातवीं कांग्रेस ने भारत समेत संपूर्ण अंतरीष्ट्रीय कम्मुनिस्ट बान्दीनन को एक नयी दिशा दी ।

कारेस ने पुन के बड़ने हुए सबदे के सिवाफ, फालिम्म के जदय के सिवाफ, बड़ने हुए साम्राज्यवादी आक्रमण के सिवाफ, विवने सारे विचाहे हैंगों के लिए पता पंदा कर दिया था, तथा सारे औरतिवेदीतक और अंध्योगिवेदीक कोरों के लिए से स्वतंत्रता के सिट मातक राष्ट्रीय मौजी बनाने के हेतु अंतर्राष्ट्रीय होक्सिय एटना का मौ बाहान किया, जसका न सिर्फ मारतीय कम्युनिस्ट पार्टी पर बिक मारतीय राष्ट्रीय कार्यीय एट्नीय कार्योक के मौतर के वामपंत्री तस्वी पर भी प्रमाव पड़ा। सातवी कांग्रेस के बाद दत्त-बंदों प्रस्थापना ने भी इस प्रविवास को बड़ावा दिया।

हमारी पार्टी ने अनवरता एक नयी खादन तैयार की जो राष्ट्रीय मोचे की लाइन दुसरी जाती थी। इसते सातरी कार्रेत हो लेकर द्वितीय विवन युद के आरंग होने के बीच अर्थन ठोग नतीने सामने आये।

हम बोगों ने सांतजासी ट्रेड यूनियनें, हिसान समाएं, छात्र और युवक संगठन निमित हिन्ने, हेस के अधिकांस यांतों में वार्टी को फीजाया, राष्ट्रव्यापी पैमाने पर काम करने बाता एक वार्टी केन्द्र कायम किया, सारे देस में आसंख्य युव्यक उन संपर्ध संगठित हिन्दे, अधिकांस भारतीय मायाओं में पार्टी पत्र निकानने गुरू किये और उन्हें सोकियिय बनाया।

स्वभावतः हमने जो नुष्ठ किया वह हतना ही नहीं था। हम कांग्रेस में फिर दाबित हुए, निरचय ही कम्युनिस्ट शक्ति के रूप में, सबसे सुसंगत वामपंची गिक्त के रूप में, किन्तु साथ ही कांग्रेस के भीतर सारी सामाज्यवाद-विरोधी शक्तिमों को एकता में बांग्रेन की कीतिस्य करने के उटेस्त से भी।

हुमने राष्ट्रीय पूर्वभेपति वर्षे की, मारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की, सकारात्मक, साम्राज्यबार-किरोमी भूभिका को स्वीकार किया और उसे अपनी आसोचनात्मक भूमिका, पुरुगामी बनाने बाली धमिका. के साथ संस्तक किया ।

्त्यं गांधी वो के संबंध में हमारी आलीचना अधिक बस्तुनिष्ट और संतु-तित ही गंधी। उनके विचारों और नीतियों के विवास कैचारिक और राजके नीतिक संवधे जकरी था और वह चलाया गया। किन्तु हमारे और उनके वीच समानता के पूर्व भी में और आम और पर हमने यह दिव्होंग अधनाया कि उनके साथ बचने सारे पाठवेंशों के बाबहुत हम यह चाहते हैं और उनके यह स्पेशा करते हैं, कि यह एक संयुक्त, साम्राज्यवाद-विरोधी स्वातंभ्य आम्तेनत् के तेता की मूधिका अदा करें। हमने यह हिंदकोण अपनाया कि हिसा और लिहिसा पन प्रश्न इस प्रकार के आन्दोतन में हमारे एक अनुनामित गिक्त होते की राह में कोई याचा नहीं बनेगा, यनते उसके कार्यतम और नीतियां ऐकी हीं जिन पर संपूर्ण कांग्रेस सहमत ही—जिसमें वामार्ची गिक्तियां एक आवस्क और अवंद अंग के हम में मिमितित भी।

एक व्यापक रूप में, किन्तु टकरानों के साथ, क्षेत्रेस के अन्दर हुमारी पार्टी, कांग्रेस सोमितिस्ट पार्टी, नेहरू और गुभाष के बीध एक किस्स का समत्वय विकसित हुआ। कुम मिला कर इसने कांग्रेस के अन्दर एक काफी बड़ी प्रक्रि का रूप घारण कर लिया, यसपि नेतृत्वकारी शक्ति का रूप नहीं।

इस फाल में, और हकीकता यह है कि १६४८ में, मुजरिमाना तरीके से हरयपटल से उनके हटा दिये जाने तक गांधी जी का जो विकास हुआ, उसका अभी तक किये गये अध्ययन से अधिक परिपूर्णता और सायपानी के साय अध्ययन किया जाना जरूरी है।

मेरे कहने का अर्थ यह है कि इस सारे काल में यह अनेक प्रश्नों पर १६३६ के पहले की तुलना में अधिक मूलगामी स्थितियों की और निसक आये थे। साथ ही जहां नेतृत्व का प्रश्न उठता, यह १६३६ के पहले ने ज्यादा सचेत और इड़ रूप में वामपक्ष की शक्तियों के खिलाफ उठ राड़े होते रहे।

"शुद्ध" तकं की दृष्टि से यह अज़्या और अंतियरोपपूर्ण प्रतीत हो सकता है। किंतु ऐतिहासिक दृष्टि से, मेरे विचार से इसकी सर्वेचा व्याच्या की जा सकती है। गांघी जी कार्यक्रम के प्रदनों पर और संघर्ष के तरीके और रूप के प्रदन पर वामपंथी द्राक्तियों से आजीवन एक संघर्ष चलाते रहे। किन्तु वह चतुर और सक्षम ये और यह समभते थे कि आन्दोलन के विकास के अनुरूप वामपंथ की कार्यक्रम संबंधी कुछ मांगों को वह चाहे स्वीकार कर लें और अहिंसा के प्रदन पर भी चाहे समभौता कर लें, लेकिन किसी भी हालत में आन्दोलन का नेतृत्व वामपंथी द्यक्तियों के हाथ में समर्पित करने को तैयार नहीं थे। मेरे विचार से १६३६ से १६४८ के बीच उन्होंने यही किया और इस अथं में 'सफलतापूर्वक' किया कि उन्होंने संपूर्ण आन्दोलन का नेतृत्व कभी अपने हाथ से जाने और वामपंथियों के हाथों में पहुंचने नहीं दिया।

मिसाल के लिए, इस बात का कोई सवाल ही नहीं उठता कि कृषि के प्रश्न पर वह वामपंथी दिशा में बढ़े थे।

१६२२ में चौरी-चौरा कांड के बाद असहयोग आन्दोलन को वापस लेने के बाद उन्होंने केवल हिंसा का ही मुंहफट तरीके से विरोध नहीं किया। वह जमीदारों को लगान देने वाले खेतिहर कारतकारों के खिलाफ भी उतने ही मुंहफट तरीके से बोले जबकि यह आन्दोलन चौरी-चौरा के पहले उत्तर प्रदेश में दावाग्नि की तरह फैलने लगा था। वास्तव में उनका दो-द्वक दृष्टिकोण महाया कि बाहे जितने ऑहसारमक सरीके से जमींदारों को समान न दिया जामे कह हिसा है 35 के 37 करों

इस तरह उनके लिए वहिता मात्र भीतिक ही नहीं थी। जिस किसी भात से देश में 'बर्ग संपर्ध देश हो, चाहे बहु भौतिक हॉट्ट से कितनी भी बहितारमक क्यों न हो, बहु मी हिंसा थी। और इस स्पिति से वह अपनी प्रस्त तक दस से मात्र नहीं हर।

किन्तु १६३२ में उन्होंते वैतिहर कास्तकारों हारा जमीवारों को उतनी सपात के म दिये जाने की स्वीकृष्टि दे दी थी, जितनी, जमीवारों हारा सरकार को बदा की जानी हो । यह बहुत हो बुद्धिमतापूर्ण तालकेल या नयोंकि इससे एक जोर जमीदारों के खिताफ जास्तकारों के असंतोष के अभिष्यक्त होने की मुंबाहर हो गयी, दूसरी, श्रीर उनुके आन्दोलन को नियंत्रण में बनावे रसने म यदद मिली।

१६२४ में उन्होंने हाल ही में निमन कांग्रेस सोप्तालिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के सत्यंव में पूछे परिकृत्रि अस्तों का जबाद देते हुए कहा: "मैं वसीवारों और कात्वकारों के बीच सन्यंव की समादित के पता में नहीं बल्कि उसके न्यायपूर्ण नियमन के एवं में हैं।" (माद सीक्षासित्तम, मो. क. नापी, पटंट है)।

िरुषु १६३७ में 'सर्वाह भूमि गोवाल की' जैसे सिद्धाला पर उन्होंने इस प्रकार के बयान देने पुरू कर दिये कि "भूमि और सारी सम्पत्ति उसकी है जो उस पर काम करें 1 दुर्माप्य से, मजदूर इस सोवेसादे सम्प से अवर्षित हैं या 'से पढ़े हैं।'' (अरिजल २० करदरी १६३७)।

पुनः, १९४० में बवधकार नारायण द्वारा देवार शिये गये एक शताय का समय करते हुए उन्होंने तिवार: "किसी व्यक्ति को प्रतिराध के साथ जीवन-निवाद के सिद्ध प्रत्यों ते तिवार: किसी व्यक्ति को प्रतिराध के साथ जीवन-निवाद के सिद्ध पितानी जागीन केन्द्री हो उन्हेंस अधिक जगोग उन्हों पहा नहीं होंनी चाहिए। इस बात से कोन इनकार कर सकता है कि जनता की दुआह गरीबी का कारण यह है कि उन्होंने वाह ऐसी जगोन नहीं है जिसे वह अपनी "ह को ?" (हिस्सन, 70 अपनी दुध्क)

पुनः यह लिखते हैं :

"कियान का स्थान पहला है, चाहे यह सुमिहीन मजदूर हो या भूमि का मेहनतक्या मानिक। यह उस घरती की सवस्ती संतान है जो उचित ही उसकी है या उसकी होनी भाहिए, न कि अन्यम बाकर रहने वाले व्योगार की। निक्क अहिंगास्त्र चर्दात में मजदूर ज्ञायन बाकर रहने याले जमींदार को असपूर्वक निक्यासित नहीं कर सकता। उसे इस तरह कान करना पड़ेया कि बगोंदार के लिए उनका गोपण कर सकता असंभव हो जाये। कियानों के बीच चनिष्ठतम सहयोग परम आवसक है। इस कार्य के लिए विशेष संपठन निकायों या समितियों का निर्माण किया जाना चाहिए।...जहां ये भूमिहीन मजदूर हों, यहां उनका येतन ऐसे स्तर पर सामा जाना चाहिए जिसमे उनके लिए जिष्ट जीवन की गारंटी हो सके—जिसका अये होगा मंतुलित-मोजन, रिहामशी मकान और यस्त्र, जिनसे स्वस्य आयरपकतायें पूरी हो सकें।" (बॉम्बे कॉनिकत, २= अक्तूबर १६४४)।

अपने जीवन के अंतिम दिनों में १६४६ में मुई किशर को धी गयी मेंटवार्त में उन्होंने यहां तक कहा कि में यह नाहता हूं कि किसान जमींदारों की जमीनों पर मौतिक रूप में कब्जा कर सें। मुई किशर को यह वक्तव्य प्रीतिकर नहीं लगा और उन्होंने पूछा कि ऐसी नीति में यह जमीदारों से सहयोग की कैंसे आया करते हैं। गांधी जी ने काकी कटुता के साथ जवाब दिया: "मुमिनन है, भाग राड़े होकर।"

वेदाक वह अंत तक अमानतदारी के बारे में, समका-बुक्ता कर और प्रेम से, संपत्ति के स्वामियों का ह्दय परिवर्तन करने की बात करते रहे। किन्तु कम से कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि अपने जीवन के अंतिम वर्षों में वह 'समकाने-बुक्ताने' की जो बात करते ये और इस विषय में वह पहले जो विचार रखते थे, उन्हें एक मान सकना मुक्तिल है।

आम तौर पर भी, अमीरी श्रौर गरीबी, घनी और नियंन की समस्या पर गांघी जी के कथनों में एक तीखा, अपरिचित, नया स्वर उभर आया था। यहां कुछ कथन पेश हैं:

"आर्थिक समानता अहिंसात्मक स्वाधीनता की श्रमीय कुंजी है। आर्थिक समानता के लिए काम करने का अर्थ है पूंजी और श्रम के बीच शाश्वत संघर्ष को समाप्त करना। इसका अर्थ है एक ओर उन चल्व घनिकों का स्तर नीचे लाना जिनके हाथ में राष्ट्र का ऐश्वयं केन्द्रित है, और दूसरी ओर अधभूसे, नंगे लाखों लोगों का स्तर कचा करना। ज्या दिल्ली के प्रासादों श्रोर पास के ही मेहनतकश वर्ग की दयनीय भोपड़ियों की वियमता स्वतंत्र भारत में एक दिन भी कायम नहीं रह सकती क्योंकि तब देश के गरीबों को वही अधिकार प्राप्त होंगे जो घनी से घनी लोगों को। श्रोर घन को, और घन से प्राप्त सत्ता को, यदि स्वेच्छा से विसर्जित नहीं किया गया और आम भलाई के लिए उनकी हिस्सेदारी नहीं की गयी, तो एक दिन हिसात्मक और रक्तरंजित क्रान्ति का होना निश्चित है।" (माइ सोशलिजम, पृ. २४-२६)।

ंद और आये ::

' ''आंत्र घोर आधिक विषमता है। समाजवाद का आधार आधिक , समानता है। अन्यायपूर्व विषमताओं की मौजूदा परिस्थिति में, जिसमें 'पंद लीग धन-वैभव में सिर तक हुवे हैं और जनता की खाने की भी नही मिनता, रामराज्य नहीं कायम हो सकता ।" (हरिजन, १ जून १६४७)।

"मूलभूत उद्योगों का नाम विनावे दिना मैं यह चाहुंगा कि जिनमें बहुत बड़ी संख्या में लोगों को साथ-साथ काम करना पड़ता हो, वे राज्य के स्वामित्व में हों। उनके श्रम से निमित चीजों का स्वामित्व, चाहे वह कुराल धम हो या अकुराल, राज्य की मार्फत उनके हाथों में होगा ।" (हरिजन, १ सितम्बर १६४६)।

,, गांधी जी ने जी सामाजिक आधिक परिवर्तन लाने की कत्यना की थी, उसके तरीकों के मामले में भी हम देखते हैं कि वह देश के बनाइय संपति-मारियों के खिलाफ भी मत्याग्रह के हवियार के इस्तेमाल की कल्पना करने सर्वे ये।

• • - चन्होंने लिखा है : •

"अंतिम विस्तेषण में कम्युनियन का क्या अर्थ है ? इसका धर्ष है एक वगेंहीन समाज-एक ऐसा आदर्श जिसके लिए प्रयास करना वांखनीय है। मैं इससे तभी ग्रलग हो जाता हूं जब इसकी प्राप्ति के लिए शक्ति की ' सहायता तेने का सवाल उठता है।" (हरिजन, १३ मार्च १६३७)।

. नीने दिया गया उद्धरण अत्यंत दिलनस्य है :

"अगर विद्यान. मंडल किसानों के हितों की रक्षा कर सकने में स्वयं . को असमर्थ पाते हैं तो निस्संदेह उनके पास सदा सविनय अवज्ञा और अमहयोग का सर्वोच्च उपचार, रहेगा। वयोंकि ... अंततीगत्वा कागजी कानून या बहादरी से भरी बातें या जोशीने भाषण नहीं, बल्कि वहिंसा-्रस्मक संगठन, प्रनुशासन और त्यान की शक्ति ही अन्यान और उत्पीदन के . खिलाफ जनता का सच्चा सहारा है।" (डॉम्बे क्रॉनिकल,, १२ जनवरी 1 (2835

ः पह प्रश्न पुछे जाने पर कि "धनी सीगों को गरीबों के प्रति अपने कर्तव्य का नीय ने रामे में सत्यापह का क्या स्थान है !". गांधी जी ने जवाब दिया : "वहीं जो विदेशों सत्ता के लिलाफ । सत्यापह सार्वभीन प्रयोग लामक एक नियम, है।" (हरिजन, ३१ मार्च १६४६) । -: :

गोई भी देश सकता है कि इन स्थितियों के पीछे दिनी मानना और इनकी अंतर्यस्तु भीषे दशक के मध्य एक गांधी जी द्वारा अंतनायी गयी स्थितियों से स्पष्टतः भिन्न है।

भारतीय राष्ट्रीय मध्रिम के नध्य—पूर्ण स्वाधीनना—के सवात को ही ने लीजिए। कांग्रेस द्वारा १६२६ में लाहीर अधिनेदान में स्वीकृत किये जाने के वर्षों बाद गांधी जी हमें 'स्वाधीनता का निर्माह", "आहमा की शुद्धि" जादिन जाने क्या-क्या फहा करते थे। किन्तु १६४२ में जब उन्होंने स्वाधीनता का लेतिम संग्राम छेहा, तय उन्होंने महज इतना ही कहा: ''स्वाधीनता का लये है भारत छोटों", जो शासक ब्रिटिश सत्ता को मुंह काला करने के लिए सीवा नीटिस था।

अहिंसा के प्रस्त पर भी यह स्पष्टतः निद्ध तथ्य है कि १६४२ के आन्दोतन में उन्होंने व्यवहारतः अपने अनुपायियों के हिसारमक तरीकों की भी तरफदारी की, किन्तु अपने नेतृत्व के पहले के आन्दोलनों में उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया था।

यहुत बढ़-चढ़ फर न सही, फिन्नु जब जेल में याइमराय ने उन्हें बाहर उनके अनुयायियों द्वारा किये जा रहे तो इफीड़ के हिसात्मक कार्यों का सार्य देते हुए पत्र लिखा, तो उन्होंने यह सपाट जवाब दिया कि जो दासक सारे आन्दोलन को निर्मम बल-प्रयोग द्वारा कुचल रहे हैं, उनके लिए बेहतर यह होगा कि स्वातंत्र्य योद्धाओं द्वारा की गयी हिसा की बात करने के पहले वे स्वयं अपनी पाशविक हिंसा को बंद करें।

स्यानाभाव के कारण में बहुत अधिक साध्य नहीं दे सकता हूं। लेकिन में मानता हूं कि यह साबित करने के लिए आवश्यक साध्य मौजूद हैं कि जन-आन्दोलन की बढ़ती शक्ति और नयी चेतना के प्रभाव के अन्तर्गत (जिसमें निस्संदेह हमारी पार्टी ने सर्वाधिक योगदान किया) तथा नेहरू के विचारों के प्रभाव के फलस्वरूप, गांधी जी चौथे दशक के मध्य से आगे अपनी स्थिति वाम-पक्ष की ओर बदलते गये। जन्होंने वामपंथ से, जो कुछ अपने दृष्टिकोंण से जितत समका, ग्रहण किया।

समानतः, वही गांघी जी देश में और कांग्रेस के भीतर बढ़ती हुई वामपंथी शक्तियों से अपने नेतृत्व के लिए उत्पन्न चुनौती का अधिकाधिक दृढ़ता और तीसेपन के साथ जवाब देने लगे।

सच वात तो यह है कि यह पहला मौका था जब उनके सामने इतनी गंभीर चुनौती खड़ी हुई थी। हालांकि १६२२, १६३१ और १६३२ में निर्वय ही उनका ऐसी जनता से मुकावला पड़ा जो अपने स्वयंस्फूर्त, कान्तिकारी जीश के कारण उनके काबू से वाहर निकली जा रही थी, पर उन तीनों मौकों पर किसी जागरूक और संगठित वामपंथी नेतृत्व ने उनके सामने ऐसी कोई चुनौती नहीं पेरा की थी । सीघी-सादी बात यह थी कि उस समय बामपंथ इतना कम-बोर या कि कोई पूनौती नहीं पेस कर सकता था।

इसी अर्थ में चौथे दशक के मध्य के बाद स्थिति तेजी से बंदलने लगी। कांब्रेस के भीतर का कम्युनिस्ट और गैर-कम्युनिस्ट वामपक्ष, उनके नेतृत्व में

नयां मजदूर-किसान और छात्र उभार, जिसे नेहरू जो की भूमिका से व्यापक तौर पर आड़ मिल जाती थी, अब न केवल मूलगामी सामाजिक आधिक और राजनीतिक मार्गे रावने समे थे, बल्कि एक वैकल्पिक, राष्ट्रीय, साम्राज्यवाद-विरोधी नेतरव का भी सुजन कर रहे थे।

शांधी जी ने स्वातंत्र्य अान्दोलन में गुणात्मक हॉस्ट से इस नये विकास के प्रति क्सि प्रकार सहय बोध से और चटपट प्रतिक्रिया की, यह १६३४ में ही, कांद्रेस सोरालिस्ट पार्टी के निर्माण के बहुत ही जल्द बाद, उनकी प्रतिक्रियाओं से देखा जा सकता है।

१७ सितम्बर १६३४ को उन्होंने यह वक्तव्य जारी किया कि "अगर कांग्रेस के अन्दर कांग्रेस-सोशिलिस्ट अपनी अनुवासी कायम कर लेते हैं, जैसा कि वे बलूबी कर सकते हैं, तो मैं कांग्रेस में नहीं रह सकता।"

ऐसे बक्तव्यों का सिलसिला और नेहरू जी के साथ प्रायः निर्ममता की हद तक बह सरा पत्राचार १६३४, १६३६, १६३७ और आगे चलता रहा निसमें उन्होंने कहा या कि नेहरू जी के प्रति अपने समस्त प्रेम के बावजूद अगर नेहरू जी ने अपने विचारों और अभियान को जारी रखा तो उनसे उन्हें संबंध-विच्छेद करना पडेगा।

१६३८ में कठोर परीक्षाका मौका आया। गांधी जी ने कांग्रेस के नागामी अधिवेशन के अध्यक्ष-पद के सिए, जो त्रिपुरी में होने वाला था, पट्टामि सीतारमेंया का नाम प्रस्ताविस किया। कांग्रेस के भीतर की वामपंची पाक्तियों ने संयुक्त होकर सुमाय बोस को अपना जम्मीदवार बनाया । सीतारमैया के

सिलाफ कांग्रेस प्रतिनिधियों ने सुभाष बोस को विजयी बनाया ।

गाधी जी ने बहुत हो तीसी प्रतिक्रिया व्यक्त की। उन्होंने कहा कि यह सीतारमेवा की नहीं स्वयं जनकी अपनी पराजय है और (१६२० में कांबेस का नेतृत्व संभालने के बाद पहली बार) त्रिपुरी काग्रेस अधिवेदान में सम्मिलित

बाद के महीनों में किम तरह कांग्रेस का सम्पूर्ण दक्षिणप्यो नेतृत्व कांग्रेस के बध्यक्ष पर से मुजाय की भगा देते के लिए (तिस्संदर, बड़े "बहिसारमक" हंग से) संयुक्त हो गया और उनकी जगह श्रीमती नायह को निर्वाधित करवा निया, यह कहानी इननी सुविदित है कि इसे दुहराने की जरूरत नहीं।

इस यात के असंस्य जदाहरण दिये जा सकते हैं कि बाद के कों में अ कहीं और जहां करों नेतृरत का प्रश्न जठता था, किस प्रकार गोपी जी निष्टुरा के साथ अड़ जाते थे। यह सब आम और पर कविस के लिए 'समहर्' देहते की आयरपक्ता के नाम पर तथा कविस की 'बुद्ध करने' के नाम पर किस जाता था।

ऐसे भे गामी जी, समय गुजरों के साम-साम बड़नी हुई जन-जाएति और जनता की मांगों के माय सरह-तरह में सामभेन बैठा सेने में समभे, संपर्क के तरीकों पर तालमेल बैठा सेने में समभे, सेकिन ऐसे मीकों पर अक्षरका निर्दे जहाँ जनके हाथों में आन्दोलन के मुन्नों के बने रहने का सनात उठता।

मेरे यिचार से इससे पुन: उनकी दुहरी भूमिका सामने आती हैं। राष्ट्रीं क्यापीनता प्राप्त करने के लिए जन दबाव को बढ़ाना और उसे उत्मुक्त करण, किन्तु आन्दोलन और उसके निद्देशन को अपने नियंत्रण में रताना, जिनहीं ऐतिहासिक विश्लेषण की दृष्टि से अयं था राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के निद्धीं और नियंत्रण में रताना।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने १६४० के आरम्भ में, द्वितीय विस्व युद्ध के आरम्भ होने के फीरन बाद, गांधीवाद पर एक प्रवंध जारी किया था। उन्ने गंगाघर अधिकारी ने लिसा था और आज भी वह भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोतन में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा की गयी गांधीवाद और उसकी भूमिका की सबसे व्यापक मीमांसा है। (१६५६ में ई. एम. एस. नम्बुद्धिपाद द्वारी लिखित "गांधी जी और उनका वाद", एक व्यक्तिगत प्रयास था)।

उक्त मीमांसा का मूल सूत्र यह है कि गांधी जी और गांधीवाद ने अपने पहले चरण में, अर्थात प्रयम विश्व युद्ध के बाद के असहयोग आन्दोलन के काल में, एक प्रगतिशील, यहां तक कि जंगज्ञ, निम्न-पूंजीवादी भूमिका भी लदा की। १६३०-३३ में गांधीवाद अपने इतिहास के चरम बिंदु पर पहुंच गया, किन्तु साथ ही राष्ट्रीय पूंजीपित वर्ग के साथ धुल-मिल गया। बाद के वर्षों में (अर्थात १६४० के आसपास) गांधीवाद अत्यंत हासोनमुख हो ग्या और पूंजीपित वर्ग के हाथ में आत्मसमपंण और तोड़-फोड़ का हिययार भर रह गया।

उक्त मीमांसा विषय की एक वैज्ञानिक और वस्तुनिष्ठ मीमांसा है, जी वड़े प्रयास के साथ लिखी गयी है और आज भी बहुमूल्य है। किन्तु स्पटतः १६४० से १६४८ के बीच की गांघी जी की नीतियां और कार्य इस मूल्यांकन की पुष्टि नहीं करते कि गांघीवाद १६४० तक सर्वथा निषेवात्मक वन चुका था। सो, पुनः वह हमारी पकड़ से बच निकले।

सोवियत संघ पर नाजी हमले के बाद हमने युद्ध का चरित्र-निरूपण लोक

युक्त के रूप में किया। फलतः हमारी पार्टी की लाइन और नांग्रेस द्वारा शुरू किये गये अपस्त १९४२ के संपर्य के बीच गैदा हो गये क्टिय के कारण गांधी जी और कांग्रेस के साथ हमारे सम्बंधों में नये तनाव उठ कड़े हुए। इक्के बाद ऐसे सर्वेषा नते, जनसे हुए और अन्तरवासित परनामन के साथ मुद्योतर काल आया, जिसके फलस्वरूप देश विमाजित हो गया तथा मारत

और पाकिस्तान के दो स्वाधीन राज्यों की खरिट हुई । इस काल में गांधी जी और मारतीय कम्मुनिस्ट पार्टी के सम्बंधों के दोन में मुख्य पटना थी गांधी-जीधी पत्र-व्यवहार (पी. सी. जोशी मारतीय कम्यु-निस्ट पार्टी के उस समय महासचिव थे)।

। पर भाषा के उस समय महासायव था। साव इतने समय बाद उस पत्र-ध्यवहार को पढ़ने पर यहा लहुवा सगता है।

िरस्य ही हमारी बोरू-पुढ वाली साइन तथा यह मंत्राय कि पाकिस्तान की मांग भारतीय मुखलमानों की बनवादी, राष्ट्रीय मांग है, गांपी जी के गले के नीचे नहीं उत्तरती थी और उन्हें विरक्तिकर लगती थी।

दिन्तु इन राजनीतिक विषयों पर दोनों व्यक्तियों के बीच कोई विचार-विषयों हो तकने के पहले ही गांधी जी ने जोशी के वास भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को नैतिकता (!) और ईमानदारी (!) के बारे में डुख सजात पेरा किये, जिन्में हुए प्रकार के नासमम्प्री के सवाल भी शामिल वे कि नया कम्युनिस्ट पार्टी वाने सदस्यों को योगांस साने को मजबूर करती है।

अगर गांधों जी की हमारे राजनीतिक मंतव्य विरक्तिकर लगे तो ग्रह विजक्ष सही और जायन या कि गांधों जी के सवात जोगी को और जायन या कि गांधों जी के सवात जोगी को और जायन विरक्षितर सगते। विकास कि मार्थी को ने अपने जीवन के जीवन वर्गों में कम्युनिस्टों के बारे में कियते गहरे और अयोगनीय पूर्वप्रद कितात कर तिये थे। इस प्रकार सह पत्र-व्यवहार समुत्रक कम्युनिस्टों और भारतीय कम्युनिस्ट पूर्व की नेतिकता (!) के सवाजों पर है। इसमें किसी राजनीतिक मंसते पर

पार्टी को नैतिकता (1) के तवालों पर है। इसमें किसी राजनीतिक मेसले पर शिवार नहीं हुआ है।

पर कहे रेना बांधनीय और आवश्यक है कि गांधी जी द्वारा उठाये गये

नैतिक मसनों पर ओशी के उतार किसी भी स्वतंत्र और निरास हरिक्कोण से वह सह सेना बांधनीय और आवश्यक है कि गांधी जी द्वारा उठाये गये

नैतिक मसनों पर ओशी के उतार किसी भी स्वतंत्र और निरास हरिक्कोण से बहे समान है। गांधी जी ने अपने एक पत्र में सह स्वीकार किया कि का के क्या मार्टी के सार्टिक वायमों के बारे में पूर्णकः

का वे क्या मार्टीय कर्युनिकर पार्टी के आर्टिक वायमों के बारे में पूर्णकः

नैतिक मंदी क्या के स्वीकर कर तेने में कार्ट में पूर्ववहीं वे पुस्त होता वो मुफे

वायके जवारों को स्वीकर कर तेने में कोई हियक नहीं होती। तेनिक मेरी

मुक्तिल ईमानदारी की है और मैं आपकी सहानुभूति चाहता है। ...मैं मंगी-कार करता है कि मैं पूर्वप्रहों से यस्त है।"

जोशी ने गांधी जी द्वारा उठाये गये स्वातों की जांचन-पराने के निर्माधी जी और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी दोनों के विश्वासपात्र स्वतंत्र निर्णायकों की नियुनित के लिए अनेक प्रस्ताय रंगे। गांधी जी ने ही सुन्तव को स्वीकार नहीं किया।

इसमें लोई संदेह नहीं कि यस्तुतः इम कल्ट्यायी पत्राचार के बाद भार तीय कस्युनिस्ट पार्टी ही नैतिक इंटिट में निष्कर्लक रूप में सामने आयी, महासा गांची नहीं।

ं किन्तु तत्कालीन ज्वलंत राजनीतिक प्रश्नों की दृष्टि से पत्र-व्यवहार ना कोई खास महत्व नहीं या ।

: 9:

अभी तक हमने राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आन्दोलन के संदर्भ में गांधी जी और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के व्यापक प्रश्न पर विचार किया है। इस प्रश्न का एक और पक्ष है जिसका विवेचन जरूरी है।

हमारी पार्टी का यह विचार या—और ठीक ही या—िक राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए भारतीय जनता के संघर्ष में उसकी एकता निर्मित करने की समस्या बुनियादी तौर पर देश के भीतर साम्राज्यवाद-सामंतवाद और उन बन्द सामाजिक तत्वों के खिलाफ जो साम्राज्यवाद का समर्थन करते थे, भारत में साम्राज्यवाद-विरोधी वर्गों की एकता कायम करने की समस्या है।

भारतीय परिस्थितियों में लागू करने पर हमारी स्थिति यह यी कि हमारी दायित्व, राष्ट्रीय अन्दोलन का दायित्व, यह था कि मजदूर वर्ग के नेतृत्व में मजदूरों और किसानों की सुदृढ़ मैंत्री का निर्माण किया जाता जो अपने साथ निर्माण जीपति वर्ग को तथा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के साम्राज्यवाद-विरोधी तबकों को ले चलती हो (मैं इस विषय पर अपनी भ्रांति से संबंधित मुद्दे की दुवार चर्चा नहीं करूंगा कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के कौन से तबके साम्राज्यवाद विरोधी थे अथवा नहीं थे, तथा उनका साम्राज्यवाद-विरोध किस हद तक और कितनी मात्रा में था, आदि)। मैं इस बात को लक्षित कर रहा हूं कि राष्ट्रीय एकता की हमारी अवधारणा युनियादी तौर पर वर्गों की—साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी वर्गों की—मैंत्री की अवधारणा थी। और हम यह मानते थे कि इस मैंत्री को साम्राज्यवाद का तथा भारत में उसके सामंती मित्रों का मुकाबला करना था।

- ॰ ॰ ॰ च्या यह समभ्रवारी; समस्या का इस तरह प्रस्तुत विया जाना, सही धारी यह सर्वेदा सही था।

पर यह तथ्य अपनी जगह कायम है कि जब कोई किशी पिछड़े देश में सहाकू बगों को एक्सा कायम करने बनता है तो वह पाता है कि मुगों पुराने कतीत के हातहाल ने जन बगों को ऐसी अपगित जमातों, श्रीणयों और सगायों मैंनिकारित कर रहा है, जो उस वर्गमंत्री की आरपार विदीण कर देते हैं जिसका हम निर्माण करने पत्त है। ये सामाजिक विमाजन और सगाय अस्थन्त भीमह, गहराई तक मुलबड कीर दह होते हैं।

यदि हम सामान्य से हिसिष्ट पर आ जायें तो नित भारत की आजादी की मंजित तर से जाना था, यह पहले से ही धर्म (मुख्यतः हिन्दू और मुस्तिम) डोंगें विभक्त था, वह जाति डारा विभक्त था, म्हुस्तता और अस्टुख्ता डारा विभक्त था, वह जनजातीय और गैर-जनजातीय लोगों में विभक्त था, वह असंस्थ भोगाओं में विभक्त था. आदि ।

सन तत्य से स्थिति और जटिन हो गयों भी कि सामान्यवाद शाम तीर गर, और विदिश्व सांझाज्यवाद साम तीर पर, जनता के एक तवके को दूसरे के सिनाफ सुझने के लिए, उनके भीच संघर्ष महकाने और यझने के लिए, राष्ट्रीय क्यांधीनता के लिए संघर्षता स्तितों को गोहने कोड़ने और परास्त करने के लिए पिछुई देतों में ऐसे किमाजनों को गदा उपयोग करता था (नैया कि वह आज भी करता है)। ब्रिटिन साम्बाज्यवाद तो "पूट डालो और राज्य करों" के लिए सदा किस्तान रहा है।

्रिपर्ने पर वास्तिकता पर किस हुर तक ठोस रूप से विचार किया? इसमें बसने देश के स्वातंत्र-अधियान में ऐसी समस्याओं के ठोस, संक्रमण-कानीन, हल (पूर्णे हल तो केवल समाजवार में ही समस्याओं के उसे सह भी संवे अवाक के बादी निवानने के लिए दिल हट तक यत निव्या?

प्याप्त के बाद) निवालन के लिए किसे हद तक मत्त किया ? ... मुक्ते मय है, निरूचय ही बहुत कमा।

पूपा नहीं है कि हमर । आरतीय स्तावेकों में इनमें से कुछेक का उल्लेख नहीं हिम्म । इसने उल्लेख किया । आरतीय कम्युनिस्ट वार्टी के संवर्ध के कार्यक्रम के मध्यित (१९६०) में अकूरों । पर एक वंड बार १६वर्स "जाति प्रया में शिंदर इसकार की जातीय विवयताओं के पूर्व उन्मुलन" की मांव की गयी में । उसमें "सारे नाग-रिकों की पूर्व समानता की, जाहे के किसी भी लिंग, पर्म और जाति के क्यों न हैं", मांत की गयी में । कार्यक्रम के मस्तिवंद में "राष्ट्रीण अल्यांत्वकों तथा उल्लेख के अधिकार को सामित्र के अधिकार को सामित्र के अधिकार का विवक्तर भी शामिल

हैं", बल्लेख किया गया था, किन्तु यह नहीं स्रद्ध किया गया या कि वे

"राष्ट्रीय अस्तर्यस्पक" कीत है जिन्हें आहमनिर्मय के अधिकार का प्रसीत करना है।

निल्लु हम जिन समी को जार्द्धाम-जनवादी माधारणकाद-निरोगी सोर्ने हैं साने के लिए संघर्ष कर रहे थे, उन्हें एकता में योपने के छद्देग से इन क्लि जनों को दूर करने के लिए हमने स्थवहार में क्या किया ?

हमें रागी बात कहनी चाहिए और आरम-आसीचना करने को तैबार प्रत चाहिए। १६४० के बाद के काम के अमाना (अब हमने कोमीं का स्वान उठाया और यह भी ऐसे तरीके से और उपयोगी मही माबिन ही सका) हनते इन समस्याओं पर सम्भीरता से कोई स्यान नहीं दिया।

हमें अपने यादे में आपने उस व्यवहार के आधार पर निर्णय करना है। ^{जी} भारतीय स्वामीनता की प्राप्ति के पहले कम से कम दार्द दशकों तक ^{पतना} दहा ।

और, हमारे स्पयहार में यह सममदारी परितालत हुई कि अगर हमें मजहरों और किसानों को जनकी वर्गमत मांगों के लिए गुम्हारू तरिके से सड़ते को संगठित किया और उन्हें नेतृत्व प्रदान किया (जो निश्नव ही हमने किया और जिसका श्रेप लेने का हमें पूरा अधिकार है), तो धर्म, जाति, अस्पृद्यता, भाषा लादि पर आधारित विमाजन कालांतर में किसी न किसी प्रकार समान्त हो जायेंगे। यदि सही शब्द का प्रयोग किया जाये तो यह जुमारू अर्थवाद था।

हमने इस बात को कभी सीचे नहीं कहा है, किन्तु अगर कोई निष्क निर्णायक हमारे संपूर्ण कार्यकलाप और आन्दोलन के आघार पर हमारें ^{बारे} में निर्णय करे तो यह यही कहेगा।

इस माने में क्या उस भारतीय एकता के निर्माण के दायित्व की गांबी जी की समभदारी, जिसके लिए उन्होंने भी अपनी पूरी दाक्ति लगायी, क्या हमारी समभदारी से कहीं अधिक समृद्ध नहीं थी ? क्या वह इस दायित्व की जटित ताओं और पेचीदिगियों को हमसे बेहतर नहीं समभते थे ?

उन्होंने सारी जिन्दगी इस हद तक हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अभियान चलाया और संघर्ष किया कि अन्ततः इसी ध्येय के लिए शहीद हो गये।

अगर राय के उन दिनों के शब्दों का प्रयोग किया जाये जब वह आग उगलने वाले 'वामपंथी' कम्युनिस्ट थे, तो क्या ये सब गांघी जी के 'वार्मिक पुनरुत्थानवाद' के प्रयास थे ?

खुशिकस्मती से हमारे लिए परोक्ष रूप से इस सवाल का जवाब स्वयं लेनिन ने दे दिया है।

ा भारतीय क्रान्तिकारियों को २० मई १६२० को भेजे गये एक संदेश ^{में} लेनिन ने कहा था : "हम मुस्लिम और गैर-मुस्लिम तस्वों की घनिष्ठ मैत्री ^{का}

स्वागत करते हैं। हम हृदय से यह चाहते हैं कि इस मैत्री को हम पूर्व के सभी मेहनतकडों में ब्याम देखें।" (पूर्व में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन, पृष्ट २४८)।

इसमें तदेह नहीं कि लेनिन ने इस संदेश में जिस हिन्दू मुस्लिम एकता का स्वागत किया है उसका संदर्भ स्वराज और खिलाफत पर आयारित भारतीय जनताकी एकता से था। भौर सेनिन इस एकता को ऐसानहीं सममते थे वो पामिक अंपविस्वास और रहस्पवाद को सुदृढ़ करेगी विल्क ऐसा समऋते ये जो पूर्व के सारे मेहनतक्यों की एकता के लिए लामकारी होगी।

लेनिन ने दोनों के बीच सकारात्मक रिस्ते की देखा और उसका स्वागत क्या, न कि दोनों को एक-दूसरे के विरोध में सड़ा किया।

गांधी जी ने उसी उत्साह और इड़ता के साय अस्पृत्यता के उन्मूलन के तिए संपर्यं चताया । उन्होंने इस प्रयोजन के लिए एक पृथक संगठन, हरिजन

हमने अस्पृत्यता के जन्मूलन के लिए एक सीय क्यों नहीं कायम की ?प्रामी-वतों में क्षेत मजदूर यूनियन और किसान सभाओं तथा शहरों में ट्रेड यूनियनों के सहयोग के साम इस प्रकार की लीग से अछूतों पर लदी हुई सामाजिक अस-मानता और अन्याय की हजारों समस्याओं को हल करने में अपार सहायता मिली होती। ग्रहरी और ग्रामीण सर्वहारा की हैसियत से अछूत समुदाय की जो स्वित है उससे वे सारी समस्याएं न तो उस समय सीचे संबद्ध थीं, और व वान है।

चहां १९३० के हमारे कार्यक्रम के मसविदे में अस्पष्ट रूप में राष्ट्रीय अल्पसंस्थकों के आत्मनिग्रंथ के अधिकार की चर्चा है वहीं गांधी जी ने भारत की नापा ममस्या की ठीस रूप में उठाया ।

उन्होंने तवातार तीन दशक तक भारत की ब्रादेशिक भाषाओं के पूर्ण विकास के लिए अभियान चलाया; देश के विभिन्न भाषा-भाषी लोगों की स्वीच्छक महमति के आधार पर 'राष्ट्रभाषा' के रूप में हिन्दुस्तानी के प्रवार के तिए अभियान चलाया (पुनः, हिन्दी नहीं; क्योंकि उन्होंने हिन्दी और उर्दू पर आधारित हिन्दुस्तानी को हिन्दू-पुस्लिम एकता कायम करने के एक सामन के रूप में देला); स्वा अंतर्राष्ट्रीय संपन्न के माध्यम के रूप में अंग्रेजी के व्यवहार के जिए अभियान चलाया। उन्होंने भारतीय तक्ष्णोंको क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से देख-मित्तपूर्ण शिक्षा देने के उद्देश्य से विद्यापीठ कायम किये। उन्होंने सबते पहले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को भाषाबार आधार पर गठित करके मारतीय राज्यों के भाषावार पुनर्गटन का पुनांतुमान किया और उसके लिए

भाषा समस्या के इन सारे पहलुओं पर उन्होने वे नीतियां तैयार की जिन्हें

भाव हम अनवादी, सता भारतीय अनतव और एतता के लिए आगर यती मानते हैं। हमने इस समये में क्या जिला ?

-

मांभी की ने आदिवासियों के बीच १६२० में काम करता युरू कर दिन भा। उन्होंने इस कार्य के लिए आदिवासी मेंना संय नामक संगठन इन्त किया। उन्होंने आने कुछ सर्वभेष्ट अनुवादियों की आदिवासियों के बीव आशीयन साम करने का भार सोग दिया। हमारी आंग्रें इस समस्या के बी (इसके आदिक पत्त के बलावा दिस पर हमने पहुंचे में भी ज्यान दिना है) अभी विल्कुल हाल में ही सानी है।

एसी परिस्थितियों में उस कि जिल्लि उद्योग के सकी उलाइन मार के यामीय उद्योगों और दम्मकारियों को दिन्छ किये वाल रहे में, गांधी के ने यामीयोगों की रक्षा करने और उन्हें बोल्माहन देने पर जो जोर दिन व् निस्चय ही सबैया प्रतिकित्रालादी नहीं था। उसका एक साम उन्नित्तरीं पक्ष भी या, जिसका सनाराहमक मुन्य था।

और इस तरह में संमार की मचने उलभी हुई सामाजिक इसई—अर्पने भारत माता—की अनंग्य ऐसी गामाजिक-आधिक और सांस्कृतिक समस्याओं का उल्लेख कर सकता हूं जिन्हें गांधी जी ने पूरी ईमानवारी से उज्जा। उदाहरणार्थ हमारी स्थियों को रमोई छोड़ कर सकिय राजनीतिक जीवन में लाने में गांबी जी को—किसी भी दूसरे जीवित या मृत भारतीय से ज्वास— श्रेय है।

यह सब कहने का निश्चय हो यह असं नहीं कि इन समस्याओं से संबंधित गांची जी के सिद्धांत और समाधान वैज्ञानिक थे, और यह कि हमें महज इतता ही करना था कि उनके पीछे लग जाते और उनके अनुपायी बन जाते। मैं बी बात कह रहा हूं, यह तो उसका मसौन भर होगा। उनके दार्शनिक वैचारित हिण्टिकोण की सीमायें, वर्गेतर मानवतावादी की सीमायें, इन समस्याओं के उनके समाधानों की भी सीमायें थीं। और इसी कारण, उनके ध्येयनिष्ठ उत्साह और संगठन क्षमता के वावजूद, ये अभी तक हल नहीं हो सकी हैं।

पर मेरा कहना यह है कि हमने इन समस्याओं की उपेक्षा की। मेरा कहना यह है कि वह इनसे रू-व-रू हुए और इनका मुकावला किया—कुर्दे का (जैसे भाषा समस्या का) सही तरीके से, अन्य का, उतने सही तरीके से नहीं, किन्तु फिर भी ऐसे तरीके से जो भारतीय जनता की जनवादी, साझा ज्यवाद-विरोधी एकता स्थापित करने में सहायक हुआ। और इस प्रकार की एकता के विना स्वराज असंभव था।

मेरा कहना यह है कि हमें इन समस्याओं के स्वयं अपने वर्गगत स^{मा}

थान, धंकमणकाक्षीन समाधान, सूत्रित और निर्धारित करने चाहिए थे, तथा उन्हें उत्साहपूर्वक कियान्वित करना चाहिए था, जो कि हमने नहीं किया।

अपने सारे मध्यपुनीन सामाजिक सिद्धातों के बावबूद, जो समकालीन संदर्भ में वर्ष महुयोग के सिद्धान्त थे, गांधी जी अनेक महुत्वपूर्ण मामलों में भारत की हमसे बेहतर जानते और समकते से 1

न मान्ते ने ओर न सेनिन ने कभी यह कहा है कि कोई कम्युनिस्ट पार्टी किंक इस कारण अपने देश की परिस्थितियों को गैर-कम्युनिस्टों से ज्यादा अन्धी तरह समझती है कि उसने मानसंबाद को स्वीकार कर विचा है। मानसं-याद-नेनिनवार सामाजिक मामुंच को समझने और बदतने का सबसे बैजानिक,

वाद-निनिज्वाद सामाजिक प्रमापं को समक्षते और बदलने का सबसे बेतानिक, सभी फ्रांतिकारी, दृषिधार है। इसकी स्वीकार कर लेने पर हम अपने दायियाँ को पूरा करने के सक्षेत्रण्ड हृषियार से लीस हो जाते हैं। किंतु वायियाँ को पूरा करने में बास्त्रिक सफ्ताता शीवन की सवादयों में हमारे पारंतत होने तथा मामर्ववाद-नेतिनवाद के साधार पर जनका सही विश्लेषण करने पर निर्मट करने हैं। यह विश्लास करना चेत्रन या अवेतन अहंबाद है कि युकार-कुला कर पह कहने ही था हिसास करना चेत्रन या अवेतन अहंबाद है कि युकार-कुला

न पह कहन से कि हम माक्शवादी-सीननवादी है, ऐसी पारमतता स्वतः प्राप्त हो जाती है। । बस्तुतः ऐसा हस्दिक्शेण वस विनम्नता और कठीर आस्मासीवनापूर्ण रुख

से मरहात है, जो मानसंनार-सेनिनबार का महत्वपूर्ण सीर कपरिदार्थ तस्त्र है। एमा कोई मानसंनार नहीं जो जीवन को बास्तविकताओं तथा उनके जाना कर, जान परिवर्तनों का अन्तर्वसंग्री का महत्वाम, पूरभतम जीर सर्वाधिक कर्मठता-पूर्व अभ्ययन पर बायारित न हो। कोई कम्युनिस्ट मार्टी अपने कार्यकताय में जो सबसे बड़ी मत्रवियां कर चण्डी है उनमें से एक हैं सर्राक्षित संबंधों में ब्रोनियारी परिवर्डोंने के लिए

हिनया जानती है कि महात्मा जी दुखी और मीहमन इन्सान की मौत

मरे। यह पानीवन एक महान भागानारो और भयत कार्यनती रहे। किनु वा उन्होंने उस आजारी का मृह देखा, निसके विष् उन्होंने आभी मरी में बीट संपर्य किया भा और कुट उठावे थे, तो उन्होंने कहा कि मेरी ऐसी तीई कुट नहीं जिसके लिए पण ज्यादा दिल शीर्य।

रतापीन भारत में पदभार संभावने के धाद जब नेहम जी समेत दर्ग पनिष्ठतम सहयोगियों ने जनमें जस अवसर पर सदेश सांगा सो उन्होंते वह कि मेरे पास सोई सदेश नहीं, और उन्होंने कोई सदेश नहीं दिया।

यह गणमुत्र उनके शीयन का मवने दुनद और अन्तिम अंतिवरीय मा। कहाँ से यह साया ? इमका स्वभूत क्या भा ?

यह मुख्यतः दो सोतो से आया, दोतों ही उनको स्वक्ति के रूप में ^{और} उनके मिशन को समभने के लिए ब्रह्मधिक अर्थपूर्व है ।

सबसे पहले, आजादी विभाजित भारत में आयी, यह हिन्दू-मुस्तिम वर संहार में बहाये गये भातृपात-जन्म रक्त-प्रवाह में आयी, यह हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा सुटपाट सेकर आयी।

उनके जीवन का एक सबसे बड़ा स्वप्न—हिन्दू-मुस्तिम एकता—ब्बह्त हैं गया, राख में मिल गया और हिन्दू-मुस्तिम एकता के बिना गांधी जी के ^{तिर्} स्वराज बेमानी था।

पर बात इतनी ही नहीं थी। उन्होंने देगा कि उनके सहयोगी और कनिष्ठ लोग गहियों पर पहुंचते ही अपने और अपने मित्रों के लिए धन-संप्री के अशिष्टतापूर्ण और अक्सर मुजरिमाना संग्रह के लिए अपनी सत्ता का प्रवेष करने लगे।

मानसं और लेनिन द्वारा प्रतिपादित पूंजीवाद के निर्मम नियमों को पत्छा नहीं जा सकता था। ये हठात जीवन में उतरे। पूंजीवादी स्वाघीनता के बार पूंजीवादी संचय गुरू हुआ जो षृणास्पद और कुत्सित के सिवा कभी और कुछ हो ही नहीं सका।

किन्तु चूंकि वह, अपनी विचारघारा और नीतियों की वस्तुगत सीमाओं और पेचीदिगयों के वावजूद, अपने स्वप्नादशों के प्रति अत्यन्त ईमानदार और उत्सुक थे, इसलिए उस आजादी के फलस्वरूप और उस आजादी के दौरान जिसके लिए वह सदा यह समभते रहे कि वह लड़ते रहे हैं, इस तरह के विकास की वह अपेक्षा भी नहीं करते थे, कामना करना तो दूर रहा।

इसने भी उनको हक्का-बक्का कर दिया। कारण कि वह 'अपने' अमानतः दारी के सिद्धान्तों में सचमुच विश्वास करते थे जिसमें समाज का सम्पत्तिधारियों और सम्पत्तिहीनों में विभाजन निश्चय ही निहित था (और उन्होंने इस बित को कभी छिपाया नहीं), किन्तु वह सम्पन्न लोगों से निर्धन लोगों के प्रति एक

सान करोबर के, ईगाफ के, न्याय के बीव का भी तकाबा करते में जिसे कह 'अमन्तरपारी' कहते में । भारतम में वह 'स्थानरपारी से इस बात में विस्तास करते के कि उनके बनुसायियों ने उनती धारसीहन 'अमानतदारी' के न केवस समृति बाने परा को क्षीक जाने करते हैं

गर्याति वाने परा को, करिक जनक करा भारताहित 'असानतरारी' के न केवल गर्याति वाने परा को, करिक जनक कर्नाय काने परा को भी, स्रीहार कर पर ऐसा होना नहीं था। वे सीन भारताहोंन यूंगोबारी थे और उन सोगों नै, जैने ही स्वाधीन भारत ने सता के परों पर स्वयं को सुरक्षित पाया, अमा-न्यारी के क्लोमों को निष्ठुरता के साथ दुरुश दिया।

नतारी है बर्नधों को निष्ठुरता के साथ दुस्स कि मुस्सत पाया, अधा-पायों नी को इस बाद का श्रेन हैना होना कि हम दुन्हें मोहमंत्र के बादहर आजिसी सीय तक कह अपने निज्ञान कर कटे रहे। अंदिय निर्मों को जहाँने इस आसम के बायशायिक स्मष्ट बयान देने सान कर दिन्हें के कि साम की मोस मेरी अनेसाओं के अनुक्य गरीसों के प्रति

साने बर्नेक्सों को पूरा नहीं करते, तो मैं गातावह के बहन का प्रयोग करते से नहीं दिक्या, और उनके सिलार जनता में कमरा हस्तेमान करने का बातावा करने में बोदे नहीं रहेंगा, जैशा मैंने बिरोपी गामन के सिनक किया था। उनका का नायक का एक खेतिक बमान हमी संकर्ष में या कि मैं यह रहीं बाहुना कि भारतीय राष्ट्रीय करोजे का इस्तेमान सत्ता के बान के के ऐरे बीहन मैं यह बाहुना हूं कि उने विचारित करके जनता की बीता करने बाहे नगरन में स्थानरित कर दिया जाया। बहु यह नहीं बाहुने में कि 'उनकी' कार्य स्वापीय सत्तातीनुत यानतीकों हारा कनुवित हो। बहु देश के दियन-नाराक के निए उने बनांक के स्वापन के है।

मैं उनके एक बक्तव्य की तिवस मैं वहुँत उन्होंत कर बुक्त हूं, उद्देत वरिक बच्ची बात समान कर मा । यह बक्ताव उन्होंने अर्थेओं इत्य मास्तीयों वृह्म में में मता के हस्तावरण के टीक पहले जारी किया था : "मत: पनियों में सरीवों के सीत अर्थे कर्तव्य की महसून कराने के सामने में सरपाद्य का बसा स्थान के ?

"गांधी जी का उत्तर: वही जो विदेशी साता के खिलाक है। सत्याग्रह मार्वकोच प्रयोग के सारक नियम है।" (हरिकक, क्षेट्र मार्च १९४६)। ऐंग वे गांधी जी। बहुन केवल एक ऐने व्यक्ति थे जो किसी पूर्ण एक यार तथा होता है, बहुन केवल महूट साहत और आस्थाओं बाते व्यक्ति थे, बीत दर्व-हुचने और उत्तीक्ति वजों के साथ तायारण्य की अपनी उत्कट

भावता के बाता वह अपने को कत्वानातीत रूप से बास सकते और बदस साने की समय वह अपने को कत्वानातीत रूप से बास सकते और बदस साने की समया रहते वाले स्वतित थे। यदि वह एक हत्यार की बीसी का निवाला न बन गये होते, तो उन्होंने

मया विषा होता ? इस प्रस्त का कोई भी सलग मही दे सकता, किलु एन बन

में निव्यित स्व से जानता है। वैसे, धनुनय और ऑडमा में अपने सम्ल

विद्याम के मानदूर, उन्होंने धनिकां हारा मगीनों के पहलता और मीनुता

ही तरीके में ।

भरे भीषण को सभी परीकार व किया होता, यह पनिकों के सिलाक कर गरीमों के पक्ष में खड़े होते, यम सब्द कही जैसे हम खड़े होते हैं, बहिह अति

गांधीवाद : स्वतंत्रता के बाद मोहित सेन

दो इत्तक से अधिक समय तक भारत पर दे लोग शासन कर चुके हैं जो या सो से साथी औ के जिय्य में, या जो स्वयं को महात्मा गांधी का अनुपायी कर कि करते हैं। जहां यह उचित नहीं होगा कि उनके सारे पार गांधी जो के साथे मह दिये जाए, बहुत यह अवेशानिक होगा कि उनकी निष्पतियों हारा गांधी जो के साथे मह से साथ करते का प्रयापन कि साथ जाये। गांधी जी के बाद का गांधीबाद करते का प्रयापन कि साथ जाये। गांधी जी के बाद का गांधीबाद करते का प्रयापन कि साथ जहां वा साथ ही है। आदितर यह बही कनोटो है जिसे सावसं और सोनित के अनुपायी सहयं स्वीकार करेंगे।

यह दतीन दो जा सबती है कि गांधी जी ने जगतर १८४७ में स्वाधीनता दिवा के अवसर पर आकरायाणों पर संदेश देने से इनकार कर दिया था और हुए पा कि "धीतर सर्वेन् अंक्टगर है।" यह कहा जा सकता है कि उन्होंने बार्श कि "धीतर सर्वेन अंकटगर है।" यह कहा जा सकता है कि उन्होंने बार्श कि सिरायत का विभावन उनवी साथ पर ही होंग—"एक ऐसी पविच्या कार्य है हिंग पर ही, हातांकि उनवें प्राप्त कि सिरायत के विभावन के बाद हुई। यह भी कहा जा सकता है कि गांधी जो ने नेहरू और पटेंड होंगों के जिट्ट में सिरायत के व्याद हुई। यह भी कहा जा सकता है कि गांधी जो ने नेहरू कि एक अव्य तथा और भी ध्यापक सित्याय अवहा आवोधन दिवेंने की सिराय से ध्यापक सित्याय अवहा आवोधन दिवेंने की साथ से से ध्यापक सित्याय अवहा आवोधन दिवेंने की साथ से से ध्यापक सित्याय अवहा आवोधन दिवेंने की साथ से भी अवहा का स्वाद है की गांधी जो ने काहेब को भंग कर देने और उन्हें एक अगार देने लो है नवह संघ में यदल देने की हिनायत की है।

यह सब सन है। और यह निश्वय ही क्यक्ति के रूप में गांधी जो की महानना का सवा उनके उत्तर आशीर्वाद का प्रमाण है। यह नवे सिरे से मह निद करता है कि जब कोई किमों साग इतिहास-निर्माता की भूमिका का टीव विस्तेषण करता है तो व्यक्तित्व की महस्या कितनी व्यक्ति होती है और कर देना है जो अपने खुद स्वावंत्रसम्बा स्वता है। यह उन लोगों को भी वेनकाव मावा का उपयोग करते की कोशिस करते है। किर भी इस यान की परीक्षा करता जिल्ही है कि महाभा शेंगी की शिक्षाओं में ऐसी क्या कील की जिसके कारण जनके कृदा समेथेल अहुसी (भीर गत भी ऐसे जो दो दशक से ज्यादा समय तक उनके अहुसारी ही) भागत की पूंजीसाद के पथ पर हैन कि आजि।

यहा हमारे मामने एक नाजुक विशेषाभाग जाता है। यस्तुतः हर् बन्दारमण अन्तिविधेष सामने आता है। यह यात मिद्ध करने के निए गांगी की की रचनाओं में असंस्य उद्धरण दिये जा मकी है (जिन्हें प्रायः पूरा का पूर श्रीफेसर निर्मल कुमार बोस ने संबहीत कर हाला है) कि वह पूंत्रीवादी स्वत्या के विरुद्ध थे। सन तो यह है कि यह यहन ही तक्षीममत तरीके से मिद्ध कि जा सकता है कि यह आगुनिक मन्यता के ही विरुद्ध थे। उनके हिन्द स्वराव में, जिसे यह अंत तक अपने आदर्श के रूप में मानते रहे, रेलवे, अस्पतात और भाष्ट्रनिक सभ्यता के सारे जपकरण भीतान की ईगाद थे। वह उन चीन के जंब विरोधी ये जिसे यह अधिभिकता की पामन दौड़ महते ये। उन्होंने सास तौर पर तेज बीद्योगीकरण को जवाहरताल नेहरू से अपने मतनेदों नी मूल विषय बताया था। यह भी जानी-मानी बात है कि संसदीय प्रणाली और चसके शंकुवत ढांचे के प्रति उन्हें कोई आकर्षण नहीं था। इस विषय में उनके जो विचार थे उन्हें महासागरीय परिकल्पना की संज्ञा दी जा सकती है, जिसमें गांव इस राजनीतिक सत्ता का केन्द्र और स्रोत होता, जो एक केन्द्रिक वृत्तीं में बाहर फैलती जाती। गरीबी से जकड़े भारत में समानता का एक मात्र सावन वह कठोर संयम को मानते थे। आद्युनिक, पूंजीवादी सभ्यता तेजी से वड़ते उपमोग-स्तर को आदशं मानती है; इसके विपरीत वह आवश्यकताओं की सीमित करना ही आदर्श मानते थे।

गांचीवाद की संपूर्ण विचारघारा को ध्वस्त, किन्तु उदीयमान घनी किसान तथा ग्राम-समुदाय के पुनरुजीवन की उसकी उत्कंठा का वैचारिक प्रतिवर्त माना जा सकता है। यहां "हिन्दू के उस विलक्षण निवेंद" को सतह पर उभरकर आते देखा जा सकता है जिसके वारे में मार्क्स ने अत्यन्त ममंस्पर्शी तरीके से लिखा था। प्रार्थना-सभायें, आत्मनिर्भर आश्रम, नयी तालीम जिसके दृष्टिकीण का केन्द्रविदु दस्तकारी थी, यहां तक कि अहिंसात्मक असहयोग का सन्देश भी किसान की व्यथा और आकांक्षा को—हृदयहीन संसार के हृदय को, भाव हीन स्थित की मूल भावनाओं को, किसानों की अकीम को—व्यक्त करते थे।

गांवी जी ने किसानों की भौतिक स्थिति को यथासंभव शुद्धतम वैचारिक रूप में तो अभिव्यक्त किया ही, साथ-साथ इसके अलावा कुछ और भी किया। उन्होंने किसानों के स्वतंत्र संघर्ष का जवर्दस्त विरोध किया और उसका विकल्प भी लाये। जन-संघर्ष के सवाल के प्रति उनका पूरा हिन्टकोण—और बहुत सी

क्षत्रों के बनाका—उन्हें विकास कारी के रूप में नेता करता है, ययदि वरण्यराव है के विकास में कि एक में नहीं। उनते उत्तक्ता, जन संवर्ष के समय जन हात्त सर्वेश्वर तीर पर तानताहाँ अधिकार बहुन कर निया जाना, उनने चन्त्रे और एक पाने का नेतृत्व का तरीका, सामंत्रवाद-विरोधी, जमीदार-विरोधी माहनों पर जिनानों के मंत्रवी और मंतरन का उनके हात्त सामह (वी प्रमानकार क्षण्ये के कि एक्टोर बीसात की सावस्त्रकात पर उनका आग्रह (वी प्रमानकार मंत्रवे की दिया में ते जाता है)—व सारी चीजें इसी दिया में इतिव करती है।

गाप हो, गांपी वो सारत में पूंतीकार के प्रदेश की दूगरी अनिवार्य देन— सन्द्र र स्वं—की स्वतंत्र भूमिका, जनते विकारपार तथा पानुतेय आंदोलन में जनके नेतृत को संसादना का अनवरन विरोध करते रहे। जनकी हृहवाले आत के 'वर' का पूर्व-का थी, हिन्तु दुनमें एक मधुस्तृत्य अनकर पा—मजदूर वर्ष को दुगनदारों का अनुतरण करना होता वा और आग हहतान कमी-कमी वर्षार्थ्य के पृत्तिकारी औत्तीकारण को पान्य दोह के व्वित्त थे, तो कह सकते सम्प्रांची को पृत्तिकारी औत्तिकारण को पान्य दोह के व्वित्त थे। आरत संस्थानी गृतिकारी औत्तिकारण को पान्य दोह के व्वित्त थे। आरत संस्थान नेत्र के वित्तह के दौरान "सारत कि दिनों से तंत्र रहिस्स में रोयस देशियन नेत्र के अविद्राह के दौरान "सात विन्ताय" और "अंदीकेशों को एकता" के विकास आतिसी भव-मात्र पुत्तार तहन कु को को प्रमान को युग-अना कही कभी नहीं बहै। वरहीन के का तिलाव को सराहना की, किन्तु विन्तवार की कभी नहीं, जिले वह अनने पूर्ववहीं के मारे कभी समक्र भी नहीं परिवार की कभी नहीं, जिले वह अनने पूर्ववहीं के मारे कभी समक्र भी नहीं परिवार की

गांबीवार ने एक असंभव स्वयन को अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए, किसानों दृष्टा स्तर्यव संस्पर वा विरोध करते हुए तथा मनदूर वर्ष के नेतृत्व की समावना को निष्कत बनाते हुए सारत को अपरिहार्य रूप में पूनीपति वर्ष को भीरि दिया, उन कोनों को सौंग दिया जो नीता कि विक्सा बढ़े प्यार से कहते हैं, सहस्या जी की ह्याया में ही बढ़े हुए।

गांची जी की उपलियमों की याद रखना बेगर जरूरी है। इसमें कोई सदेह नहीं कि बह स्वतंत्रजों के लिए हमारे जन संबंध से उपलब्ध प्रमुख साधायय-स्वाद-दिनसी में जर थे। उन्होंने ही स्वतंत्र सदुगढ़ कर से सादुद्धिक कर में राज्येत यादोमन की कीट मोझ कीट कांग्रेस कर में निम्म किया जन्मेंने हैं हिन्दू सामाज्यवाद-विशोध, संबंधित, मों में के कम निम्मित किया जन्मेंने हैं हिन्दू मुक्तिम एकता के निष् प्रमात किया, मारत की विविधता की मानवाद पर आपारिन प्रमुक्त एकता की रसलाता के जिल्लावण किया। अल्लिही ही रिक्र सारमणण की, हरिकत की, काल्लीय बंदाकरण के केन्द्र में बॉलिक्ट रिमा।

अगर कोई एनकी निवारभारा के स्थेत और परिमाणी की आयोगकात परीक्षा करता है, तो इसका अबे यह नहीं कि कह अनकी इन उनकीं में मदेह करता है। आत्मरकार, जैसा कि आर्था के ही कहा गया था, कि यात का स्मार्टीकरण अक्ष्मी है कि कैस और क्षी गरेशों भी के प्रस्मानिकीं ने भारत भी आज की स्थिति के सहका दिया जहां सक्तानिकाशी होड़कीं की खाया और प्रकास, तथा तिमिसक्यान होता हुआ सत्सा, मोहुर हैं।

महारमा जी की मृत्यु के बाद कीत पाचीवादी पासमें जारी हैं? कारी पारा के समीतम प्रतिनिधि के जवाहरकाल नेहरू। दूसरी पास निरोध की के सर्वीदय आन्दोलन के रूप में सामने जाती है। तीनरी पास राजा जी के विशिष्ट स्थतंत्र दर्शन के साथ स्थाधिय होती है।

जवाहरताल नेहरु में, निम्मंदेश, दिने श्रीटकोण के तहा मोहर में लिए गांची जी से बहुत गम नेना-देना था। यह अपने निर्माणकीन गर्नी में मार्न-वाद और फेवियनवाद, दोनों में, प्रभावित हुए थे। उन्हें वैशानिक नानीती क्रांति की क्षमता का आभास देश में ओर किसी में सहत पहने हो गया में हालांकि यह आभास तकनीक-तांतिक इत्यिकोण में ही मा। अंतर्राष्ट्रीय स्थिति ग वास्तविकताओं पर उनकी ऐसी परुष्ट भी कि उसी के कारण उन्होंने गुटिनिए पेक्षता की धारा की बगुवाई की और सोविषय संघ तथा अन्य समाजवार देशों के साथ मित्रता को अपनी इस नीति का मुख्य मुद्दा बनावा और साथ है साम्राज्यवादियों के साथ संबंधों को बरकरार रहा। तथा मुद्द किया। नियोजन भारी उद्योग पर जोर, सार्वजनिक क्षेत्र की स्थापना, संसदीय जनतंत्र क वेस्टमिस्टर नमूने पर सूत्रपात—ये सभी अत्यंत विविध्य अवदान हैं। इस सर्व से बहुत कुछ महात्मा जी की बोद्धिक पकड़ के बिलकुल परे रहा होगा। कि इन राजनीतिक नीतियों को अनुप्राणित करने वाली एक भावना या एक ही थी जो उस सबका प्रतीक थी जो स्वातंत्र्य संग्राम के दिनों में कांग्रेस में सर्वीत था। और इस सर्वोत्तम में निर्णायक अवदान निरुचय ही गांघी जी का धा। था सामाज्यवाद-विरोध का, स्वदेशी, आत्मिनिभरता तथा एक व्यापक अंतर ष्ट्रीयताबाद का आदर्श । इस आदर्श की पूर्ति की खोज ही नेहरू के दर्शन व नीति के प्रगतिशील पहलुओं का आवार थी।

एक दूसरा, किन्तु अधिक ठोस, गांधीवादी अवदान था धमं-निरपेक्ष जनत की अववारणा । यह एक ऐसा आदर्श था, जिससे नेहरू जी कभी च्युत न हुए और यहां वे सीधे महात्मा गांधी के पद-चिह्नों का अनुसरण करते रहे इस समस्या के प्रति नेहरू जी का दृष्टिकोण आधुनिक वृद्धिवाद और मानवताव

्र ≟ का हर्ष्टिकोण था जो गांधी जी की 'अपेक्षा रवींद्रनाय टाकुर के अधिक समीप ा या। फिर भी आदर्श वही या। यह कहा जासकता है कि गांधी जी धार्मिक ा प्रतिको नामा का वा प्रतिक स्वाप्त के स्वाप्त कर और उसे कार्येस के नेतृत्व में चलने वाले सामीता कर सामीता कर कार्येस के नेतृत्व में चलने वाले सामीता कर एक स्वाप्त कर प्रतिक स्वाप्त कर एक स्वाप्त स्वाप्त की प्रतिक साम की स्वाप्त कर एक स्वाप्त के साम वर्ग के साम वर्य के साम वर्य के साम वर्ग के साम वर्ग के साम वर्ग के साम वर्न के नहीं किया जा सकता है, मुस्लिम किसान जनता और शहरी गरीबों पर जब-र्दस्त प्रभाव नायम कर लिया। किन्तु साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि आधुनिक बुद्धिवादी और मानवतावादी हिट्टकोण से कही बढ कर गायीवादी रवैये के मुहावरे और शैली ने धर्म-निरपेक्षता और साम्प्रदायिक एकता का सदेश विशाल हिंदू जनता तक पहुंचाया !

· यह संदेस पूरी सफलता नहीं प्राप्त कर सका, जैसा कि विभाजन के काल की दुलद पटनाओं से साबित हुआ। फिर भी यह संदेश बहुत बड़ी संख्या में वोगों तक पहुंच गया और एक ऐसी विरासत और परंपरा छोड़ गया जिसके आधार पर आगे बढ़ाजा सकता है। देश के बड़े-बड़े इलाकों में बहुत बड़ी संस्था में कार्यकर्ताओं को हिन्दू-मुस्लिम एकता को दीशा दी गयी और इन कार्यकर्ताओं के लिए हिन्द्र-मुस्लिम एकता एक स्वयं-सिद्ध तथ्य बन गयी वयोक्ति यह ऐसी प्रतीत होती थी मानो भारत के इतिहास और स्वयं हिन्दुत्व के गहन-तम स्रोतों से फूटी हो । कुल मिला कर सारी जनताने तो यम-निरपेक्षता के विचार को नहीं अपनाया, किंतु बहुत बढ़े पैमाने पर लोग इस तरफ बाये वरूर। गांधी जी जिस तरह रहते और उपदेश देते में उसके कारण हिंदू सम्प्रदायवादियों के तिए यह प्रवारित करना निहायत मुक्तिल हो गया कि मुस्तिय-विरोधी विचार हिन्दूबादी हिन्टकोण और परंपरा के बाधारभूत तरव है।

मात्र वैचारिक उपदेश पर्योप्त नहीं सिद्ध हो सके, चाहे वे गांघी जी द्वारा प्रतिपादित हों या नेहरू जी द्वारा । जब तक जनता सांप्रदायकता को जन्म देने वाली भौतिक परिस्थितियाँ से मुक्त न की जाय तब तक उसका फिर-फिर जमरकर आनालाजिमी है। यह बात स्वातंत्र्य संप्राम के दिनों से कहीं ब्यापक वैमाने पर स्वायीन भारत में घटित हुई है। फिर भी विद्यले कई दसकों से धर्म-निर्फेशना की एक शक्तियाली घारामोजूद रही है जिसे गांधी जी ने मारतीय परिस्पितियों के अनुरूप विसक्षण वरीके से दाल कर मुक्त किया वा बीर नेहरू जी ने आगे बढ़ाया था। यह ऐसी घारा है जिनके लिए हमें उनका आमार स्वीकार करना चाहिए और जिसे और आगे बढ़ाना चाहिए।

ं फिर भी, यह भी याद रेसना जरूरी है कि ये प्रगतिसीस पहलू संपूर्ण नेहरू

तरः ^{कृष}

का प्रतिनिधित नहीं करों, होता मैंगे हो जैसे में पतके गुल के मेपूर्य मिला का प्रतिनिधित नहीं करते। नेहल जी भी आपमान ईमानपारी पर मेरिक्स की भी आपमान ईमानपारी पर मेरिक्स की लिए आपूर्तित समान में परितित करना पाहते में। किंदु पर भी, जैसा कि गर कहा करने में, प्रानी ही तरहरी करना पाहते में। किंदु पर भी, जैसा कि गर कहा करने में, प्रानी ही तरहरी का मान्युनिस्तों के पुराने पह खेल कहा मान्यारों से यस करा। पर नहीं गान्य रहा है एक स्वाधीन अमेनत का भी जिनाम नहीं हो। मन्य, बिता पूर्वित आमें बढ़ा जिसके दिवार पर देखानार इजारेशारिया पन्धी। नर्यों है उनके अपने तरीके, गांधीवादी सरीके, के कारण ही।

वह तरीका क्या था ? यह या अमाना दार्ग का, वर्ग महदीन का, मुख्य वर्ग बीर उसके मित्रों की कांकियों की शील और विनय्द करने का तरीना। जनकी घडदायली नरमों में भरी भी, उनका गरीका प्रायः नाफी अंगीं में त्रामूहिक राजनीतिक अभियान गरानं भा भा, पर यह भी सर्वेव नहीं। बहर हाल, उन्होंने अपने उद्देश्य का निर्मेगता के निर्माट किया और यह उद्देश्य यह प कि महनतकरा जनता की किसी स्वतंत्र पहुन और कार्रवाई की सहन नहीं किय जाय तथा, सर्वोपरि, गम्युनिस्ट व मजदूर गर्ग के नेतृत्व की किसी बैहलिक दाक्ति को बढ़ने न दिया जाय । कम्युनिस्ट नेतृत्व में कायम केरल के मंत्रि-मंडत का १६४६ में बसास्त किया जाना इसका सबसे स्पष्ट रुष्टांत है। उस सम्ब ई. एम. एस. नंबूद्रिपाद ने संक्षेप में यह कहा था कि कम्युनिस्टों का उद्देश्य उसी सबको क्रियान्वित करना है जिसका मांग्रेस उपदेश देती रही है-किन्तु वैशन अपने ही तरीके से, मावसं के शब्दों में, जन-गाधारण के तरीके से। और गई वह कार्य था जिसे नेहरू ने गांधीवादी परंपरा पर घलते हुए विफल कर दिया। अगर समाजवाद को आना है तो इसी रूप से आयेगा कि मजदूर वर्ग दब्दू बनी रहे और मेहनतकश जनता बकादार चाकरों की तरह आचरण करती रहे। बेशक, समाजवाद नहीं हासिल किया जा सका और न मजदूर और मेहनतक्ष इतना अहसान ही कर सके कि वे दवे पड़े रहें।

अमानतदारी केवल आर्थिक अवधारणा ही नहीं थी—जहां पूंजीपित या जमीदार संरक्षक की तरह पेश आये तथा मजदूर और किसान मेहनत करें। यह एक पूरा दर्शन, ऐतिहासिक प्रक्रियाओं की कार्य-पद्धित से संबंधित विचारों की एक पूरी प्रणाली, था। उसमें मान लिया गया था कि जनता मान जसे नियंत्रित रखा जाय, उस पर अंकुश रखा जाय और ऊपर के किसी मसीहा संगठन प्राप्त की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की जाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय और जहां कहीं इसके विद्या की प्रतिष्ठा की नाय की प्रतिष्ठा की नाय की स्वर्थ के किसी मानस्वर्थ किसी स्वर्थ के किसी स्वर्य के किसी स्वर्थ के किसी स्वर्य के किसी स्वर्य के किसी स्वर्थ के किसी स्वर्य क

है अपने परिचय के आएंश्व के दिनों में अमानतदारी की अवधारण के निसाफ निया या और औरदार तरीके में शेलते हुए जमकी मुखालियन की थी । उरहोने इनका मन्दोन क्रकाते हुए यह भी कहा था कि बैशानिक विरनेपण की बान हो। दूर ची, यह गामान्य बोब और ऐतिहासिंह अनुभव के भी विग्छ है। हिन्तु यह मानीवना मादिए शेव तब मीमित रही, उने उनके दार्शनिक मूल तक बामी नहीं ने बादा गया। और १८३६ की विषयी कांग्रेस के पहले गांधी जी और मुबाद बीम के बीच मनभेद के गधन ने नेहरू जी ने गांधीवादी हर्किकोन के कन्त्र अपनी रहतंत्र नियनि का दिनाईन कर दिया और एम आरमममयेण की वह उसकी सबै-मिछ परिलानि सक में नवे जहां उन्होंने अमाननदारी के दर्शन को भी ब्दोकार कर लिया। यर बात इतने पर ही नहीं नाम हुई। गांधी जी की मामान्यवाद-विरोधी मोचें की अनुनी अवपारणा थी। जहां तक वह उन नमी की एकता करकपुर रुपने के जिए प्रयानगीम होती थी जिन्हें बिटिश उपनिवेशवादियों को निकास भगाने के लिए संवर्ष में संवत्त किया जा सकता भी, वहां तब उपका एक प्रवृतियोग पहुतु था । बिन्तु इस मोर्चे के भीतर के अनुविरोधों में बनराया मही का महता था बरोबि वे उनकी रखना में शामिल विविष बनी के हिनों के बान्यन विशेष से उद्भुत थे। और, जब कभी ऐसे विशोध उठ मारे हुए, तब शहब बहुननक्या तबकों से ही कुबांनी देने और संयम बरतरे को कहा गया । अगर कभी कभी ऐसे समझीते हो सके जिनमें बन्हें इद रिजायमें मिनी, मो के उनके पर संबंध और प्रतिरोध के परिणास से ।

ए विशाल को भी नेहर जो ने आंग बहाया। इसमी भी गुरुआत हिए बंदिन के पहते बात में हुई और नुभाव कीन ने वापयेगी विवासें की दिएया करते बंदिन के पहते बात में हुई और नुभाव कीन ने वापयेगी विवासें की दिएया करते किन्नु स्वाहर में वापयंग्व की नाम पर दक्षिण के साम समझीता कर नेने, की उनकी महीत की दीत हैं। बहु आप्तीका की। यह दम सानीचना के में में कि नहीं थे। स्त्री महमद दिवा के नुक्ष क्यों बाद दीर महीत नाम के नहीं। जब रायोगिना मिन गयो नो विभाजन के साथ हुए महावित्तास के नहीं। विभाजन के प्राप्त के कार्य कर कर नाम मा नाम गा नी साम कार्य में महावित्ता के को पर नहीं के पर कर नाम मा नाम गा नी साम के स्त्री के प्राप्त करते हुए हालाहित दव्य उनकी रचनामों से हुन विभाग करते हुन की प्राप्त के निक्स करते हुन हुन की प्राप्त के निक्स करते हुन हुन की प्राप्त के निक्स करते की उनके कार्य की प्राप्त के निक्स करते की मोतर के प्राप्त के साम की मोतर की साम की मोतर की साम की मोतर की नी में साम की मोतर की साम की मोतर की साम की मोतर की साम की मान की मोतर की साम की मोतर की मीतर की मान की मोतर की साम की मोतर की साम की मोतर की साम की मोतर की मान की मान की मोतर की साम की मोतर की मान की मोतर की मान की मोतर की मीतर की मान की मान

उनमें इमकी ही उम्मीद की जा सकती थी ।'बदि गांधीबाद विनय्ट किन्तु

क्रियमान भनी विवाद को कैनारिक परिवर्त भार, की नेहुए भी की भारती. भर भाग में समारी मिनियानी का मिनियों देशीय है में (ग्रीहे में भागा की की नहीं भी-क नेहरू जी को जी भागा सनगिमांगे करा है क्ष्मारिक भीर पर के नहीं था) अलेकि जनका क्षेत्रकोण गर्धे सिन्द्री पति मगे के उत्पर्ध तमके का वैचारिक पतिवर्ष भा । आस्त्र की मासीर स्थिति में, यहा भारतीय शोद्योगिक शादीय प्रीतिति वर्षे ने अस स्थिति में अधिक माना में अधिक क्षीर एक वृत्ता अधित कर की भी तमा जरा मना यमें इसमा मनिकामी भी मा कि अपने वृत्ते कार्रमाई कर महे, हिन्दु उस शक्तिवाली नहीं था कि इममें की अपने गए में या मके, न नी पती लि श्रीर म महरी निम्मन्त्रीयनि समें का अपने नवका सबै असमें नक सरी भूमिका अदा गर मक्या था। में दीनों नेता (या नयी स्मिति में नये हा है। पुराने नेता की ही अविश्वित्वाता) मगाहनीय गरीके में उम लियी के जुड़ी र्थे जिसमें भारतीय ओशोधिक राष्ट्रीय पृतीपति समें के हितीं तमा की किसान और उपरी बहुरी निम्न-पूर्वापित गर्व के दियों के बीन ट्रास्त्र है अधिक अनुमान की अधिक अनुरूपता भी तथा माम्राज्यबाद के माथ मंगर्य और ममस्तेता दोतें हैं जिल में गर जरूरि पर हित में यह जहरी था कि भारतीय वृजीवाद के रिकास के दितों के जिल्ही जनता की नामने कि जनता को लामबंद किया जाय। प्रतिविधित होने नाने वर्गहितों तथा पिखर्ति स्थिति में जनस्म प्रतिविधित होने नाने वर्गहितों तथा पिखर्ति स्थिति से उत्पन्न मनोवैज्ञानिक रचना की भिन्नताओं के कारण जो महिले सामने लाते के उनके पान सामने आते थे, उनके बावजूद गांधी नेहरू पुग और नेतृत्व में एक बुनियरी अविकालना है। जोकों के नाम कार्य अविच्छिलता है। दोनों ही एक गाम वर्ग के हिन्द्रकोण को प्रतिविक्ति करी के किन्त अंतिम विक्तेसक के थे, किन्तु अंतिम विश्लेषण में एक अन्य वर्ग के हितों की सेवा करते थे। गाँवी नेहरू नेतत्व से भारतीय क्रीक्री नेहरू नेतृत्व से भारतीय औद्योगिक राष्ट्रीय पूजीपति वर्ग के सिवा और कों लाभ नहीं उठा सका।

ऐसा अनसर नहीं होता पर ऐसा होता अवस्य है कि निम्न पूजीपित की के वैचारिक प्रतिनिधि अपने वर्ग से अधिक पूजीपति वर्ग की हित-सिद्धि करी है। यह वर्ग शक्तियों के एक खास संतुलन तथा परिस्थित की अपेक्षात्री पर निर्भर है। कमोवेश समय तक इस वर्ग की सापेक्ष स्वाबीनता अ पूंजीपित वर्ग के प्रत्यक्ष वर्ग-शासन के लिए स्थान दे देती है जिसने बीव के अंतराल में शक्ति संचित कर ली होती है। यह तभी संभव है जब कि वर्ग हिंगे की (टकराव के साथ-साथ) अनुरूपता भी हो और एक शक्तिशाली वर्ग शृ से मुकाबला चल रहा हो।

गांचीं जी के बाद गांघीवाद की अविच्छिनता की यह पहली घारा सर्वे। चित्राली थी, किंतु सबसे अधिक प्रतिनिधि या 'गुडतर' घारा है विनीबी शाक्तरापा अन्दोलन । यह कोई संयोग की वात नहीं है कि विनोबी जी की क्यांति तभी बी जब उन्होंने भूमि और जनवाद के लिए तेलंगाना के कियानों के कम्युनिस्ट नेतुल्ज में चलने वाले लग्नत संपर्य की चुनौती स्वीकार की। भूदान जान्योंतन का जन्म <u>पोजमणल्ली</u> में जन किसानों के संपर्य के सचेत विकल्प के रूप में हुजा जो कांग्रेस सरकार के नकती भूमि मुगर से लामान्तित नहीं हो सके में।

कई रिज्यों से सर्वोत्त्य आत्रोतन पृंतीयति वर्ष से मुक्त हो जाने और साप ही मनदूर वर्ष का प्रतिरोध करने की गांधीआदियों की कोशियों का प्रतिनिधित्य करता था। यह ऐसी परिस्थितियों में, जहां राष्ट्रीय पूजीपति वर्षे पर्णाय सामायनवाद से समझीता करके तथा जर्मीदारों से मैंनी करके पूजीवाद का विकास कर रहा था, हिसान वर्ष द्वारा एक स्वतंत्र प्रृतिका अदा करने की बोधिय का प्रतिनिधिद्य करता था।

अपनाया जाना था, बह था सम्यक्तियारियों का हृदय-परिवर्जन करते का। ।

विनोधा जी ने बारफ्स में यह नारा दिया कि "हर व्यक्ति अंपनी भूमि के
छिंदें हिस्से का भूमिद्दीनों के लिए परित्यान करें," किन्तु आमे चल कर इस
'प्रियान की जगह यह प्राम्तपान को हिमाबन करने वगे । इस योजना में व्यक्तिप्राप्त की जगह यह प्राम्तपान को हिमाबन करने वगे । इस योजना में व्यक्तिप्राप्त को जगह यह प्राम्तपान को हिमाबन करने वगे । इस योजना में व्यक्तिप्राप्त को चित्र को व्यक्ति की को हमान पाय परिवास का समान विनरण
प्राप्त को प्राप्त का प्राप्त कर विनर्भ को स्वर्णन प्राप्तित या। इसका
पर्व हे जब पुराने प्राप्त समुदाय की और वावती जो एधियाई उत्पादन पदिति
का कालार पा। और यह काकी महत्वनुंगे बात है, इसमें जोजोनिक शैन के
कालार पा। और यह काकी महत्वनुंगे बात है, इसमें जोजोनिक शैन के
कानी की सोई योजना - वामिल नहीं है, हालांकि कुछ सर्वोस्थी
क्रिकी संस्ति दान की भी बात करते हैं।

विनोता जो के इध्यिकोन में एक महत्वपूर्ण परिवर्षन छन समय आया जब उन्होंने कम्युनिस्टों के साथ बातीसाथ की बहातत की और उन समी सोगों के भी भी वा भाजात विका भी सबैद नम यागीन वासी के है व में मान्यिति को भावत्यवनता के मारे में स्वयान था। वह भी व एउने पतुर्वात मारी साम्मीतर त्याची के शावनीतिक मादेगक पत्र स्पृष्ट् भेगानी में स्वारी महिन्द में महिम्मीतर हुए भी र शर्व सेवा राच ने १६४८ में भीपूर में विभिन्द माने मीतिक त्याचिमी की एवं चैरव आधारित की, विवास कम्बीतर गानि स्वारीमा की एवं चैरव आधारित की, विवास कम्बीतर गानि स्वारीमा की माति मादेश की स्वारीमा की मादित्य के स्व स्वारीमा की भी विद्या विवाद समाने नहीं कार्य प्रणानियों की मादितीन कार्य प्रशीमा की। धी स्वारी विवाद समाने निज्ञ मादितीन प्रणानी को सादितीन स्वारीमा सेवा है। स्वारीक सेवा स्वारीमा सेवा की स्वारीम स्वारी की स्वारीमा सेवा है।

अभी हाम के दिनों में, गर्थोदय को जगताने क्यार मबने प्रकृत करि जगप्रकाश नारायण ने न केवल राजनीतिक वस्त्रस्य दिये हैं बिल्फ ऐंते गर्क नीतिण यस्त्रस्य दिये हैं जो सामपूर्या और जनवादी शिल्मों के प्रम के हैं। यह उन दिनों में बिल्कुस भिन्न क्थिति है जब मुक्तिय में संबद होने का अब होता था नम्युनिज्य था जहादी विरोध करना और जब कुम्पाउ किने अब होता था नम्युनिज्य था जहादी विरोध करना और जब कुम्पाउ किने फाँद फल्चरल फीडम' या जद्यादन विया जाजा था। उन्होंने तो बही हैं यह दिया है कि विमानों थो संबैधानिक और कानूनी माधनों से कुंच कि सकने की संभावना से में इतना निराश हो पुला है कि में स्वयं तो भूमि प्राइ बरने की 'नगरालवाही' या हिमारमक क्षान्तिकारी पद्धित को नहीं किने सकता, पर उसका विरोध भी नहीं कर मकता है।

इसके साथ स्वातंत्र्योत्तर भारत की गैर-मरनारी गांघीवादी घार्ग के संवंधित एक महत्वपूर्ण वात हमारे सामने आती है। गांधी जी ने हिं परिवर्तन' के महत्व पर जोर अवस्य दिया था, किन्तु वह यह नहीं मानते कि इसे मात्र उपदेश और अभ्यर्थना द्वारा हासिल किया जा सकता है। वि इनके साथ अनधान, असहयोग, हड़ताल तथा सविनय अवधा के विविध्व हर्षों की इस्तेमाल करते थे। यह यह मानते थे कि यिरोधी को यह विश्वास दिती के लिए कि उसके लिए अपना हृदय परिवर्तित करना और प्रणत होना की स्थक है, जनता को सित्रय किया जाना चाहिए। सर्वोदय आन्दोलन की शार उसका वह स्वप्नादर्श ही नहीं जिसके पीछे वह भागता है। निश्चय ही उन लक्ष्य स्वप्नादर्श मूलक है, खास तौर पर इसलिए कि वह औद्योगीकरण प्रकि के स्वामित्व के ढांचे तथा ग्रामीण इलाकों के विषक्ष के साथ उसके अंतर्ग की संपूर्ण समस्या को नजरअंदाज कर जाता है। उनकी वास्तविक शासदी है कि इन लोगों ने हर प्रकार की सरकारी कार्रवाई का तो परिस्थाग कर

देया है, साथ ही किसी भी प्रकार की जन-कार्रवाई को भी तिलोजिल दे ति है।

अयप्रकाश नारायण ने संघर्ष के विविध प्रकार के गांधीवादी अहिसात्मक ह्यों की आजमा लेने के बाद अगर तबाकवित जनसलबाड़ी वंच के प्रति अपनी महानुष्ठ्रित प्रकट की होती. तो यह समक्र में माने वाली बात होती। दर्माय-का विनीमा जी और जयप्रकाश नारायण दोनों ने, पद-यात्रा और प्रार्थता तमाओं द्वारा प्रचार और आन्दोलन के अलावा, अन्य हर प्रकार की सिकयता का परिस्थान कर दिया है। यह मात्र संयोग की बात नहीं है। जिदेशी साम्राज्यवादी दक्ति के खिलाफ बहिसात्मक रूपों में भी. जन-संघर्ष का प्रयोग हरता एक चीज है। हमजोली गाधीवादियों द्वारा संवालित पुजीवादी राज्य के खिलाफ इसका इस्तेमाल करना बिलकुल इसरी बात है। कोई मह कह सकता है कि यह गांधीबाद का खंदित और विकल रूप है। सर्वोदय-बादी यह स्वीकार करते हैं कि स्वाधीन भारत में ब्रराइयों और अन्यायों की भरमार है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि जनता और अधिक बद्यांत. तथा आकामक तक, होती जा रही है। वे किसी प्रकार का संघर्ष, व्यक्तिगत संघर्ष ही सही, किसी प्रकार का सत्याग्रह, सीमित पैमाने पर और सीमित जहेरय के निए ही सही, क्यों नहीं गुरू कर सकते ? सिर्फ एक उदाहरण सीजिए । हास के महीनों में भारत के विभिन्न भागों में हरिजनों पर किये गये मत्याचारों से सारे देश को सदमा पहुंचा है। सर्वोदयवादी इस मसले पर स्वतः या दूसरों के साथ पिल कर ऐसा राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह क्यों नहीं शुरू कर सके जिसकी परिणति राष्ट्रव्यापी हहताल में--अगर 'बंद' शब्द उन्हें प्रिय नहीं है--होती ? जाहिर है, हर प्रकार के जन-संघर्ष का परित्याग कर देना और साथ ही हताच होकर तथाकियत नक्सलबाडी के रास्ते के लिए एक प्रकार की निष्क्रिय महानुपूर्ति दिखाना बद्धमल सामाजिक समस्याओं को हल करने का बहुत गाधीवादी तरीका प्रतीत नहीं होता।

साथ ही यह भी जह देना जन्मी है कि नेरास्य और जसफलता की माजना ते तयाक्षित संवेदानिक या सरकारी किरम की शांतियुर्ण मितिविधियों के क्षित्रफ ही नहीं निर्दाट किया जाना चाहिए। स्वय सर्वोद्ध काल्योक्षक के संबंध में भी यह बात कहीं अधिक प्राइंशिक है। कोई भी निष्यत निरोशक इसी निक्यां पर पहुंचेत के में नवजूद होगा कि मुद्दान और सामदान सारदोलन निहासत असफल पहें हैं। 'दान' ती नयी मुझि क्यादातर या तो बेदी सायक नहीं रही, या अमहे की कमीन रही है। बुख जीन यह भी कहते हैं कि भूषि देने वाले करबार छोटे किसान होते हैं को अपनी निहासत होटी कोत साजीदिका चला पाने में असमर्थ है। अब्य 'साता' गृह महुमुल करते हैं कि प्रमीन में ही पहीं, चली मुक्द सेवाजी में भी नजान मिली। हर हालत में, का आदीलमी का स्थल महत्त भूभि मात्त करना नहीं जिल्ह जमीशकों की मनकि में मन्यूला फान्ति साना बहा है। जिससे भाग भन्त कर गाम मल्य पर मनकि सर्भेषी में पान्ति का सर्भा स्थि। यह भारतीय सकतीरि और समाव है गांपीयादी पुनिवर्षिय का जाजाब सन्या। जहां तक इन स्टेडवी मा मंदिर है सम्बद्धि आन्दोलन की उत्तर्बक्षिया सकायाल्यक होते में भी ग्रीनुनगी हैं।

किर भी मतीदम भारतेयन ने बुध ऐसे भारभेतादियों को आहार कि जो मित्र पर के प्रतीमन के सामने नहीं भूके । इसके भीतर कुछ ऐसे नहतीत लोग भी है जो पूर्तावारी पथ से निरुष्ट हो धूर्व है और जो भारपीय समार के कालिकारी पुनिवर्षण की हादिक कामना करने हैं। उन्हें यह मुक्त दिन जा सकता है कि इस तथ्य की पूर्ति के निष् से जन-संपर्ध के मंभीवादी हरी का प्रयोग कर मुक्ते हैं। और आज ने इस दिना में प्रवास करते हैं तो हरी की प्रयोग कर मुक्ते हैं। और आज ने इस दिना में प्रवास करते हैं तो हरी की अवेला नहीं पायिंग।

गांचीयाद के नैम्लप को चनाने रंगने के लीमरे प्रयास के प्रतिनिधि हैं स्वतंत्र संत राजा जी। उनकी कीलिश यह है कि कम्युनिज्य के लिए मंबी जी को जो स्पष्ट अपि थी, राज्य की शक्ति की गृद्धि के प्रति ये जो नापमंत्री रखते थे तथा आधिक शक्तियों के स्वयस्तृतं कार्याद्धित में हस्तकेष के प्रति वे जो अविद्यास रंगते थे, उन सभी का इस्तेमाल किया जाय। दूसरे शब्दों में उनकी कोशिश यह है कि महात्मा गांधी की बनावट में जो कुछ पूर्वप्रहम्मत, योया और अज्ञानपूर्ण है, उसी का इस्तेमाल किया जाय। और तांधिक हृदयहीनता के साथ उन सभी का इस्तेमाल भारतीय इजारेदार पूंजी की शक्तियों, सबसे शक्तिशाली सामंती जमींदारों और नय-उपनिवेशवादियों के हर्क में किया जाय।

सार्वजिनक क्षेत्र की चढ़ती हुई नौकरशाही, परिमटों और लाइसेंसों के संबंघ में फैलते हुए अप्टाचार, सीमित नियोजन की जनता का हित कर पाते में असफलता तथा कांग्रेस मार्का मिथ्या समाजवाद की चदनामी के प्रति जनता के बड़े हिस्सों में व्याप्त विरक्ति का इस्तेमाल करके राजा जी ने गांधी जी की स्वतंत्र पार्टी के अंडे के नीचे खड़ा कर लेने की आशा की थी। उन्होंने यह आशा की थी कि यह इजारेदार पूंजीपितयों और अवाम के बीच उसी तर्छ सेतु का काम करेगी जैसे गांधीवाद ने समिट्ट रूप से भारतीय पूंजीपित वर्ग के हाथ में राज्य सत्ता का हस्तांतरण संपन्न कराने के लिए अवाम को संवर्ष में उतार दिया था।

यहां पूर्ण और जबर्दस्त असफलता हाथ लगी । महात्मा गांधी और जी कुछ रहे हों या न रहे हों, पर दिद्रनारायण से, हर पद-दिलत की आंख के

श्रांनुत्रों को पोछने से उनका अट्सट संबंध था । महारानियों, धन्नासेठों के पक्के अनुचरों और सेवानिवृत आर. सी. एम. नीकरशाहों और छिटपुट फीसी जनरलों की मंडती से उनका मेल ही नहीं बैठता था। मारतीय स्वातंत्र्य संवर्ष के उस महानतम साम्राज्यवाद-विरोधी संगठनकर्ता से डॉलर की अनुदासता का ओषित्य सिद्ध करने को तो नहीं ही राजी किया जा सकता था। आध्र के हुछ सीमित क्षेत्रों के अलावा (जहां कि श्री रंगा ने अपने पहले के काम से तया अभी बरकरार कम्माओं की जातीय वकादारी से लाम उठाया) और कहीं स्वतंत्र पार्टी जो जनता के बीच कही जड़ नहीं जमा सकी, वह इस तथ्य का प्रमाण है। स्मरणीय है कि रजवाड़ों के परंपरागत प्रभाव का स्वय स्वतंत्र हिट्टकोण से कुछ सेना-देना नहीं। स्वतंत्र की चुनौती टाय-टाय फिस हो जुकी है। यह अब उत्तरोत्तर कांग्रेस के भीतर के दक्षिण पक्ष के हक में दबाव डालने 'वाली जमात के रूप में काम करती है और किसी ऐसी बड़ी इकाई की अधिकाषिक सोज में है जिसमें वह अपना विलय कर ले। यह भी सासा मुस्किल चाबित हो रहा है। राजा जी एक जमाने में महात्मा गांधी के विवेक के प्रहरी कहै बाते ये पर इस मूर्मिका को छोड़े हुए उन्हें एक सम्बा अरसा हो चुका। चब तक स्वयं किसी के पास विवेक न हो तब तक वह किसी और के विवेक का प्रहरी की रह सकता है, गांधी जी जीसे व्यक्ति के विवेक या उनकी विरामत का प्रहरी रहना तो और भी दूर की बात है। जाहिर है, महात्मा गांधी ने अपने अचूक अंतर्ज्ञान के आधार पर राजा जी को अपने जत्तराधिकारी के रूप में अस्वीकृत कर दिया और उन्होंने जवाहरसात नेहरू को चुना जिनके प्रति राजा जी के हृदय में विकृत पृणा घर कर गयी। इजारेदार पूंजी महात्मा गांधी को अपनी कठपुतसी नहीं बना सकी । तीसरी पारा युक्त होते होते ही परिणाम इससे मिन्त हो भी नहीं सकता था। विनष्ट लेकिन उदीयमान धनी किसान की या शहरी निमन-पूँजीपति वर्ग के ऊपरी तबके की आकाक्षाओं का बौद्योगिक पूंत्रीपति बर्ग के हितों के साथ मेल बैठ सकता या और उसे इसके हितों का पोषक भी बनाया जा सकता था। इसके परिणामस्वरूप एक खास इनारेदार सबके का आधिर्मात हुआ जिसने विकास की आगे की सारी उप-स्वित्वों को हिंदया लेने की कोशिश की और जब उसने नव-उपनिवेशवादियों के साय अधिकाधिक सामेदारी करके यह करना बाहा तो उसके लिए हितों के उक्त मेल और पोषण का पा सकना मंभव नहीं रह गया। मारतीय इकारे-दारी के विस्तार के हितों तथा संपूर्ण राष्ट्र के हितों का अन्तविरोध इस बात में ज्वतंत रूप में ब्यक्त होता है कि वह गांधीवादी विरासत को ग्रहण कर

'रीकने में सर्वया असमय रही है।

मामपक्ष का क्या हुना है गहाँ हुने एक ऐसा विरोधामान देखने को निता है, जिमको ऐतिहासिक विकास से भारमार है। मंत्री जी ने मुत्रा गामास पर निमंत्रम और अकृष क्षते की कीजिश की भी । यतमें इतनी महानता मी वि यागाश के नेवाओं और कार्वकारीओं की क्ष्मीलवा हैमानदारी, दुर्वाते करी मी समसा समा भीदिक मामस्ये की समहता कर सके। वे इतने मुर्दे हैं मा अनुभव कर मके कि बामपदा स्वाम नीर पर नीजवानी और विवानिने पर जबदेशन अगर दान पहा है। वह इस बात के निए साम में कि उनसे निष्ठा और उनके प्रभाव का उपयोग भाने ध्येम के निए कर में और स चपमोन के दौरान चन्हें अपना अनुवाधी पना में । उन्हें मुक्त यहीं मुक्ती जवाहरमान नेहरू के माम मिसी और यह मिर्ह एक व्यक्ति को जीत तेने ती बात नहीं थी । यह पामपक्ष भी एक शक्तिशाली, शावद मबमे शक्तिशाती, पारा के संबंध में मफलता थी। जहां ने मफल नहीं हो मने, जैंने मुनारिक बोस के गामले में, यहां उन्होंने कम में कम कार्यम की उनके प्रमान में कि फर लेने की निर्ममता से स्यास्था कर थी। जहां तक कव्युनिस्टों का सर्वत-है, गांधी जी उनका सम्मान मन्त्रों थे पर माथ ही उन्हें दूर-दूर रहाने का भी निश्चय कर रसा था। १६४४ में भारतीय पञ्चुनिम्ट पार्टी के तत्कातीन मही सचिव पी. सी. जोशी के साथ उनका जो पन-व्यवहार हुआ था, उससे यह पूर्व चलता है कि यह फार्युनिस्टों के शिलाफ निहायत कटपटांग अफवाहीं और मिथ्या आरोपों को भी सही मान खेने को कितने रीयार रहते थे। वर्ग संवर्ष के संगठन तथा तथा मेहनतकदा जनता के स्वतंत्र वर्ग संगठनों के वे सारम में जितने विरोधी थे, अन्त में भी उतने ही विरोधी बने रहे।

गांघी जी के प्रति वामपंथियों का, गास तौर पर फम्युनिस्टों का दृष्टिकीन निर्दोप नहीं था। वे भारत में साझाज्यवाद-विरोधी संघर्ष के मुस्य संगठनकां के रूप में जनकी भूमिका को दीर्घकाल तक समफ नहीं सके। किसातों की साझाज्यवाद-विरोधी आन्दोलन में लाकर उन्होंने जो महान सेवा की धी उते समफ्रने में वे असमर्थ रहे। वे साझाज्यवाद के साथ उनके समफ्रीतों पर और निहित स्वार्थों के साथ उनके सामंजस्य पर एकतरफा जोर देते रहे और संघर्ष के पक्ष को तथा देश के निर्धनतम जनों के साथ एकात्म्य के पक्ष को नजर अंदाज करते रहे। उनकी आलोचना दुरुस्त थी किन्तु आलोचना के साथ-साथ, कार्यक्रम, संगठन और संघर्ष की पूरी स्वाधीनता बनाये रखने के साथ-साथ उन्हें सम्पर्क और सहयोग के प्रसंगों की और अधिक आग्रह के साथ खोज करती चाहिए थी। स्वातंत्र्य संघर्ष में नायक की स्थिति प्राप्त करने से संबंधिंग गलत घारणाओं के ऐसे नकारात्मक रुख के पीछे, कम से कम कम्युनिस्टों के

पूंबीपति वर्षं की सम्भावित दिया का कम्यूनिस्टों ने जो संकीर्णतावादी विस्ते-पण किया या और यह मान लिया या कि वह अनिवार्यतः प्रतिकान्ति के पक्ष में पता जादेगा, उसने इनकी गलतियों की और भयंकर बना दिया और गांधी जी को राष्ट्रीय पंजीपति दर्ग का गुलाम प्रचारक मान सेने से यह गसती और भी भयंकर बन गुनी।

वभी भी भारत में वह कौन सी शक्ति है जो गांधीवाद के सारे सकारात्मक सत्वों को आज आये बढ़ारही है ? वामपदा के अतावा और कोई नहीं और वसमें भी प्रथम स्थान कायुनिस्टों को प्राप्त है। अगर हेगेल का एक सन्द प्रयोग किया जाय तो यह निषेध-विधेयक को आगे बढ़ाने का एक उदाहरण है। वया इसका यह अर्थ है कि बामपशी और कम्प्रतिस्ट सोग अहिंसा के मतकार

में दोसित हो गये हैं ? कतई नहीं। पूछा तो यह जा सकता है कि एक मतवाद के रूप में अहिंसा में गांघी जी और मुट्टी भर बन्य सौगों के सिवा कीन विद्वास करता था ? अन्य कांब्रेसी नेताओं ने बार-बार यह काफी स्पष्ट कर दिया या कि वे अहिंसा में कार्यनीतिक सुविधा की हिन्द से ही विस्वास करते थे। नहीं तो इस बात की कैसी सफाई दी जा सकती है कि अगर अस्पायी राष्ट्रीय सरकार की मांग स्वीकार कर सी जाय तो संपूर्ण काग्रेस नैतृस्व मित्र राष्ट्रों के साथ भित कर युद्ध में उतरने की जिम्मेदारी सेने की तैयार था? बाई. एन. ए. के निर्माण से जो अहिमात्मक संगठन नहीं या, उठाये गये विकल प्रवास्तरमक ताम की सफाई कैसे दी जा सकती है। दबसे गांधी जी ने वई

अवसरों पर यह घोषित किया या कि कहिंसा में सेरी निष्ठा है पर मैं बांग्रेस से इसे स्वीकार करने के लिए आग्रह नहीं करूंगा। इस तरह हिंगा-अहिंगा का विवाद आदि से अंत तक च्यान बंटाने का एक साधन रहा। अपनी मुक्ति के संपर्य के सबसे उपमुक्त रूपों का विकास तो स्वयं जनता अपने संपर्य के दौरान करती है।

अपने दो दशक के नेतृत्व के दौरान गांधी जो ने प्रारतीय अवाम के मान्दोतन के अनुमन का सामान्योकरण किया और जन संघर्ष के क्यों के धारका-गार को समृद्ध किया । भूत हड़ताल, बहिस्कार, सत्यावह और हड़दाल तथा क्षित्व अवता के अन्य रूप स्वातंत्र्य संपर्ध के आरंभिक चरमों में तथा अन्य देशों में भूगावत्या में मौदुद थे पर उन्हें इस कान में प्रगर कीर पूर्ण बनाया बया । ये भी गांधीवारी विरासत के प्रगतिशील पहलुओं के बहुमून्य अब हैं। क्ट्रारंपी समझतारी के बने रहने के कारण कुछ समय तक बामगंदी, नाम बीर पर कम्युनिस्ट सोव, समर्थ के इन क्लों का इस्तेमान करने से नकरत करते रहे । बिन्तु विदाने पहह बर्चों में दन्हें बरना निया नया है, बरूप ही अमानवाली तरीहे से इस्तेमाल किया गया है इनमें नदी अंतर्कन्तु का कवार

् निया गया है जिसमें सामृद्धित संधरों के एवं अधि व्या---विदे --ना किस्स हिला है।

भगित भारत भी विजित्त परिश्विति में तथा स्वार्तन्य संपर्ध के अनुभग की पृष्टभृति में भागपियों ने, खाम तो एवं वहम्तिस्टों ने, इन परम्परगत स्वी में नयी अवधेरत भा महावेश किया है। उदाहरणार्थ, मूल हुतात
गत स्वी में नयी अवधेरत भा महावेश किया है। उदाहरणार्थ, मूल हुतात
गर स्वीम जन-सम्पर्ध में स्थानापन के स्व में या मात जन सामवंदी के साम
गर में नहीं किया जाता है। यह अवगर स्वारत्य पुस्ताह जन-संपर्ध में
आरिभक रूप हुआ भवती है और कभी-कभी जनता रार्थ भून हुतात में
आरिभक रूप हुआ भवती है और कभी-कभी जनता रार्थ भून हुतात में
गाम तिरी है। यही स्थित महमाग्रह के अरत के प्रयोग में बारे में है। जनती
भी संपर्ध के मंत्र में किया जाता है। इन कारण प्रायः वांग्रेसी हुता में
यि यिगेय का स्वर उठता है कि भूम हहनात और महमाग्रह का दुस्पीय
से यिगेय का स्वर उठता है कि भूम हहनात और महमाग्रह का दुस्पीय
गांगीवादी दर्शन को स्वीकार करने हीं और जो कियी चुद्धिकरण की प्रक्रिय
गांगीवादी दर्शन को स्वीकार करने हीं और जो कियी चुद्धिकरण की प्रक्रिय
में स्वयं को वीक्षित कर चुके हों। उनसे मही उपभीद की जाती है क्येंकि
से स्वयं को वीक्षित कर चुके हों। उनसे मही उपभीद की जाती है क्येंकि
में जनता निमिण्यत हो जाय। फिर भी जनता की मह जिस्तत ही गांगीवाद
में जनता निमिण्यत हो जाय। फिर भी जनता की मह जिस्तत ही गांगीवाद
को एक उच्चतर स्तर पर पहुंचाती है और इने क्यांतरित करती है।

कुछ लोग विरोप प्रकट करते हुए। यह कह मनते हैं कि स्वयं गांघी जी ने जन-संघपं की ऐसी अवधारणा की पूर्व कल्पना की भी और उस पर व्यव-हार किया था और इसलिए यह मुफाब देना निरर्थंक है कि गांघीबाद की एक उच्चतर स्तर पर पहुंचाया जा रहा है। वास्तव में ऐसा नहीं है। वास्तिक सत्याग्रह और अनवान को सदा चुने हुए थोड़े लोगों तक सीमित रसते की कोशिश की जाती रही थी। जनता भी संघर्ष में उतरती थी पर स्वयंस्पूर्त रूप में अधिक और संगठित रूप में कम । प्रायः ही उसे अपनाने से इनकार कर दिया जाता था और इस आघार पर आन्दोलनों को वापस ते तिया जाता था कि सत्याग्रह के अनेक नियम भंग कर दिये गये हैं। अब प्रयास यह है कि जन-संघर्ष को इन्हीं रूपों में संगठित किया जाय, इन्हीं रूपों के जिस्से अप और संगठित तरीके से अवाम से सिक्रम शिरकत करायी जाय। सारा अधि प्राय यह है कि इस विचार को प्रश्रय न दिया जाय कि संघर्ष के रूपों को इत 'दुष्कर' और 'शुद्ध' होना चाहिए जिससे उसमें चुने हुए चंद लोग ही भाग सकें। जन गंग्ये के निर्मात सकें। जन-संघर्ष की घतें ऐसी होनी चाहिए जिससे अधिकतम संभव सं में अवाम ज्याने पान के जिससे अधिकतम कि में अवाम उसमें भाग ले सकें और संघर्ष के रूप भी ऐसे होने चाहिए वि अधिकतम मीमा अधिकतम सीमा तक अवाम के संगठित हो सकने में सहायक हों। कांग्रेसी जो गन पर्या कांग्रेसी जो यह महसूस करते हैं कि जनता सत्याग्रह को 'अवित्र' कर

है और 'बायपंदी' जो यह महसूत करते हैं कि संवर्ष के ये रूप अवाग को 'बीप' बना रहे हैं, दोनों ही इस प्रस्त के उक्त पहलू की ही उपेसा कर बाते हैं।

जहां तक गांधी जी के राजनीतिक कार्यक्रम के सकारात्मक पक्ष, खास तौर हिन्दु-मुस्लिम एकता और अस्पृत्यता के उन्मूलन पर उनके जोरका सवाल है. इसके उत्तराधिकारी भी वामपंत्री, खास तीर पर कम्युनिस्ट ही हैं। बल्कि यह नक्षित कर देना जरूरी है कि बामगंथी और कम्युनिस्ट आन्दोलनों ने अपने जन्म काल से ही इन विषयों पर मोटे तौर पर समान उद्देश्य लेकर स्वयं अपने कार्यक्रम प्रस्तुत किये थे। वे कहीं अधिक विवेकयुक्त और वैज्ञानिक इध्टिकोण से निहिट्ट में जिससे इस समस्या की उनकी समझदारी और प्रस्थापना बांधी थों से वहीं अधिक दो ट्रक थी। सबसे बढ़कर वे वर्ग एकजुटता की अवधारणा प्रस्तुत कर सके थे जिसने जनता की एकता निर्मित करने का स्वस्थतम आधार प्रदान किया। स्वातंत्र्योत्तर काल में भी वह जारी है। इस कात की स्थिति में आयो नयी बात यह है कि इन समस्याओं की जड़ें उससे ज्यादा गहरी हैं जितनी समभी गयी थी और मात्र आधिक वर्गसंघर्य और आधिक वर्गसंगटन इन समस्याओं हो हल करते के लिए पर्याप्त नहीं हैं। इम बात का अहनास पैरा हुना है कि सम्प्रदायवादियों और जातिवादियों से हमें-मारतीय विरा-सत को बात्मसात करते हुए-सड़ना है। गांधी जी ने इसका अपने ही तरीके से प्रवास किया। भारतीय वामपंथ, स्नास तौर पर कम्युनिस्टों को भी यह करता है पर अपने ही तरीके से । उन्हें वर्ग एक जुटता की अवधारणा का परि-त्याम करके इस तरह के भ्रामक सिद्धान्तों को नहीं अपनाना चाहिए कि मारत

के मानि ही बारे हैं, न ही भारतीय बरित नावशी की मीत में प्राययूक्ति को मान नेते की कोरितान करते क्लिन्स र

को मान देने की कोतिए करती कारिए।

क्षित्र भी हमारे देश के अवीत के अपीवनायक मुख्योंक्स करते, में हुंवें

स्वाय और पृथेदर्शी है, जो कुछ मानवतावादी और छवा उपने मान है वहें

सामल ऐसा है जिससे कामी ही क्षी न ही, यम मक्स निमान करते हैं

सामल ऐसा है जिससे कवसमा नहीं जा महेंचा। मानूब निवास के के

सामल और प्राप्त किया जा महेंचा है का वामकी और कार्युन्त है। इनहीं हमें

राष्ट्रवादिमें और प्रतिज्ञावादियों को ही कार्यदा पहुंचता है। इनहीं हमें

वाम और प्राप्त किया जा महेंचा है अब वामकी और कार्युन्त प्रति ।

सन मी यहें माथी भी की भाव भागतीय विशाह में तभी हों। साम से

साम मी इस उत्तेजक और अविश्वित नहीं से उत्ता जा महता है; तीन हो

के सर सहाई में जो जिस्सी होया, वहीं भारतीय मानम के भीम है हि

सहाई में विजयी होया। यह कोई संभीय की सात गहीं है कि हर महत्यी

सारतीय वाल्योलन का अपना सीवर प्रकास करते हैं।

भारतीय आन्दोलन का अपना गीता रहत्य रहा है।

इस प्रसंग में गह कह कर उपमंहार किया जा मकता है हि गांबी बी
अब उसी तरह भारत के एक अंग है जैने हिमालय या गंगा और उत्ते प्री
भी ऐसा ही आलोचनारमक किंतु गैर-निषेधवादी दृष्टिकीय अपनाना पड़ेगा।

एक ऋदितीय नेता हीरेन मुसर्जी

ये पंकियां ऐसे व्यक्ति द्वारा निस्ती जा रही हैं जो अपने तारूप के बारंप के दिनों में गांधी भी का एक किस्म का मक्त ही था, किन्तु जब उसे यह विश्वास हो ्यया कि इस सदोय संसार में संभव हद तक केवल कम्युनियम से ही समाज की

चुराइयों का निदान हो सकता है, तब वह उनसे अलग हो गया। वैयक्तिक समीकरण की सर्वेषा उपेक्षा नहीं की जा सकती, तथा गांधी ची के जीवन और कृतित्व के प्रति कम्युनिस्ट पार्टी के (या वस्तुत: अन्य किसी राजनीतिक संगठन के) उन सोगों की प्रतिक्रिया में, जिन्होंने गायी युग के उल्लास और मोहमंग का अनुमन किया है, तथा उन लोगों की प्रतिकिया में विन्होंने इनका अनुसव नहीं किया है, अंतर अवस्य होगा। फिर भी गांघी जी एक समूचे ऐतिहासिक यूग पर इतनी मध्यता के साम छाये रहे कि एक उम्र राजनीतिक विवाद के मौके पर भारतीय कम्युनिस्ट पाववें दशक के आरंभ में उन्हें 'राप्ट्रियता' बहुने में नहीं हिचके। महत्व की बात है कि सुभायचंद्र बोस ने भी उनके लिए इसी सम्मान-मुचक संबोधन का प्रयोग किया या जब कि वह भारतीय स्वतंत्रताके निए विदेश से कार्यकर रहेये और ऐसे तरीकों का इस्तेमाल कर रहे थे जो गांधी जो के तरीकों के एकदम विपरोत थे। इसलिए इस बात पर जोर देना जरूरी है कि बुनियादी मतभेदों के बावजूद हम उनका थालीवतात्मक हिट से किन्तु श्रद्धापूर्वक अध्ययन करते हैं, और जहां उनके तया उनकी उपलब्धि के बारे में अनसर जो रस्मी वाहवाही की जाती है, चेसमें से काफी कुछ हम स्वीकार नहीं कर सकते, वहीं हम जनका ऐसे व्यक्ति के रूप में आदर करते हैं जिसने स्वयं को अन्य हर किसी से बढ़ कर, जैसा कि हम वह सकते हैं, अपनी जनता के जीवन से मूलवद किया और मारतीय राजनीति के वातावरण को इतना बदला जितना किसी एक व्यक्ति द्वारा संमव हो

: 2:

भारत में एक चित तरीके से संगठित और कार्यधीत कम्युनिस्ट पार्टी की स्यापना के भी पहले गांधी जी भारत के स्वातंत्र्य संघर्ष के नेता और प्रतीक सर्ग मूक स्था १४१७ की श्रीकात करीन विस्त का दिया से की भरता थी, एया विश्व के मुख्यमंत्री और भारत म वदी गया में मैस् भविकियानारिको व नाम न्र वश्युक्ति ता के विचार, देश की श्रामी। परि ियातियों में, जिन्दायेता एक धाकृतिक स्थित को तरह तमह रहें में। हैं। नहीं हो मन स कि पानी जी को धर जिटित स रहा हो, कार्षेण के अध्यासन अधिवेशन (दिसवर १४२१) धारत कर्युर्वस्त दराविन निर्मात स्वि षा । उन दिनो अग्रहकोष आन्दोलन अधनी पत्रकाच्छा पर मा । उन दन्तीय में एक ऐसे जभार का बाह्यान किया गया था निर्मे "वाने मीतिक लिंकि निए मधेन रूप में मधर्ष रह माम र जनना की भारत शिना का ममर्थन प्रति हो। भौतियर के तम पान की लक्ट, जो अपने प्रतिद्वादी का दमकिए आनिक कर मेना पाहसा है कि वह उने और भाषानी में कुचल मके, गांधी जी हते णीवन में यह महा महत्ते भे कि मैं उन लोगों में बड़ कर समाजनारी, बी कम्युनिस्ट हूं जिन्होंने इमका विच्या गया रखा है। जायद यह बहुना ज्यार चित्रत होगा कि गामी में अपने लिए नवीन निन्तु विद्य को हिला देने बार्न विचार संवंधी सहय को, पहले भावनात्मक म्यर पर और फिर बीहिक हार पर, सोजने की कोशिश की भी। एक बार काफी प्रीड़ आयु में जेल में उन्हेंति मानसं की पूंजी की पढ़ने का प्रयास भी किया था। यह कम्युनिस्टों से मिते थे, उनसे बातचीत की थी, और उनमें तथा उनके विचारों में उन्हें कुछ आन्तर्पंक सूचियां दिसी थीं, पर इनसे ज्वादा ऐमा या जिसने उन्हें विकपित किया। कभी-कभी वह कम्युनिजम के बारे में "लाल विनार के और में सोचते थे। वेशक, पाम्युनियम के बारे में वह केवल यह ही नहीं सोवते और समभते थे पर उनकी उक्त शब्दावली उनके जैसे मस्तिष्क के लिए अती क्षणिक नहीं थी। यह सच है कि होमर ए. जैक जैसे दिसावटी गांधी-भक्तों की सचमुच पंचमेल भीड़ ने इस पक्ष को गद्गद् भाव से भगट कर धाम लिया है। इन जैक महोदय ने तो बड़ी मेहनत से कहीं का ईट कहीं का रोड़ा चुन कर एक "गांघी रीडर" भी गढ़ डाली है।

इसलिए, इस बात पर अचरज नहीं होना चाहिए कि समय समय पर भारतीय कम्युनिस्टों ने गांधी जी के विचारों, और उससे भी बढ़कर उनकें कार्यों के प्रति बहुत ही तेज तथा अत्यन्त आलोचनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की। यह याद रखना जरूरी है कि जवाहरलाल नेहरू तक ने गांधी जी के "असीं"

र हरिजन, जनवरी १६४०.

र रजनी पाम दत्त के आज का मारत (बंबई, १९४६) में उद्धृत, अंग्रेजी, पृ. २८४-८६.

्रशास्त्र विरोवांमास" पर आस्चर्य प्रकट किया है कि "अहिंसा के प्रति अपने ूमारे उत्तर उत्साह के बावजूद" यह "ऐसे राजनीतिक और सामाजिक हाचे" ूँ हा समर्थन करते रहे जो "सम्पूर्णतः हिंसा और बल प्रयोग पर आधारित होता

: 2:

गांची जो के प्रति हममें से बहुतों के हृदय में हर दृष्टि से इतना गहरा सम्मान है कि अधिरांश गांधीबादी उसकी कल्पना नहीं कर सकते। किन्तु इस , यारे सम्मान के बावहूद ऐसे मतभेद भी हैं जो हमें इस महापुरण से अलग कर देते हैं-ऐसे मतभेद जिन्हें छिपाना निरी बेईमानी होगी। बर्गों का संघर्ष षीवन का एक ऐसा सत्य है जिसे न तो हमने ईजाद किया है और न जो हमे मीतिकर सगता है। और, सामाजिक इतिहास में हम जो इस संघर्ष को देखते हैं तो बहन तो किसी अहबी बिकृति के कारण है और न संघर्ष और हिंसा के प्रति हमारी किसी अनैतिक (या नैतिकेतर) रुकान के कारण। किन्तु गांधी वी के जिल्लन में -- विना किसी झात साहय या स्वीकार्य संकल्पना के आधार के ही—ऐसे रामराज्य की संमावना स्वीकार कर सी गयी है जिसमें बस दिसी पमल्कार से, सारे विसंगत हितों के बीच "स्वनः संतुलन" र स्थापित हो पावेगा। हाल के दशकों में जो कुछ पटित हुआ है उस सबके बावजूर हम पर भी अवसर "अमारतीय" होने का इसलिए आरोप नगया जाता है कि हम-बास्यावदा नहीं बन्ति तस्यों के विस्नेषण के आधार पर—यह मानते हैं कि बीदोगीकरण सदा को मांति अब भी उन अवाम की एकमात्र आसा है जो सारे संसार में हर कहीं अभी भी कंगाल हैं। यहने का आशय यह कदापि नहीं कि औद्योगिक समाज, जैसा कि हम जानते हैं, सब कुछ ठीक ही ठीक है; नहीं, उनमें बहुत कुछ गतत है और जते ठीक किया जाता है। हमारा आशय यह क्यापि नहीं है कि हम तयाकियत श्री-समृद्धि के दिखावटी आकर्षणों के प्रसोजन में बह जाय, हमारा बुनियादी लस्य थी-समृद्ध समाज उतना नहीं है जितना होतम विशेष शुभवादा शब्द लाचाष्ट्रक ग्राम उहाँ हैं —और यह दावा विता ही बटत है जितना अन्य कोई भी दावा हो सकता है—कि रामराज्य के ऐसे स्वप्न में द्वयं जाना गलत और आस्पराज्यकारी है जिसका कमी बितित्व ही नहीं रहा। सच तो यह है कि गिनेन्चुने रंगमहलों को छोड़ कर मानव जानि की जीवन-दसाय, आज हमारे इस जमाने तक, सगमग अक्यनीय

वताहरताल नेहरू, दुवर्डस फ्रीडम (न्यूयॉर्क, १६४१), पू. ३१८-१६-्री, हे, उस्तियन, गांधी ऐंड की इंडिया, (बंबई, १९४६) पृ. २३०.

पहीं हैं। स्वाभव दो-विहार्द पुनिया में तो ये हापते अभी भी पहले जैसी हैं।

महरहात, मांभी जी यह मोचते ने कि जस्ततर आज्यातिमा जीउन के तिर द्वानीय हैं। यह जर्मग है कि मौनिक क्ष्महाकी का ग्लर गीमा हो। "जब कभी मैं क्लि वेलवे देन में प्रवेश गणवा है या कियाँ मोटर में घडता है, तो में जानता है हि में श्रीनित्य संबंधी आने बीप के प्रति दिमा वर रहा है," मह उन्हेंदि हिंद स्वराज में निता या जिसभी प्रस्थापनाओं का, जो अब माठ मान में जार पुरानी हो चुनी, न नी कभी सदन किया गया और न जिनमें मनम में बते लायक समीपन किया गया। और हमी कार्ण वे जनता के लिए आने कार्यन के आवरमक मुरी के रूप में 'मुटीर उद्योगी', 'मेटी के लिए अम' (जो हर व्यक्ति को करना पाहिए) तथा 'प्राकृतिक निकित्या' की नर्पा करने तथे। कभी-मभी निसंदेह ऐसा प्रतीत होता था कि अपने आचरण में बह बते विचार के प्रति विधिनता दिगाते हैं, किन्तु उन्होंने यह कभी नहीं स्वीता किया कि मशीनी सम्यता के गुण उसके दोषों में कहीं वड़ कर हैं तथा जीबोर्कि युग से पूर्व में वापस जाना अनुचित या असंभव है, चाहे भारत स्वयं की विस घटनाक्रम के प्रवाह से बाहर एक एकांतिक प्रायद्वीप के रूप में क्यों न माती और पूर्णावस्था की उत्कट कामना करे। इस तरह विनोबा भावे होते जयप्रकाश नारायण, जो आम तौर पर उनके चिन्तन के उत्तराधिकारी मी जाते हैं, कभी-कभी उञ्चतर जीवन-स्तर की घर्चा एक नयी अंध घडी के प्रति के रूप में करते हैं तथा यह याद दिलाते हैं — जैसा कि जयप्रकाश नारायप के कोई दस साल पहले रंगून में एक अन्तर्राष्ट्रीय श्रोता मंडली के समझ ही था—िक हमारा लक्ष्य है "मुक्ति—चाहे हम उसे निर्वाण कहें या मोझ-रें और काल की सीमाओं से, जीवन और मृत्यु की सीमाओं से,बंघन से मुक्ति । निस्संदेह इसकी व्यक्ति एक निस्संदेह इसकी घ्वनि एक अस्पष्ट भव्यता से भरी है और किसी भारतीय है लिए तो इसमें गहरी मोहकता मोजूद है, किन्तु हमारी जनता की समत्याई को देखते हुए जिन्हें को देखते हुए, जिन्हें उच्चतर नैतिकता की भलकियों मात्र से हल नहीं जा सकता, ये निहायत खोखली और भ्रामक हैं।

वहरहाल, गांघी जी सपने देखने वाले या कल्पनाओं में खोये रहते की मात्र चिन्तक नहीं थे। उस हालत में उनके विचारों पर वहस छेड़ने की हर्ता लिए कोई जरूरत नहीं होती। तव तो वह प्यार और आदर के साथ एक सुन्दर और निष्प्रभाव देवदूत के रूप में याद किये जाते जो समय-समय अनुष्य के बीच अवतरित होते रहते हैं! किन्तु वह तो मानव और धटनी

र हे जिले के ने मुखर्जी, गांघी जी ए स्टडी (कलकत्ता, १६५६), पृ. २०६,

के सर्जेक थे—एक विस्मयकारी व्यक्ति, भारतीय घरती के, सांसारिक तथा शक्तिः और परित्र की असाधारण क्षमता से सम्पन्न व्यक्ति । फिर भी वह समाज में दर्ग से ऊपर और वर्ग हितों से उदासीन नहीं हो सके; अहिंसा की नैतिक अवपारणा के प्रतिपादक के रूप में भी वह सामाजिक शून्य में कार्य नहीं कर रहे थे। उनके अपने वर्गगत नाते-रिक्ते थे और उनका अपना ऐसा इंग्टिकीण षाजो उन वर्गगत सीमाओं का अतिक्रमण नही कर सकता पा जिन्हें उन्हीने सहब ही प्रहण कर लिया था। अतः जहां यह दावा करना मूर्छता होगी (बैसा कि शायद कम्युनिस्ट लोगों ने कभी कभी उत्साह के अविरेक में किया) कि गांधी जी पंजीपित वर्ग के सचेत और स्वैच्छिक अस्त्र से, वहीं इस महत्व-पूर्ण तथ्य की उपेक्षा करना मी बृद्धिहीनता होगी कि गांघी जी अपने जीवन में बार-बार "समकोते की खुबसूरती" पर-अर्थात ब्रिटिश साम्राज्यबाद के काय संघर्ष में ऐसे स्वीकार्य समझौते की खूबसूरती पर जो देश की कुछ बाबाओं को संतुष्ट कर सके तथा उग्र जन-विस्फोट को दूर रस सके—और देते में। इस बात पर जोर देकर वह कुछ करना चाहते में, उसका मेल पूंजी-पति वर्ग की इस आकांक्षा से बैठता या कि सीमित प्रयास किये जायें, सीमित बारिक और राजनीतिक उपलब्धियां हासिल की जायें तथा सबसे बढ़ कर, कान्ति की समस्त संगावना तथा उसके साम जुड़े अवरिमेय सामाजिक-आर्थिक परिणामों से बचा जाय। यह बात बार-बार देखने में आयी थी कि पूर्जीपति वर्ष, अपने उन 'नरम दलीय' तवकों समेत जो कांग्रेस से भी कतराते थे, यह जानता या कि जनता के उपल-पूचल के जिस तूफान की नियंत्रित कर सकते में वह सर्वया असमर्पं या, उस पर केवल गांधी जी ही काबू पा सकते ये। भौरी-भौरा (फरवरी १९२२) से लेकर जब कि उन्होंने एक ऐसे विराट बान्दोलन को रास सींच सी यो जो परिपक्त होकर जुमारू रूप से रहा था, नाबिक विद्रोह (फरवरी १६४६) तक को वस्तुतः एक जबदंस्त देशस्थापी उनार का घरम उल्कर्ष या, यह बात बार-बार देखने में आयी कि केवल गोपी जी ही अवाम के बीच अपनी अडितीय साख के नारण, अपने परित नी वानी-मानी निःस्वार्थता और मध्यता के कारण, जनता के हृदय की बशीभूत करते की अपनी विसदाय समता के कारण जो भी राजनीतिज्ञों के बम के बाहर की बात होती है, जानि की रोक सकते ये और साथ ही अवाम से श्मान गति के अपना आधार बनाते हुए साआग्रवाद के साथ कमोदेश टीक विषये वाला सौदा पटा सकते थे।

रियों छतान्दी के फांसीसी चिन्तक रेतांने एक बार वहां या कि जब निर्देति किसी महायुक्त को बिनाय नहीं कर बातो तो वह उसके पास प्रतिसीध के कुछ जिल्ला भेज देशों है। इस मकार मोची जी के बिला मेलों और 'अहिनार' जैसे थारदी की पीत की तरह रहते हैं और इनसे असे जुड़े होंगे का दाना वज्ले हैं, हालांकि, इस की भाग है कि भनेक विचाहित स्मिती की तुरह ने उनमें तुरा-तुरा यहते हैं। अनके निकार में गांभी ओं ने बच्छा अवेशि भी और स्वयं अपने अर्गवाक्त त्रावीको में भारत की स्वायीनता होति की और उनके इस थेय में वे आम और एर रवर्ष साम उठाने की माझू कोशिश करते है। अगर गय गत कही जाय तो गायी जी और उनहीं मंदी को भारतीय स्वतंत्रता का इस लग्द श्रेष देवा समभय सालिस मुठ है। मात के मुपुरायन निकेतन में अनेक प्रकृष्ट है, तथा हमारे राष्ट्रीय आस्त्रीतन है अगेक मूल को है। स्वतकता के लिए संघर्षक भारत के इतिहास में क्लिए य्यक्ति ने उत्तनी यथी भूमिका नहीं अदा की जितनी महातमा गांधी ने, पर उन्होंने बिलगुल नथी जमीन नहीं तीही, न ही अनेले मारा काम किया। इत संवर्ष के कीर्तिमानों को न सो किए में किनाने की जरूरत है और न उर्हें गिनाया जा सकता है। इस मधर्ष में एक छोट पर वे लोग ये जो कभी लिंही के गामल नहीं हुए जैंग कालिकारी 'आलंकवादी' तथा मुद्र कालीन 'आजी हिन्द फीज' जिसका नेतृत्व 'नेताजी' सुभाषचन्द्र योस कर रहे थे, तथा इंडर छोर पर काररानों और गेनों के फेहनतकश लोग थे जिन्होंने शक्तिशाली तथ आम तौर पर (गांधी जी ओर गांधीबाद से) स्वतंत्र भूमिका अदा की है। यह विलकुल ठीक जचने वाली दलील दी जा मकती है कि स्वतंत्रता के हमीर संघर्ष का इतिहास बार-बार यह प्रकट करता है कि स्वयं सत्यागह से अर्थि सत्याग्रह की बंधी लीक से जनता के क्रुड होकर हटने के कारण साम्राज्यका के हृदय में भय उत्पन्त हो गया और एक मंजिल पर पहुंच कर उसके अस्ति का भारत में जारी रहना असंभव बना दिया। हमारा उद्देश्य देशभिक्ष संघर्ष में जनता को लामबंद करने वाले एक जबदंस्त हेतु के रूप में सलाई की प्रमाणित भूमिका को अस्वीकार करना या उसकी खिल्ली उड़ाना नहीं (बल्कि यह तो गांघी जी का बेजोड़ अवदान है); किन्तु भारतीय स्वातंत्र्य संग में सत्याग्रह की अनन्य शक्ति का दावा करना अन-ऐतिहासिक और असल है यह कोई संयोग की बात नहीं बल्कि एक महत्वपूर्ण घटना है किई और जब अगस्त १६४७ में स्वाधीनता का आगमन हुआ वह गांधी बी हृदय में आलोक नहीं लायो, विल्क उनके हृदय में एक ऐसी नयी पीड़ा कर गयी जिसने कर गयी जिसने कर गयी जिसने उनकी जीवित रहने की इच्छा को ही समाप्त कर उनके शिष्यों ने जैसे एक निश्चित मंजिल पर पहुंच जाने के साथ संतुष्ट लेना पसंद किया और "इतने कम रक्तपात और हिंसा से" की गयी उपल पर फूले नहीं समाये। पर गांधी जी को इस तरह के मिथ्यावाद से वेव

नहीं बनाया जा सकता या कि भारत की अपनी आजारी के लिए कोई ज्यादा **दीमत नहीं पुकानी पड़ी। जान बुक्त कर विभाजित किये गये भारत को** साम्राज्यबाद द्वारा सत्ता के हस्तांतरण में हो यह निहित या कि उस घटना के पहले और बाद में तथा उसकी आनुपरिक अनिवासैता के रूप में इतनी मानव यंत्रणा सामने आयेगी जो परिणाम और प्रस्तरता की हरिट से शायद इतिहास की किसी भी महान कान्ति के साथ आने वाली यवणा से मुश्किल से ही कम हो। यही नहीं, ऐसी कान्तियों से जिल्ल दो राज्यों के निर्माण के पहले और बाद में भारत और पाकिस्तान की जनता को जो यंत्रणा भूगतनी पड़ी, वह मूलतः बिलकुल बेंमानी थी और किसी बड़े कार्यं की प्रेरक कर्ताई नहीं थी। यह ऐसी यंत्रणा भी जिसकी भीड़ा की किसी आदर्श के आलीक से घटाया नहीं जा सकता था, जो घरीर और आंत्माको अवसन्न कर देती है त्या वेदना के दौरान चरित्र के जन्नायक गुणों को मुक्त नहीं करती है। यह तो ऐसे हुआ जैमें कि हमने अपनी आजादी ऐसे सिक्के से सरीदी हो जो नैतिक दृष्टि से जाती या और जिसने हममें ऐसे नैतिक अधापतन को जन्म दिया जो त्व से हमारे साम लगा है। जिस तरह हमने अपनी आजादी जीती--अगर चेते जीतना कहा जा सकता हो — उसने बाद की हर चीज पर एक अवांछित धाप छोड़ी और सबसे बढ़ कर उसने महान गांधी को उदासी से भर दिया।

यह तब कहते का अप यह नहीं कि देश की बाजादी तथा सामाजिक दुर्गान्ता के तारित्वों, दोनों के नामनों में गांधी जो के कार्य को परता कर साकते की प्रमिक्त पेता की जा रही है। हमारी समस्याय विश्वल और पेवीवा है। उत्तराधिकारी होना बताराक है और हम पांच हजार वर्ष के बहुक्षों पिंहास के उत्तराधिकारी है। सामाजिक और लाबिक अधिवारी को सामाजिक की स्वाप्त को सामाजिक सिंद सामाजिक की स्वाप्त के उत्तराधिकारी है। सामाजिक की स्वाप्त के उत्तराधिकारी है। सामाजिक की स्वाप्त के उत्तराधिकारी है। सामाजिक की स्वाप्त के उत्तराधिकारी में सामाजिक की स्वाप्त की सामाजिकारी के सामाजिकारी की सामा

^{ैं} जिनस्त, पुर्वोक्त रचना में इस विषय की कुशन चर्चा की गयी है-

"मैंन पहले ही दिन देखा कि मुगोरीय लीय धारतीयों के माम जर्म आगमान जरक बर्चान करते हैं 1... मार्गि इन वर्ग में एक पुनिस कार्ने के में मुगे सबका देकर देन में बाहर कर दिया और देन के परे पर्ने के की मैं कार्यान की ठंड से प्रतीक्षावय में सार-पर कांग्या हुआ बैठा छो। मुगे नहीं पत्ता था कि मेरा धमवाब कहा है, में ही इस बर में मुने लिं में पूर्णों की हिम्मन भी कि कहीं मुग्ने किए ने आगमानित क्या गर्म मुगे पर हमला मीन दिया जाय। भीद आने का कोई सवान ही की पैदा होना था। मेरे मिनका पर मंदेह हानी हो गया। यह नी देखें मैं इस निकार्य पर पहुंचा कि भारत वार्ग्य भागना मुनदिनी होती। की जो बीहा उठाया है, समें मुग्ने पूरा करना चाहिए।"

ये स्वयं गांघी जी के दाबद हैं, जिन्हें उन्होंने गीन भाव से वह दिन पर जो तूफानी वर्ष दिमाय हैं। देन से निकाल दिया जाना और एक गांड़ी किया हमला तुच्छ घटनायें मालूग पड़ सकती हैं, क्योंकि इस तरह ना करने फरना और पीड़ा पहुंचाना जाम बातें थीं। पर एक संकोची और संवेदनकी युवक ने इन्हें ऐसे धैयें के साय सहन किया जो उसमें उस समय पैदा हुआ ज उसे यह बहसास हुआ कि उसे इसे न सिफं अपने हक में बिल्क दूसरे तोजों हक में सहन कर लेना चाहिए। इसके साय उनके मन में से विश्वास का वर हुआ जो वैसे ही वैसे बढ़ता गया जैसे-जैसे वह दिक्षण अफीका में—कर्ट र रचनात्मक तरीके से अपने सिया दूसरे लोगों की मुक्ति के लिए इस्तेमाल कर के लिए—संघर्ष करते रहे। वर्षों वाद गांधी जी ने कहा: "मुफे अपने प्रमें में समस्त मानव जाति को समेटना चाहिए।" मारिट्जवर्ग में उनकी से पूरी नहीं थी, पर वहीं उनका ऐसे जीवन में पुनर्जन्म हुआ या जिसे एक कि घरातल पर जिया जाना था।

[ै] मो. क. गांघी, सत्याग्रह इन साउय अफ्रीका, (अहमदाबाद, १९२० पृ. ४२.

सदसा पहुँचाने वाले इस अनुभव ने यांधी जी को चुरी तरह फकफोर हिया और प्रय के कंपनों से पहुँचे-पहुत मुक्ति ही—हमारे प्राचीन पुरसों के धन्दों से असम न केवल भीतिक साहब मा, बिक्त इसमें में असम का भीतिक साहब मा, बिक्त इसमें में असम का केवल भीतिक साहब मा, बिक्त इसमें मा केवल में मा केवल में स्वाची का पाणी जितनी निर्मयता जगाणी उतनी केरें एक व्यक्ति कर्ती ज्या तका —और वह की राज्य के स्वच्या सामाजिक विच्या के प्रति निर्मयता, न सिक्त राज्य के बत-प्रमोग करने वाले मंत्र के मित विक्त सार्व निर्मयता, न सिक्त हिम्मयता, भूत और मुसीवत का सामाज विक्त सार्व निर्मयता, क्ष्मयता कि मा कि स्वच्या मा सामाज स्वच्या सामाज स्वच्या सामाज स्वच्या सामाज स्वच्या सामाज सा

· '' : y :

हमारे तथाकरित 'आनंकवादी' यह प्रमाणित करने के लिए कि 'विदेशी प्रमुख हमें प्रावहर है, भीन की भी 'युनीतों देने को तरार रहते थे। वे ऐसे लीक के दिन का तरार रहते थे। वे ऐसे लीक के विनक्त भारत तथा कमान करेगा नवींकि जन लोगों ने हमें अपने पुरस्तक का स्वातिकान पुत्र: अनुन निया। उनके तथा बहिता के देवहुत गांधी और वीच बहुत की हो शादि है कि सु अभय के परातन पर दोनों आ किनते हैं। गांधी जी कहीं: "अतिरोज मंत्र करों, किसी भी हाजत में दिवा का जवान हिता से मत ''-प्याधि के सु के

महासमा कह कर जब उनकी जयजयकार शुक्त हुई उन्नसे पहले भी वे प्राय-ऐता काहत प्रदक्ति करते रहे जिससे जबने सामियों के बीच अपनी प्रतिका रूरी के भी तथे पर कानों से नहीं हिचकते थे। उनसे प्रावरी १९१६ में बनारस दिन्द विस्तिवासय के उद्यक्तिक के अवसंद पर भाषण देने में के कुछ गया।

₹ €

ना त्रकालीत विक्ति बादणग्य निजनियालय का शिलालाम करने गति भीत भीशन एवं भाननीतित जीवल के पालको व्यक्तियों के अवसा महीत्र माशे हा पुरा तमाव था। पर अपने आग मामुशी पहनाचे में महा एते जो पारो और दी जी विश्ववित्र और तहा अहम देखी यम पर कर्ति विद्या किन्यु अस्पत्त रपालतारिया के साथ पहांच करते हुए मंघात वर्ष की मली की । जुली बहा एक्च "मधान थोगो" में नुखा कि नया "अपनी जारत है। निहिमों को साली कर देना और सुद्दी में थीरी तक मना मंत्रम दिस्ती उहीं या, भीर उन्होंने यह भेजावनी ही कि एतं तक आप आसे जेवसाकी जार नहीं फीरों और अपने देशवासियों के लिए यह अमाना नहीं बना दी तब क भारत की भाग नहीं भित्र महत्वा।" आशे और पुलिस और मार्रे सिबात है गुलवरों की भीड़ का उत्तेष करते हुए उन्होंने स्वर क्रेसा कर के पूजा:

"बहु अविस्ताम वर्षो ? क्या यह बेहतर नहीं कि साई हार्डित (बार्क) राष) जिल्हा भीत जीने के बजाब भर जायें ?... हम पर इन मुक्जिं है थोप देना मयों जर्रों था ? हम गुरमा हो सकते हैं, फुँमना करता रोप दिला माले हैं, पर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि आज के भारी ने अपनी वेनको में असाजकतावादियों की एक की ज की जम्म कि है। में स्वयं भी एक अराजकतालादी हैं, पर दूसरे किस्म की ...।

यह कथन क्षोजस्थिता ने भरा था। अध्यक्ष पर पर श्रीमती ऐती वेर्तेर ही जिल्ली जो तिलमिलाती रहीं ...। "कृषमा मह यद कीजिए," ये बोल पड़ीं, पर गाँवे जी के यह कहने एर जी के यह कहने पर नरम पड़ गयी कि, "अगर आप यह सोबती हैं कि तरह से में बोल पड़ा के तरह से में बोल रहा हूं उस तरह बोल कर में देश की और सामान हों सेवा नहीं कर रहा रंगे के कि सेवा नहीं कर रहा हूं तो मैं निरचय ही बोलना यंद कर दूंगा।" किर्तु कर्ते वाद उन्होंने करा ि दें। बाद जन्होंने कहा कि मैं "मुखर चिन्तन" कर रहा हूं और इस "मुखर बिन्त" के दौरान बह गरम के के के दौरान वह गरम हो गये:

"अगर हमें स्वशासन पाना है तो हमें उसे लेना पड़ेगा। हमें स्वराति मंजूरी कभी करी की मंजूरी कभी नहीं दी जायेगी। ब्रिटिश साम्राज्य और जनता है जिहास पर निमान करी इतिहास पर निगाह डालिए; वह स्वातंत्र्य-प्रेमी हैं और वह ऐसी वर्ते को स्वयं न है को स्वतंत्रता दिये जाने की हिमायत नहीं करेंगे जो उसे स्वयं नहें सकती हो। अगर अगर नहीं करेंगे जो उसे स्वयं नहें सकती हो। अगर अगर नहीं करेंगे जो उसे स्वयं नहें सकती हो। सकती हो । अगर आप चाहें तो बोअर युद्ध से अपना सबक सीवें ...!

लघ्यक्ष महोदया के लिए यह असह्य हो गया। वह देर से तिर्लीम्ही हैं ए थीं और उठ कर चलती बनीं। यह अपूर्ण भाषण वाग्मिता के वर्लासिकी हैं हैं होना—आइंबरहीन, सरा, भारत के भारी पतन पर क्यापात करने वाला भावोदेक उत्हरट इंट्रांत ।*

सगमग उन्हीं दिनों उन्होंने स्वरेशी आत्मनिभरता की आवश्यकता तथा जनता की गरीबी के बारे में महास में कहा:

"यह सब अर्थहीन माल्रम पह सहता है। भारत ही अर्पहीन घोत्रां का रेग है। अनर कोई सदय मुसलमान पीने के लिए गुढ जल देने को तैयार हो वो प्यास से पता मुलाना अर्पहीन है। और फिर भी हजारों हिन्दू किसी मुस्तिम परिवार का पानी पीने की जगह प्यास से मर जाना बेहत समफ्रेंगे। अगर दन सिर्शावर सोगों के भर विवतसा दिला दिया जाय कि उनके धर्म का तकाता है कि वे केवल भारत में बने बसत्र पहनें भेर केवल भारत में देश किया गया अनाज खायें, तो वे और दिल्ती कपड़े के पहने या और किसी अनाज को खाने से भी दनकार कर

्रिक्त के सार्वजित जीवन में एक सर्वया नया साहसी स्वर था— पुरु ऐते व्यक्ति का स्वर जो वस्तुनः मारत को ही घरती से आविभूत हुआ था, एक ऐते व्यक्ति का स्वर जो वस्तुनः मारत को ही घरती से आविभूत हुआ था, एक ऐता व्यक्ति जो अङ्गा, परस्पर विरोधी, नामुप्रकिन बातें करता था और किर भी ऐसे साहस, ऐसी व्यक्ष्या तथा आस्या के ऐसे आग्रह के साथ इन बातो

ी. थी. वेंदुनकर, महास्था, जंड है, पू. २६६, टेनिए होसर ए. बेंक (चंपारक), वि गांधी रोडर, पू. १२८, मंत्रिया हो या इंडलारनाय के बंध सावान के महाइये में मंत्रित में सम्बद्धित हो या इंडलारनाय के बंध सावान के महाइये में मंत्रित में समयतीह नयान में दंव निर्मार्थ के संवधित में समयतीह नयान में दंव निर्मार्थ के संवधित में नामहार्थ में मंत्रित में समयह इंडलार्थ के स्वधित में स्वधित में समय के स्वधित में निर्मार्थ में हो सान्द्रीय देव होंगे सीति में मानी हुए मालि की तीर पीट समय के ही समय के निर्मार्थ में सिर्मार्थ में सिर्मा

: ६ :

गांघी जी का मतवाद मवंशी बहम, ऐने मी हों पर मतत पर उनर लाती मी ब जसकी कम से कम जरूरता होती थीं। उसके कारण बार-बार ऐसे जन उसर निरुद्ध हो गये जिनका नेतृत्व अकेले यह ही कर सकते थे। ऐसी नौबर्ते १६२२ में, १६३१-३२ में, १६४०-४१ में, १६४५-४६ में आयी। इसी लजीव स्तर् पर एक अत्यंत विश्रुत मानसंवादी गुस्से में आकर उनकी भत्तंना कर के थे। अपनी वलासिक कृति इंडिया दुडे (सन्दन, १६३६) में रजनी पान दत्त ने, जो गांधी जो और उन जैसों के प्रति आम तौर पर बहुत ही सब और विनस्ती का परिचय देते थे, इन आवेशपूर्ण शब्दों में उनकी भत्सना की : "क्रान्ति का यह मनहूस व्यक्ति, संपूर्ण विनास का यह नायक, पूंजीपति वर्ग का यह सीभाय रक्षक ।" यह आस्रोश सर्वया अनुचित नहीं है, किन्तु जीवन के तर्क के सपरे ख़ब्त होते हैं और गांधी जी जैसे चमत्कारी पुरुष के प्रति (क्योंकि वह चमत्कारी पुरुष अवश्य थे) 'अपनाओ या तिलांजिल दो' का रुख नहीं अपनी जा सकता है। वहरहाल, इस बात पर घ्यान देना जरूरी है कि जब उनकी अपेक्षाएं वास्तविक होती थीं, जैसे १६२०-२१ में जन दिनों वह १६२१ के भीतर ही स्वराज लाने का वनन दे रहे थे—तब वह सिद्धान्त के मामते में अपनी कठोरता को शिथिल करने के लिए उद्यत रहते थे। यह इंने दर्व का साहस था, खास तौर पर इस बात को देखते हुए गांधी जी कैसे व्यक्ति थे। वह जानते थे कि मुस्लिम कमोंपदेश और उनके अनुयायी उनके अहिंती के सिद्धान्त में विश्वास नहीं करते थे, किन्तु जब जनता इतनी गहराई से उतिजित थी, वह आडंबर को तिलांजिल देने को तत्पर है ह मार्च १^{६२०} को उन्होंने कहा:

"कुरान पर बाधारित मुसलमानों के विशेष दामित्व हैं जिन्हें हिन्दू स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं। इसलिए असहयोग एवं अहिसा के असफल हो जाने पर इस बात का निर्णय करने का उन्हें अधिकार है कि वे ऐने सारे तरीकों का सहारा लें या न लें जिनके लिए इस्लाम के धर्म-प्रेमों में इजाजत दी गई है।"

यह एक किस्म का नैतिक जुआ या किन्तु सच्ची वीरता के साथ उन्होंने स्वयं ते हैं बुद्ध किया और जोलिम उठाया। असहयोग संघर्ष के चरम इत्हर्ग के समय भी वह मोपता विद्रोहियों का समर्थन करने से भी नहीं हिनके। उन्होंने कहा कि ये "बहादूर ईश्वर मीव" लोग हैं और असहा चत्तेत्रनात्मक कार्रवाइयों के कारण ऐसे कृत्य करने की मजबूर हो गये जिनकी आज सम्मानित नागरिक सोग निन्दा कर रहे हैं । वर्षों बाद, १९४२ में उन्होंने ऐसे सन्द कहे जिन्हें यह देश कभी भूत नहीं सकता—ऐसे सन्द जो दुख की बात है कि उसी अनुपात में नंतीजे नहीं दे सके किन्तु फिर भी साहस और चारित्र्य को अत्यधिक उद्बोधन प्रदान करने वाले थे।

१६४२ में कुछ समय तक जन-आन्दोलन संबंधी गांधी जी की परिकल्पना विहिंसा संबंधी उनके निरोधों से मुक्त रही। उन्होंने पत्रकार लुद्द फिश्चर से सप्ट कहा: "गांवों में किसान टैवस देना बंद कर देंगे ।...उनका अगला कदम वमीन को छीन, लेने का होगा।" जब फिशर ने आरवर्ष से पूछा: "हिसा से ?" तो उत्तर मिला:" हिंसा भी हो सकती है, पर जमीदार पार्हें तो सहयोग कर सकते हैं !" अपनी आशाबादिता के लिए चुटको सी जाने पर गांधी जो ने मजाक किया: "ज़मीदार भाग खड़े होकर भी सहयोग कर सेकते हैं।" फिशर ने फिर से "हिसात्मक प्रतिरोध" का होवा खड़ा किया। लेकिन गांधी जी के पास उनके लिए यह जबर्दस्त जवाब सैपार या: "संमव है, पंद्रह दिनों तक अध्यवस्था रहे, पर मैं सममता हूं कि हम उसे धीघ्र ही नियंत्रण में ले आयेंगे।" द अगस्त १६४२ को उन्होंने एसोसिएटेड मैस की और से इंटरब्यू लेने वाले पत्रकार से कहा : "अगर आम हड़ताल जरुरी हो जाती है तो मैं बीछे नहीं हुरुगा ।" इससे बोड़ा पहने वे नह चुके षे: "मैं आपको एक छोटा सा मंत्र देता हूं। आप इसे अपने हृदय पर आक सकते हैं और हर सांस के साथ उसे अभिन्यांक दे सकते हैं। मंत्र है: 'करी या मरी'। हम या तो भारत को आजाद कर लेंगे या इसकी कोशिया करते हुए वान दे देंगे।"

वेंद्रतकर, पूर्वोक्त, पृ. ३४६.

1

वही, संड ६, पू. १३४; एव. अतेश्बेडर, इंडिया तिस किरत, पू. ३३, ४१.

मार्थ को उन्हें शहर पुरुष भी में इन्ने निष् पह से अपना मार्थ में कि मुर्देश का मार्थ मार्

: 10:

पर वटा हा मन है है कि अगर मार्थी जी थोड़ में बेतान रहे होते और कि वित्र गमान के पश्चिम में जानी जनता की मगम्याओं को मनम मही जिसकी गामाजिस और आवित अवित्राय ताओं में न तो जनका परिचय मार्थी में व तो जनका परिचय मार्थी जो पह मार्ग दिसाया होता जिस पर में प्रभाव पाति सन यात में ने चीत में जो पर मार्थी होता पाति सन यात में ने चीत में बेटार नगे के में निभावा, पर मार्थी जी अरेडा हुत अधिक उर्वेद विमूर्ति हैं गर भी, मही निभावा, पर मार्थी जी अरेडा हुत अधिक उर्वेद विमूर्ति हैं गर भी, मही निभावा, पर मार्थी जी अरेडा हुत अधिक उर्वेद विमूर्ति हैं

किल् इतिहान में ऐसा बौत है जिसने हर प्रश्नासा पूरी की हो ? बीं गापी जी में हमें इतना मिला है कि अपनी सारी विकायतों के बाव इंद हैं उनका अभारी होना चाहिए। और यह आभार इस तथ्य के बाव इंद मान भाटिए कि यह व्यक्ति, जिससी चीति का भारत में किने हजार वर्षों में सबें ज्यादा प्रसार हुआ है, मेहनतक्या अजाम को व्यार जरूर करता था पर जी कभी उसने सामाजिक सवर्ष के लिए पर्यान्त रूप से परिसक्त नहीं माना।

इस सरह गरीयी की, भूमि की औद्योगिक प्रमित की हमारी समस्यार्थ के गांधीवादी उत्तर हमारे सम्मान के पाप है पर इस्के-दुवके उत्तरों को हो

[े] तेद्रवक्षर, पूर्वोक्त, संद्र ८, प्. ३५१-५२.

ं कर वे कारगर नहीं हैं। सर्वोदय मावना से प्रेरित भूमि के, पूरे के पूरे, यांवां के, संपत्ति के, स्वयं जीवन के सारे दान स्तत्य आदर्शवाद का हप्टांत अवस्य पेंग करते हैं। किन्तु किसी वास्तविक समस्या को हस नही करते जिससे सामा-विक आदिक स्पांतरण के लिए जनता द्वारा राजनीतिक सत्ता धीत लेने की बावस्यकता नहीं समाप्त होती:। दर असल स्वयं जनता के संपर्य के जरिये माधार तैयार हो जाने पर सिंहरणता और करुणा जैसे गुण और बदी से दूर एते के सद्गुप, सोगों में स्वतः आ सकते हैं। ऐसे संघर्ष के लिए वातावरण ही हिट करते में गांधी जी ने अद्वितीय योगदान किया किन्तु स्वयं ऐसे संधर्प के प्रति वह उदासीनता और अक्सर विरोध का भाव रखते थे।

: 4:

किर भी हमारे देस में १९२०-२२ में और उसके बाद अनेक बार अभय की जो अभिनित्ता प्रश्वतित हुई ससकी स्मरण कर भारत में किसे गौरव का अनुभव नहीं होगा ? इस महान विमृति के सिवा और कौन उस तरह बोत सकता पा वैने दह १० मार्च १६२२ को अपने "महाभिष्योग" के दौरान बोले थे :

"मैं जानता या कि मैं आग से लेल रहा हूं। मैंने खतरा मोख खिया और अगर में मुक्त कर दिया जाऊं तो फिर में बसा हो करूंगा।...अहिसा मेरी आस्या का पहला सूत्र है। यहीं मेरे सिद्धान्त का आखिरी सूत्र मी है। पर मेरे सामने जुनाव करने का सवाल था। या तो में उस व्यवस्था के सामने सिर मुका देता जिसने मेरे देश को अपूरणीय क्षति पहुंचायी है या अपनी जनता के उस प्रचड कीप का भाजन बनने का सतरा मील नेता ंजो मेरी जवान से सचाई समक्र लेने के बाद पूट पड़ता। "

उपर्युक्त मुकदमें में उपस्थित होने के दौरान इस शिष्टतम पुरुष के मुह से भी राष्ट्र निकले, उनमे किसे रोमाच नहीं हो जायना, चाहे उसका मिजान वितना भी कान्तिकारी क्यों न हो :

"... शहरों में रहने वाले नही जानते कि किस तरह अधमूखी भारतीय जनता धीरे-धीरे निष्प्राण होती जा रही है। वे यह नहीं जानने कि जनका निरानंद सुख उस दलाली की रकम का प्रतीक है जो उन्हें विदेशी ाने वाले उनके कार्यों की एवन में मिलता है, भोषक के , और मुना के जनता से जूने जाने हैं। वे यह वीर .

भारत में कानून हारा कायम सरकार जनना के नही

इस शीपण के लिए ही भवानी का पही है। अनेक मांगें के संगत इन मही आसी के महमने जो महत्व हैन करते हैं उसे कुतर के बलि, आन हो भी मालीएरी के जिस्से भूदवाना नहीं जा मनता। मुक्ते हा मान में जरा भी मदेह नहीं कि अपर कार भगवान हैं तो उसरे सानी इमसेंह की और भारत के वाहरी कोगों की, दौनों को, मानवना के निष्य निषे जा के यम जुमें का जनाय देना पहेगा की गायद इतिहास में बेनजीर है।"

यह मंभव है कि मही आयरण पर और दी हुए में मुंदर स्कूरण सानी आ जाते थे उन्हें घोड़कर वह इस प्रसाधारण हुन में जटिन संसार में भारत को आगे की राह नहीं विधा मके। किन्तु उन्होंने हमारी जनता को पुणें की जड़ता से जगाया और उमें इस यात भी नयी भेगना और साहस प्रदान किया कि सभी लीग एक साथ मिल कर पैशानिक माझाज्यवाद से लोहा लें। इसें आरचम की कोई यात नहीं कि उस वियतनाम के नेता राष्ट्रपति हो-बी-फिल ने जिसकी बीरता ने इतिहास में एक नयी दीध्व फैला दी है, कुछ वर्ष पहले दिल्ली में कहा था कि पत्रकारों ने जो विषतनाम में उननी अपनी भूमित और भारत में गांघी जी की भूमिका की तुलना करने का प्रश्न किया है वह "सवाल हो गलत" है। उनके विधार से ऐसी तुलना "सूर्यता" होगी। अर्ग उन्होंने कहा: "में और दूसरे लोग क्रान्तिकारी हो मकते हैं पर हम सर्ग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में महात्मा गांची के दिदय हैं; न इससे ज्यादा न इसते कम। " प्रकटतः इस वक्तव्य में बहुत ज्यादा गुडार्य सीजने की जरूरत नहीं पर यह अर्थकां किन पर यह अर्थपूर्ण अवस्य है। कम्युनिस्टों का गांधी जी से उप्र मतभेद है किन्तु उनके प्रति हमारा अभिवादन ईमानदारी का है। वह हमारी सारी प्रत्याशाओं को नहीं पूरा कर सके, किन्तु वे वेजोड़ थे श्रीर हमारे भारत का वेजोड़ प्रति निवित्व करते थे जो वस्तुतः विषुल अतीत तथा जससे भी विषुल भविष्य के

[ै] कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांघी, खंड २३, पृ. ११०-२०. े देखिए टाइम्स आँफ इंडिया, (दिल्ली संस्करण) ७ अप्रैल, १६६८.

गांधी जी और १९२५ के दौर के क्रान्तिकारी मन्मयनाथ गुन

٠,

ŧ

1

भेषी भो बन के बिस्फोट को तारह सामने नहीं आये। गांधी जी को समय-यान करते हुए अपने अनुकूत नरामों की अर्थात सही बस्तुगत परिस्थितयों की अरीया करनी पक्षे। जबाहरसाब नेहरू ने इन दाव्हों में "मगत सिंह बी पिस्तवकारी सोकडियान" की सम्बद्ध के के .

"चन्होंने (साला साजपत राय ने) अपने ऊपर हुए हमले से पुड़े अपने व्यक्तिगत अपमान पर क्रोध और कटुता का उतना अनुभव नहीं विद्या बितना राष्ट्रीय अपमान पर । राष्ट्रीय अपमान का यह बोध ही भारत के मानस पर सवार रहा और जब उसके सीझ बाद ही लाला जी की मृत्यु हो गयों तो वह अनिवार्यतः उन पर हमले से जुड़ गयी और शोक ने ही कोष और धात्रोस को सर्वोच्च स्थान दे दिया। इस बात को समक्र पैना बेहतर है बयोकि तभी हम बाद की पटनाओं को, भगत सिंह की चमरकारी घटना को और उत्तर भारत में उनकी आवस्मिक और आरचरंत्रनक सोक्रियता को योड्डा-बहुत समझ सकेंगे। किसी कार्य के स्रोतों को, उनके पीछे निहित कारणों को समझने की कोणिय हिचे बिना व्यक्तियों या इत्यों की निग्दा कर बैठना निहायत कामान भीर निशा मुखेतापूर्ण है। मनत निष्ठ पहले सुप्रसिद्ध नहीं से, बह एक हिसात्मक इत्य, एक आनंत्रवादी इत्य के कारण कोविय नहीं ही यने । भारत में यदा-बदा लगमय तील बर्पों में आउनकारी पनाने रहे हैं (नेहरू जी ने यह १६३६ में निसा का) बिन्यु बरान में बारब के दिनों ने अनावा ने नभी भगत नित्नी मोरब्बिका का राजार भी नहीं शिसिन कर सके।"

पर निरम्ब हो परव निह नी मोर्डाइयम का बिस्तुन नहीं और नदीचेंग विनेत्रह है। बिन्तु नेहन की और उत्तर कनुसरक करते हुए हमते काई के पितानार रावों जो को मोर्डाइयम के बिरोज्य पर हमां कारेर के ब्रान्त्रक मोर्डाइया प्रदेश की की मोर्डाइयम के बिरोज्य पर हमां करते के ब्रान्त्रक मोर्डाइया प्रदेश

हराहें छह करने सम को कहा जोता है कि अधार निर्देश मानते में हा भारतीय यस जन पर कौर अने जोणा के पामले में, जिन पर भारतीय पति वेंगे को इंप्ता होत्य है. किसंशुल हुंसर हो वैन्नायिक मानदह सामू में है अपर सम्बद्धाः मध्या स्थः समग्रास्ति ।

रिहेंची जी के जीतर होता है अनुवर्शन है का अधीका में, जहां वर वहारा में रेने गय है। हैं ये खाम चंदीन निर्मा १ पान गाननीति में जारने के निर्मात भग बाध्य कर दिया एवा था। इस्ते पार्ट द्वं ध्वारि मिनो यो तिनु विम क्ष्मानि सही वेधा कि हमारे विश्व इतिहासकत बाटेंगे कि हम मान में। होंगे नों ने अधीता में पालिमें विराई ने मी भी और जन्द में यहा भारत पहुंचे मी मीनिश मेर रहे थे। परायु शिक्त में पूर्व प्रशिव दश्मीनना सिन्धी। नरमानी नेता गोमने उनमें हादिन ना के माय मिने। इसरे बानहर नर मृत्तित्व में ही आगे यह मने । सीतारमेदा (तिपुरी वांग्रेम की अन्यस्ता है विष् मुभाष योग के मुकाबने पराजिन गायी जी के उम्मीदमार) तिसते हैं।

"१६१% की वाधेग का एक दिलवरत गहलू यह या कि गांबी जी निषय मिनित में मही धुने जा सके और इस फारण अध्यक्ष ने संविज्ञान के तहत प्राप्त अधिकार में समिति में उन्हें मनोनीत किया।"

इस तरह गांगी जी कांग्रेस के ऊँचे तुलकों में अक्षरणः चौर दरवाने हैं। स्रोत कि प्रसाय गयं किन्तु इससे भी उन्हें बहुत मदद नहीं मिल सकी। यह प्रभावहीन बने रहे और उसी तरह ममीवेश अभात रहे जैसे भगत सिंह वी. के. दत्त के साप साथ वम फ़्रेंकने और यह घोषित करने के पहले अज्ञात थे कि क्रान्तिकािंसी का अंतिम ध्येय हैं समाजवाद की स्थापना । गांघी जी की पूरे चार सात इंतजार फरना पड़ा। प्रथम विश्व युद्ध ब्रिटेन और उसके मित्रों की विजय के साय समाप्त होने को था। स्यमावतः भारत, जिसने इस विजय के लिए लपनी अपार रक्त बहाया था। स्वभावतः भारत, जिसने इस विजय क 1005 अवस्य आशा लगाये हार है तो कम से कम कुछ मुदारों की अवस्य आशा लगाये था। किन्तु भारत के अन्दर क्रान्तिकारी आन्दोलन से तथा विदेशों में भी जनकी गतिविधियों से अन्दर क्रान्तिकार। जार दूसरी दिशा में सोच क्ली गतिविधियों से कुपित ब्रिटिश सरकार वितकृत दूसरी दिशा में सोच रही थी।

ब्रिटिश भारतीय सरकार ने १० दिसंबर १६१७ की न्यायाधीश एस ए टी. रॉलेट की अध्यक्षता में एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति नियुक्त की :

"(१) भारत में कान्तिकारी आन्दोलन से संबंधित आपराधिक पड्यंत्रों

के स्वरूप और सीमा की जांच-पड़ताल करना और रिपोर्ट देना। "(२) इस तरह के पड्यंत्रों से निपटने में जो कठिनाइयां पैदा हो गयी हैं उनको जांचना और उन पर विचार करना तथा उनसे कारगर

वीर पर निबटने के सिए सरकार को यह सलाह देना कि अगर जरूरी हो वो कैस कानून बनाया जाया।"

हमिति में बार सदस्य ये जिनमें से दो जाने-मरखे भारतीय थे। यह प्यान रेने नी बात है कि सरकार को कांग्रेस की मतिविधियों की कर्त्रह जिंदा नहीं थे। उस समिति ने १४ कर्षम १६१८ को अपनी रिपोर्ट पेदा की जिसमें उसने क्य बातों के साथ-साथ सरकार की दो प्रकार के अधिकार प्राप्त करने की क्याहरी:

"गहने समूह के अधिकार निम्नितिश्वित किस्म के होने चाहिए:

- (१) मुनतके के साथ या विना मुचलके के जमानत तलव करने का
- (२) रिहायरा पर पावंदी लगाने या रिहायश में तबदीली की मूचना देना जरूरी कर देने का अधिकार;

(३) कुछ कार्यों, जैसे पत्रकारिता करने, पर्चे बांटने या सभाओं में सम्मितित होने से दूर रहना जरूरी कर देने का अधिकार;

(४) यह जरुरी कर देने का अधिकार कि व्यक्ति विशेष समय-समय पर दुलिस के पास हाजिरी देता रहे।

"हमारे समूह के अधिकार ये हों :

(१) गिरपतार करने का अधिकार।

(२) वारंट के तहत तलाशी लेने का अधिकार।

(३) दंड के बिना हिरासत में बंद करने का अधिकार।"

समिति ने प्रवाधित व्यक्तियों के एक प्रांत से दूसरे प्रांत में आवागमन पर प्रकारी लगाने और उसकी मनाही तक करने की सिकारिस की । उसने कहा :

"हैंगरे देशों को लेकर पारत के साथ जो विवार लागू होते हैं उनसे बहुँत कुछ समान विचार ही दूसरे प्रातों को लेकर हर बात के बारे में लागू होते हैं। अगर किसी प्रात में कारिकारियों के अपराण नमें किर में पूट पड़े तो यह लेट को बात होगी, पर अगर वे कूट पड़ते हैं तो यह विनासकारी होगा कि वे प्रात से प्रांत में पैने दिससे संस्टालीन कारायों की उत्पोदणा अगरी ही आया। साथ हो पेनाव मेंने प्रात में पंगीरतम तावर को क्यों के लिए यह परमावायक हो सहता है कि

^{&#}x27; समिति की रिपोर्ट, पृ. २०६-७.

राशिपूर्व धानों में भी भानेबाने कुछ त्याम शोगों के प्रवेश की यजित कर दिया जान गंग

सिगित के मुझान एक निषेणक के मागितरे में दिने गये में निससे मारतीयों को अभी जो चोड़ी गहुत नामित्य मनतंत्रता आहा भी जम पर भी अंतुत नामित्य मनतंत्रता आहा भी जम पर भी अंतुत नामित्य नाने का मानता परा परा हो गया। भागत को एक विभान कैदसाने में बरत दिया जाने वाला चा और हर भागतीय की हैगियत एक संदिग्य व्यक्ति की या लंगाित अपराणी की हो जाने को ची, जो कोई मुगाद हैसियत नहीं है। तीय वाग वफादारी के साम की गयी मुद्ध-कालीन गेवाओं के कारण किसी न किसी अकार के होगितियन इस्टेट्न की आशा चोचे हुए थे। और यहां एक ऐसी विधेयक आ गमका जिसने सर्वनाश का गतरा पदा पर दिया। विधेयक कई चरणों से होकर गुजरा और देश में मुह्याम बढ़ता गया। इसके कारण बेवसी और भी गक्णाजनक बन गयी।

यह एक चुनौती भी और इसके पहले कि और कोई पार्टी या व्यक्ति इत चुनौती को स्वीकार करता, गांधी जी इस रिक्तना को भरने के लिए आगे आ गये और वह भारत के नेता बन गये तथा वह भी इस कदर कि क्रान्तिकारियों ने, जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के जिलाफ कटोर संघर्ष चला रहे थे, इस प्रयोग को मौका देने के इरादे से अपना आन्दोलन रोक दिया। हां, उनके बीच में जो फट्टरपंथी थे वे मन मार कर आन्दोलन से अलग बने रहे।

उन दिनों में एक छात्र था। जब कांग्रेस ने १६२१ में विद्यावियों की बाह्या किया तो में सिक्रय रूप से आन्दोलन में शरीक हो गया और मुक्ते तीन महीने की कैंद की सजा मिली। जब में १६२२ में जेल से बाहर आया तब तक गांधी जी ने अपने घनिष्ठतम सहयोगियों से भी सलाह किये बिना गोरखपुर जिले के चौरी-चौरा की घटनाओं के बहाने आन्दोलन को रोक दिया था। चौरी चौरा में जो कुछ हुआ था, संक्षेप में वह इस प्रकार था। गांव के निवासियों के एक शान्तिपूर्ण जुलूस को तितर-बितर हो जाने का आदेश दिया गया। जब उन लोगों ने तितर-वितर होने से इनकार कर दिया, तो पुलिस बालों ने गोली चला दी और तब तक गोलियां चलाते गये जब तक कि उनकी कारतूसें खत्म नहीं हो गयीं। इसके बाद सारे कांस्टेबुल भागे और उन लोगों ने थाने में जा कर शरण ले ली और दरवाजे बंद कर लिये। भीड़ ने कांस्टेबुलों से बाहर आने और अपनी करनी को देखने को कहा। कांस्टेबुलों ने वेशक इनकार कर दिया। फिर भीड़ ने थाने में आण लगा दी और कोई बीस कांस्टेबुल जिंदा

^{&#}x27;बही, पृ. २११।

बन बदे। जैसे ही गांघो जी ने इसके बारे में गुना, उन्होंने आन्दोलन को रोड़ दिया।

र्थायों जो ने राजनीति को नीचे अवाम तक पहुंबाया या पर कान्ति की पहली समक देखते ही उन्होंने कदम भीछे हटा लिये। यह गुरू से ही क्रान्ति-नारी तरीनों के विरद्ध में । यह पहले ही अहिंसा और दूसरी चीजों से संबंधित करने विद्यान्तों का एलान कर चुके थे। फिर भी यह एक पहेली है कि बोअर बुद के समय उन्होंने अंग्रेजों का करें। समर्थन किया था। उन्होंने अंग्रेजों का समदेन करने हुए एक बयान जारी किया था। इससे सारे स्वातंत्र्य योडाओं को, सात तौर पर उन आयरलंडनातियों को, गहरा सदमा पहुंचा था, जो धिक्रमाली इंगलंड के सिलाफ विषम संपर्य चला रहे थे। भारतीय कान्ति-कारी स्वाम जी कृष्ण वर्मा ने, जो कुछ दिनी तक आंक्सफोर्ड विद्वविद्यालय में संस्कृत के प्राप्यापक रहे और प्रवासी के रूप में यूरोप में रह रहे थे, वाधी जी का प्रत्यास्थान किया और बोजरों का समर्थन करते हुए एक बयान जारी किया। पुनः प्रयम विश्व सुद्ध में गांधी जी अहिंसा संबंधी अपनी सारी पीपनाओं के बाबहुद अंग्रेगों के लिए जवानों की मर्ती करते रहे और अपनी सेनिजी के लिए उन्हें कैसरे-हिन्द पदक (दितीय श्रेणी) दिया गया था। दूसरी भीर प्रान्तिकारियों ने प्रयम विदव युद्ध को एक महान सुअवसर माना या और वे माझाज्यवादी विदव युद्ध को देशभिक्तपूर्ण स्वातंत्र्य युद्ध में परिवर्तित कर देना बाहते थे। इस प्रकार गांधी जी बार-बार अपने घोषित विश्वासों के विस्ट, आधरण करते रहे और दूसरी कसीटियों पर भी कसा जाये तो भी वह बार-बार गलत महों का समर्थन करते रहे । इन दी ऐतिहासिक अवसरों पर गांधी जी ने जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दलल दिया उससे भारतीयों का उपहास ही हुआ। उनका एक मात्र उद्देश या हमारे शासकों की खुरा करना। इसनिए यह कोई विधित्र बात नहीं यी कि वैचारिक घरातल पर कान्ति-

हिसांस्य यह कोई विधिक बात नहीं सा है सक्यार परेशन पर का जो जो ने कारियों को मामी जो ने बार-बार सीधी टक्कर होती थी। गांधी जो ने कारियों को मामी जो ने बार-बार सीधी टक्कर होती थी। गांधी जो ने कारिकारी गांधी में बािसल हो गया। उसका एक हता हुआ संविध्यान या जिसमें यह एक्शा हिमा यात्र वा कि राशि का सक्य है ऐसे समाज की स्थापना करना दिवा कि स्थापना करना दिवा जा प्राप्त कि सामाज करना दिवा कि सामाज की स्थापना करना दिवा जा प्राप्त के सामाज की स्थापना के सामाज के सामा

पडयंत्र केस में मुख्य अभियुक्त थे । उन्हें आजीवन कारावास का दंड दिया गया था और अंडमान भेज दिया गया था । ब्रिटिंग विजय के बाद आम माफी के दौरान ही उन्हें रिहाई मिली । फिर उन्होंने विवाह कर लिया और प्रकटतः गाहुँ स्थ्य जीवन विवान लगे । किन्नु चौरी-चौरा के गोलमाल के बाद यह चुपचाप बैठे न रह सके । बिन्मिला, अभफाक, जौगेश चटर्जी और मुरेश चक्रवर्ती के साथ उन्होंने एक क्रान्तिकारी पार्टी संगठित की । उनका एक मुख्य अबदान यह था कि उन्होंने पार्टी का संविधान और उसके पर्चे लिसे ।

संविधान के कुछ समय वाद 'क्रान्तिकारी' शीपंक एक चार पृष्ठों का पर्चा प्रकाशित किया गया और पेशावर में रंगून तक मारे भारत में गुप्त रूप से वितरित किया गया। इस व्यापक वितरण का उद्देश्य पुलिस और जनता पर यह असर डालना था कि पार्टी के पास वहुन बड़ा संगठन है। यह पर्चा बेहद सफल रहा। उसने बहुत बड़े जन समुदाय के सामने यह जाहिर कर दिया कि कार में टोह नहीं ले रही है बित्क अपना लक्ष्य भली-भांति समभती है। पर्चा इस उक्ति के साथ शुरू होता था: "एक नये लक्ष्य के जन्म के लिए अव्यवस्था जरूरी है।" संविधान की दिशा का अनुसरण करते हुए उसमें सोवियत संघ वारोप को अस्वीकार कर दिया गया था कि वह आतंकवादी पार्टी है। उसमें कहा गया था कि अस्वीकार कर दिया गया था कि वह आतंकवादी पार्टी है। उसमें मजबूर कर दी जाती है तो वह आतंकवाद के ऐसे नैराश्यजन्य अभियान का असंभव बना दिया जायगा।

इसके बाद बंगला में एक पर्चा निकला जिसे अपने हस्ताक्षर के साय सान्याल ने लिखा था। उसका शोपंक था "देशवासीर प्रति निवेदन" अर्थात देशवासियों से निवेदन। इन सबसे यह पता चलता है कि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी धार्मिक राष्ट्रवाद की क्रान्तिकारी विचारधारा से स्वयं को अलग कर लेना चाहती थी किन्तु सान्याल जैसे विश्रुत और सक्षम नेता के अधीन भी उन नये विचारों की संभावनाओं को न देख सकते जो रूस से आ रहे थे और मुग्ध भाव से यह विश्वास कर लेना चाहते थे कि ये नहीं थे कि वे तरुण क्रान्तिकारियों को अनुप्राणित कर रहे थे, किन्तु आत्मतुष्टिट के साथ वे तथा इनसे आगे भी अनु स्वास कर लेना चाहते थे कि ये नये मूल्य और विचार मावसं और लेनिन इं विवेकानन्द और अर्विद घोप के ज्यादा

गीयी जी आध्यात्मिक मूल्यों में आस्या रखते ये और यही सान्याल की भी दिवति मी किन्तु सिद्धान्त और ब्यवहार के क्षेत्र में दोनों के बीच उत्तरी और रक्षिणी प्रृव की दूरी थी। यह बात १६२५ में उनके बीच हुए पत्राचार से प्रकट हुई जब गांधी जी रिहाई के बाद संग इंडिया का संपादन करने लगे ये। वस्तुतः पुनर्जीवितः क्रास्तिकारी पार्टी की बाद के दिनों में लगातार दो भोरो पर तड़ाई लड़नी पढ़ी । गांधी जी यह दिखाने के लिए कि क्रान्तिकारियों का और उनका सक्य अलग-अलग है, समय-कुसमय उनकी मत्सना करते रहे। रिक्मी सुल्लम-सुल्लाकोई कार्रवाई कर दी जाती तो वे मीके का लाम हें उत्तर उनकी कर्दु निन्दा करते । इस मामले में उनके सहयोगी उनसे सदा महत्त्व नहीं हो पात थे और गोपी मोहन साहा को लेकर सो उनके और सी. बार रात के बीच खुला विवाद छिड़ गया था। साहा ने एक सूरोपियन की की भार दी थी। वह कुल्यात पुलिस अधिकारी चाल्स टेगार्ट की गोली का निवाना बनाना चाहते से पर उनकी जगह श्री हे को मोली मार दी। उन्होंने रम बात पर दुख प्रकट किया कि गलत आदमी की गोली मार दी गयी है, उन्हें भानी दे दी यथी। उन्होंने सजा का दिलरी से सामना किया और हंसते हुए भिनों के फन्दे पर फल गये। सी. आर. दास ने साहा की बीरता की प्रशंसा भी। बही नहीं, उन्होंने सिराजगंज बंगाल प्रांतीय सम्मेलन में साहा भी प्रशंसा हरी हुए एक प्रस्ताव स्वीकृत करा लिया । बास्तव में सी. आर. दास बंगाल मे जनसत के बाहक बन गये। बंगाल ने अहिंसा की कभी गंभीरता से नहीं स्वी-कार किया था, हालांकि असहयोग आन्दोलन के दौरान बंगाल से जितने सोग वेर गरे ये उनने संभवत: सारे भारत से भी नहीं गये थे।

निपानगंत्र प्रस्ताव गांधी जी की सहत्यांकि के बाहर ही बया। जारीने विक्राम नित्ता की। वह किया बता पता अन्तित माभी जी ने विकेष के एक स्थात अन्तित माभी जाने ने विकेष के एक स्थात का स्थात माभी का माभी का में विकेष के एक स्थात का स्थात करा दिया भीर पुगने प्रस्ताव की देश देने में सफल ही शाय प्रस्ताव की पता की पता की पता की स्थात है ने में पता की स्थात है जी पता की स्थात है की पता की स्थात है की गाय है की स्थात है स्थात है की स्थात है स्थ

साम्याम ने गाधी जी को पहला यह गुमनाम निमा : राजेग्र लाहिग्रे, निर्म्ह बाद में कांनी बड़ा दिना गया, बहु यह हमाहमाद में नाने वे : मुनी बहु यह पड़े को दिना गया भा जीर उमे बाक से प्रेटने को करा नता था। निकाले पर देशी निसाद अधिक जी : इसके पीते पायर यह किया था कि अबर पुलिस जाव करे सी लागान विरस्ताद न होने पारें । राजी जी के प्रव यह को और असली नाम नहीं दिया था पर मुर्के याद नहीं उस समय उन्होंने किस नाम का प्रयोग किया था। नीचे लेख का संपूर्ण पाठ पेश है जैसा कि वह १२ फरवरी १६२५ के यंग इंडिया में प्रकाशित हुआ था:

एक क्रांतिकारी की सफाई

एक पत्र लेखक ने, जिसने अपना नाम तो दिया है पता नहीं दिया, मुक्ते एक पत्र भेजा है जिसे वह "गुला पत्र" कहता है। वेलगांव कांग्रेस में अपने भाषण में मैंने क्रान्तिकारी आन्दोलन के बारे में जो टिप्पणियां की बीं, यह पत्र उसके जवाब में है। पत्र देश प्रेम से, उत्साह और आत्मविद्यान की भावना से भरपूर है। साथ ही यह फ्रान्तिकारियों के प्रति मेरे द्वारा किये गये कथित अन्याय की भावना में भर कर लिखा गया है। इसलिए मैं नाम के बिना उस पत्र को सहर्ष छाप देता हूं। लिखने वाले का पता नहीं दिया गया है। पत्र का अपरिवर्तित पूर्ण पाठ निम्नलिखित है:

"में आपको कुछ समय पहले आपके द्वारा दिये गये इस वचन की याद दिलाना अपना कर्तव्य समभता हूं कि जिस समय क्रान्तिकारी लोग अपना मौन त्याग देंगे और भारतीय राजनीतिक रंगमंच पर पुनः प्रवेदा करेंगे, मैं राजनीतिक क्षेत्र से अलग हो जाऊंगा। अहिसात्मक असहयोग आन्दोलन का प्रयोग अब समाप्त हो चुका है। आप अपने प्रयोग के लिए पूरा एक साल चाहते थे, पर प्रयोग अगर पांच नहीं तो पूरे चार साल चल चुका है, और अभी भी क्या आप यह कहना चाहते हैं कि इस प्रयोग की पर्याप्त समय तक परीक्षा नहीं की जा सकी है?

"आप वर्तमान युग की महानतम विभूतियों में से एक हैं और आपके प्रत्यक्ष मार्ग-निर्देशन और प्रेरणा की छाया में किसी न किसी कारण वस्तुतः देश के सर्वोत्तम लोगों ने आप का कार्यक्रम अपनाया। हजारों युवकों ने, जो हमारे देश के उत्कृष्टतम तरुण हैं, अपने समस्त उत्साह के साथ आपके पंथ को अपनाया। व्यवहारतः सम्पूणं राष्ट्र आपके आह्वान पर उठ खड़ा हुआ। हम निरापद भाव से यह कह सकते हैं कि यह प्रतिक्रिया अगर चमत्कारी नहीं तो अद्भुत अवश्य थी। आप इससे बढ़ कर और क्या चाह सकते थे? आपके अनुयायियों में बिलदान और ईमानदारी की कमी नहीं थी; स्वार्थी से स्वार्थी पेशेवर लोगों ने अपने पेशों को ठुकरा दिया, देश के युवकों ने अपने सारे ऐहिक मिवष्य को तिलाजिल दे दी और आपके भंडे के नीचे आ खड़े हुए; सैकड़ों परिवार आधिक आय के अभाव में दिख हो गये। घन की कमी नहीं थी। आप एक करीड़ रुपया चाहते थे लेकिन आपको इससे भी ज्यादा रुपये मिल

r. 4

वरें। बत्तुतः अगर में यह कहूं कि आपके आह्वात पर को अनुकूत प्रतिक्रिया हुँ वह स्वयं आपकी आसा से अधिक थी तो शाबद यह मूठ नहीं होगा। में "दें कहतें का साहम करता हूं कि आसा ने अपनी योध्यता भर आपके नेतृत्व का अनुसरण किया, और में समभता हूं कि कोई इस बात से इनकार भी नहीं कर सन्ता। इतने पर भी बचा आप यह कहना चाहते हैं कि इस प्रयोग की पर्योग्त सुपय कर परोशा नहीं की जा मत्री?

"बास्तव में आपके कार्यक्रम की असफलता के पीछे भारतीयों का कोई दीप नहीं है। आपने देश की सिर्फ एक कार्यक्रम दिया, आप राष्ट्र की विजय की अंतिम मंजिल तक नहीं ले जा सके। यह कहना कि अहिसारमक मेंसहयोग इसलिए असफल हो गया कि लोग पर्याप्त रूप में अहिंसाबादी नहीं पे, भविष्यद्रप्टा की सरह वहीं बल्कि वकील की तरह दसील देना है। सौग पिछने कुछ वर्षी में जितने अहिमात्मक रहे है वे उसमे ज्यादा विहिसात्मक नहीं रह सकते थे। मैं तो यह कहना चाहंगा कि वे इस हद दक अहिसात्मक वे कि उसमें बजदिली की गंध बाती थी। आप शायत यह कहेंगे कि आप यह अहिसा--वृजदिलों की अहिमा--गहीं चाहते थे। परन्तु आपके कार्यक्रम में ऐसा मुद्दा शामिल नहीं या जो बुजदिलों को बहादरीं में बदल सकता या जो बहादरी के जत्यों में दिये बुजदिलों को पहचान सकता और अंत मे उन्हें निकाल बाहर कर सकता । इसमें जनता का कीई दोप नहीं था। और यह कहना कि अधिशांश असहयोग कर्ता व्यक्ति थे न कि बहाइर, विम्मेदारियों से कतराना है। ऐक्ष बहुना तो राष्ट्र के पुरुषस्व का असम्मान करना है। मारतीय कायर नहीं हैं। उनकी वीरना की मदा समार की थेया तम बीरों से तुलना की जा सकती है। इससे इनकार करना इतिहास से इनकार करता है। जब मैं भारतीयों की बीरता की बात करता हू तो मेरा तालायें उसी बीरता से नहीं है जो गौरवमाली अतीत के इतिवृत्ती में आववस्यमान है, बिल्ह में उस बीरता को भी सम्मितित कर रहा हू जो बर्तमान में अभि-स्यक्त हो रही है, क्योंकि भारत अभी भी मृत नही है।

"भारत को जरूरत है सभ्ये गेता की, पुर गोविष बिह सा पुर रामरात और दिखारी जैसे गेसा की। भारत को करता है एक कृष्ण को यो ऐसा उन-पुक्त आपत्ती प्रसान कर साहे जिसे न बेवल भारत बहित साही सानवता, साहे बहुए समाही और शास्त्रामी वासी भावता की होता करे।

"अहंदग्रेय आयोजन दत्तिए नहीं बहरून हो गया कि दनना दितन भावनाओं का कभी-कमी किस्टोट हो जाना या दीन्य दमनिए कि आयोजन के पास जरमुक्त आरों का जमाब या । आरो बिम आरों का उरहेस दिवा

यह भारतीय संरक्षति और परंपराओं के अनुस्य नहीं या । उसमें अनुकरण की गंघ आही थी । आपका अहिंसा का दर्शन, कम से कम जिम दर्शन की आपने जनना को स्वीकार करने के लिए प्रस्तृत किया, निराजाजन्य दर्शन था। यह भारतीय ऋषियों की क्षमा की भावता नहीं थी, वह महान भारतीय योगियों की अहिंगा की भावना नहीं थी । यह तोहनवीयबाद और बद्ध धर्म का अपिर-पत्रव भीतिक सम्मिश्रण था, पूर्व और पश्चिम का रसायनिक मिश्रण नहीं ! आपने कांग्रेसों और सम्भेतनों की पहिचमी पद्धित अपना ली और तोल्सतीय की तरह देश, काल और पात्र पर घ्यान दिये बिना अहिंसा की भावना स्वी-मार करने के लिए मंदूर्ण राष्ट्र को मना लेने की कोशिश की, किन्तु यह भारतीयों के लिए व्यक्तिगत सायना का दिवय रहा है। और सबसे बढ़ कर, आप भारत के अंतिम राजनीतिक लक्ष्य के बारे में अस्तष्ट रहे हैं और अभी भी हैं।। यह दूसद स्थिति है। स्वाधीनता संबंधी आपका विचार भारतीय भादशों से मेल नहीं खाता । भारत 'सर्थम् परवशम् दुःखम् सर्वात्मावशम् सुखम्' का समर्थंक है और इस आदर्श की मानने वाला है कि व्यक्ति का अस्तित्व सर्वथा मानवता के लिए और मानवता के मान्यम से ईश्वर की उपासना के लिए है। 'जगतहिताय च कृष्णाय च।' भारत जिस अहिंसा का उपदेश देता है वह अहिंसा के लिए अहिंसा नहीं विलक्त मानवता की भलाई के लिए अहिंसा है, और जब मानवता की भलाई हिंसा और रक्तपात का तकाजा करेगी, भारत उसी तरह खून वहाने से नहीं हिचकेगा जैसे शत्य क्रिया के लिए खून बहाना आवश्यक हो जाता है। एक आदर्श भारतीय के लिए हिंसा अयवा अहिंसा का एक जैसा महत्व है, वशर्ते वह अंततोगत्वा मानव का हित करे ! 'विनाशाय च द्ष्कृतम्' व्यर्थ में नहीं कहा गया था।

"इसलिए मेरे विचार से आपने जो आदर्श राष्ट्र को दिया या जो अमली कार्यक्रम उसके सामने रखा वह न तो भारतीय संस्कृति के अनुरूप है और न एक राजनीतिक कार्यक्रम के रूप में व्यवहारिक है।

"में यह सोचने की कल्पना ही नहीं कर सकता और न समभ ही सकता हूं कि आप अभी भी इस बात की लेश मात्र आशा करने का साहस करते हैं कि इंगलैंड अपनी स्वेच्छा से न्यायपूर्ण और उदार वन सकता है—वह इंगलैंड 'जो जिल्यांवाला बाग करले आम को आश्म रक्षा का जायज साधन समभता है', वह इंगलैंड जिसने ओ'डायर-नायर मुकदमा चलाया और वर्वरता के हक में फैसला दिया। अगर ब्रिटिश सरकार के सद्विवेक में आपका रंच मात्र विश्वास वाकी है तो आपके अनुसार किसी कार्यक्रम की कतई आवश्यकता कहां रह जाती है ? अगर ब्रिटिश सरकार को होश में लाने के लिए किसी आन्दोलन की कोई आवश्यकता है तो ब्रिटिश सरकार की ईमानदारी और अच्छे इरादों की

बात क्यों करते हैं ? ऐसा समता है कि आपके भीतर का भविष्यद्वष्टा सरम हो ग्या है और आप किर कमजोर मुक्दमें की शकाई देने में लगे बडील मर रह गये हैं; या आप मदा मात्र अर्ज्जनस्यों के स्वास्थाता-एक जयदेगा स्यास्थाता--रहे हैं । पृथ्वी के अन्य स्वायीन राष्ट्रों के माथ मैत्री या सम में आबद भारतीय रुवंत्र एक चीज है तथा साम्राज्यनादी बिटिश साम्राज्य के भीतर स्वजासी भारत बिलकुस दूसरी कीज । ब्रिटिश साझाज्य के भीतर यन रहने की कारी मावना आपके उन अनेक हिमालशकार मिध्यानुमानी की याद दिला देती है जिसके कारण आपने एक बहुमूल्य बादमें को त्यान कर भूठी इंप्ट-सिद्धि की बर्जमान आवश्यकताओं से समभीता कर लिया और इसी कारण आप देश ^{हे} युदर्वों की कल्पनाको अभिभूत नहीं कर शके— उन युवकों की कल्पनाओं की जो इच्छा के विपरीत कदम बदाने का साहस करते में और आज भी करते हैं, हालांकि वे आपको बिना हिचक आधुनिक युग की महानतम विभूतियों में एक मानते हैं। ये हैं भारतीय कान्तिनारी । अब इन्होंने आगे शांत न रहने का फैनला कर लिया है और इसी कारण वे आपसे या तो राजनीतिक क्षेत्र से बलग हो जाने या राजनीतिक आन्दोलन को इस प्रकार निर्देशित करने की मार्थना करते हैं जिससे वह कान्तिकारी आन्दोलन मे बाधक न होकर सहायक वने । उन लोगों ने इनने दिनों तक आपके अनुरोधों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मैं पालन करने के लिए ही अपनी गतिविधियां स्थमित रखी थी, बल्कि इससे बढ़ कर भी बहुत कुछ किया। उन्होंने यस्तुतः आपके द्वारा अपने कार्यक्रम को पूरा किये जाने में आपकी भरसक पूरी सहायता की । किन्तु अब प्रयोग समाप्त हो चुका है और इस कारण क्रान्तिकारी अब अपने बचन से बंधे नहीं रह गये हैं, या राच कहिये हो, उन्होने केवल शाल भर खामीश रहने का वचन दिया था, इसमे अधिक नही ।

"साप ही मैं यह लिशत कर देना चाहता है कि आपने ३६वीं कायेस में अपने हान के अपपरीय भाषण में कातिकारियों पर दोपारोपण करके कहें मामसों में उन्हें गतन उंग से दोन हिया है। आपने कहा कि कातिकारी लोग भारत की प्रयोत में बापक हो पहें हैं। में नहीं आनता कि इस प्रयति ' याद में आपका बया तास्त्र्य है। अगर आपका बारायें राजनीतिक प्रमति से हैं तो मया आप हम बात से हमाद कर सकते हैं कि भारत द्वारा पहले ही ली मात माई हर प्रयति, चाई वह निजनी ही चम ज्यो न हो, मुक्त-: शानिकारी पार्टी की कुर्वानियों और कोशियों का ही परिचाम है ? ज्या आप इस बात से इनकार घर तकते हैं कि संप्रमेत को आरिकारियों के प्रयात से ही रोका का कका ? ज्या आप इस बात से सेदी हम तकते हैं कि मार्ट-कोई सुपार के लाये उत बातशीय कानिकारी आपकार के परिचाम में जो मार्ट-कोई सुपार के लाये जाने में एकमान नहीं तो मुख्य कारण अवस्य था ? अगर आप इन प्रश्नों का उत्तर 'हा' में दें तो मुक्ते ज्यादा आइन्यं नहीं होगा । पर में आवको इस बात का आव्यासन दे तकता है कि ब्रिटिश सरकार इस आव्योतन की प्रच्छन शक्ति को अनुभव करती है । स्वर्गीय मांटेन्यू ने भी एक ऊंची हैसियत और ओहदे के भारतीय ने यह कहा था कि नक्षण भारतीय क्रान्तिकरियों की गतिविविवों के बारण ही मेंने भारत आने की जहमन की और अपनी जिन्दगी तक को जीविम में दाला ।

"अगर आपका अभिप्राय यह है कि ये गुआर गर्जी प्रगति के गूचक कर्तर्य नहीं हैं तो में कहने का साहम करता है कि इस फ्रान्तिकारी आन्योतन ने भारत के नैतिक अभ्युत्यान की दिशा में जो प्रगति की है वह मामूली है। भारतीय लोग मृत्यु के भय से वेहद अवभीत रहते थे किन्तु इस फ्रान्तिकारी पार्टी ने एक बार फिर भारतवातियों को यह अनुभन करा दिया कि किसी उदात तक्ष्य के लिए प्राणों का उत्तर्ग करने में कितनी भव्यता और मृत्दरता है। कातिकारियों ने एक बार फिर दिशा दिया कि मृत्यु में एक किस्म का आकर्षण भी होता है और वह गवा खौफनाक भी नहीं होती। अपने विश्वानों और निष्ठाओं के लिए मरना, यह जानते हुए मरना कि इस प्रकार मर कर ईश्वर और राष्ट्र की सेवा की जा रही है, ऐसे ध्येय के लिए जिसे कोई ईमानदारी में न्याय संगत और उचित्र की जा रही है, ऐसे ध्येय के लिए जिसे कोई ईमानदारी में न्याय संगत और उचित्र मानता हो, मृत्यु को अंगीकार करना या अपने जीवन को खतरे में डालना जबकि मृत्यु की हर सभावना मौजूद हो—व्या यह नैतिक प्रगति नहीं है ?

"विपत्ति और क्षणिक असफलताओं के वावज्ञद अपने प्रिय आदर्श पर उटे रहना—अणिक उत्तेजनाओं से और एक मोहक व्यक्तित्व के उदात्त प्रतीक होने वाले आदर्शों में न वह जाना, कड़ी मशक्कत वाले दीर्घकालीन कारावास से भयभीत न होना, वपों स्वयं अपने प्रति सच्चा वने रहना—क्या यह उद्देश्यनिष्ठता, यह चित्रवल भारत द्वारा की गयी सच्ची नैतिक प्रगति का सूचक नहीं है ? और क्या यह क्रान्तिकारी आदर्श का प्रकट परिणाम नहीं है ?

"आपने क्रान्तिकारियों से कहा है, 'तुम चाहो तो स्वयं अपनी जिन्दिगियों की परवाह नहीं कर सकते हो, पर तुम अपने जन देशवासियों की अवहेलना करने का साहस नहीं कर सकते जिन्हें शहीद की मौत मरने की कर्ता आकांक्षा नहीं।' पर दुख की बात है कि क्रान्तिकारी लोग इस बात का अर्थ समर्भ सकने में असमर्थ हैं। क्या आपके कहने का यह तात्पर्य है कि चौरी-चौरा मुकदमे में दंडित ७० व्यक्तियों की मृत्यु के लिए हम क्रान्तिकारी लोग जिम्मे दार हैं? क्या आपके कहने का यह तात्पर्य है कि जिल्यांवाला बाग और गुजरानवाला में निर्दोष लोगों पर बमवारी और जनकी हत्या के जिम्मेदार हम क्रान्तिकारी लोग हैं? क्या कान्तिकारी लोग हैं के अपने

100

संपर्ध के दौरान, अर्तीत में या गर्तमान में, कभी मूलों पर रहे लाखों लोगों से क्रांनिकारी संपर्ध में भाग सेने को कहा ? क्रांनिकारी लोग शायर जन मनो- तिवान को अधिकांया मोहदा नेताओं से बेहतर हमकते हैं। और इसी कारण के आप जाती मोहदा नेताओं से बेहतर हमकते हैं। और इसी कारण के आप जाती को तत तक आप नहीं लागा चाहते में, जब तक उन्हें सक्ते अपने पार्तिक का पक्का विस्तास न हो जाते। ने सहार यह मानते रहे हैं कि जार भारत की जनता किसी आपात के लिए तैयार है, और उनका यह खेला पी हो के उत्तर पार्टिक है और उनका यह खेला मी हो के एवं है कि उत्तर मारत की जनता के बन्ने के समय निक्ता के अपने और आपके सहभीयों ने गत्रज समया और उन्हें खायाबुद आपनों को आपने और आपके सहभीयों ने गत्रज समया और उन्हें खायाबुद आपनों को अपने और आपके सहभीयों ने मानत में स्त्रोह है भी, अहा को स्त्रोह की साम जनता की अपने कार स्त्राह है की सहभी हमा हुई थी, और अपने कार सहभी हमा हुई थी, और अपने कार सहभी हमा हुई थी, और अपने कार सहभी हमा हुई थी, अहा के सब्दें हमा हत्याना भरता पड़ा। किन्दु क्या आप एक भी ऐसी निमान के सबते हैं बहा इतिकारिकारियों ने अनिक्कुक आरमाओं को मीत की पार्टी में स्तरीह लिया हो?

"हिन्तु अगर आपका तालायं यह है ि वान्तिकारियों की गानिविधायों के काल निर्दाय लोगों को सलाया जा रहा है, केंद्र हिया जा रहा है और मीन कें गांद जाता जा रहा है, भेद सिना जा रहा है और मीन कें गांद जाता जा रहा है, तो में बिजा दिवस और सैनानरारी से स्थीनार करता जा रहा है, जहां जन कर मेरी जानकारों है, एक मी ऐसे व्यक्ति को परमां नहीं भी गयी जो कानिवहारी कार्यकलाय का दोयी न रहा हो, जहां जक केंद्र और पंत्रण की वार्ते हैं हैं यह वह तकता हू कि बहुत ने निर्देश तोगों को रान्त्रण कालाय तथा और प्रवास के गयी का किन्तु का विदेशी नरातर द्वारा किन पर्य जुल्मों के लिए एक क्यानिकारों पार्टी को जिस्मेशार हरहरा या नात्रण हैं विदेशी नरातर रहा हमें पूर्व केंद्र में स्थान कर में भी हैं, कुनल देन पर तुर्वी हैं, वर दश तरह दुन्दने में बहुत नात्र है कि सरकार सहनू नहीं निर्देश कर तथे और बहुद्दर्श के माम-नाय दुनिदेशों को भी अस्तिहत, वेद और पत्रण का तिहार बनाये; पर का मुझोदों की भी जलाइन, वेद और पत्रण का तिहार हम मा मू नत्रण हैं। मेर चालनाओं के लिए बहुद्दर्श सेनी के तिहर दोन कहा जा नहा है। स्वार्ताओं के लिए बहुद्दर्श सोने के तिहर दोन कहा जा नहता है।

"अंत में, आपने बिटिय सामान्य की ग्रांकि के बारे में जो कहा है जनके बारे में कुछ कहना चाहुता। वानिकारियों में जानने कहा है जिएतें आप अपरस्य करना चाहुते हैं, वे ज्ञाने जनाया अवधी तरह हर्पजारों में मैन हैं और कहा जाना अच्छी तरह मंगिता हैं। बिन्नु करा यह गर्य की काज नहीं कि मुद्दों भर अंग्रेज भारतीय जनता की मुक्त सह्यति में नहीं कीन सहन बन से भारत पर गासन करने में समर्थ हैं? अपर अंग्रेज हरियारों से अवसी तरह मैस और मुसंगठित हो मकते है तो भारतवामी नयों उसने भी ज्यादा अच्छी सरह हिभियारों से मैस और संगठित नहीं हो मकते—वे भारतवानी जो आध्यात्मिकता के उपन मिदानों में अभिभूत हैं ? भारतवानी उसी तरह इत्यान हैं जैसे अंग्रेज मोग। तम भरती पर ऐसी कीन-सी बात है जो भारतीयों को इतना अमहाय बना देवी है कि वे यह मोनें कि वे कभी अपने अंग्रेज स्वामियों से ज्यादा अच्छी तरह संगठित नहीं हो मकते ? आप किस दवीन और तथ्यगत तक में उन संभायनाओं को मनत सिद्ध कर मकते हैं जिनमें कान्तिकारियों को अपार विश्वास है ? और इस असहायता और निराम के बीच में पैदा होने वानी अहिंसा की भायना कभी झिताजाती जनों की अहिंसा, भारतीय क्षियों को अहिंसा नहीं हो सकती। यह सालिस तमस है।

"महारमा जी, अगर में आपके दर्शन और सिद्धान्तों की आलोबना में कठोरता दिसा गया हूं तो मुक्ते धमा कीजिए। आपने फ्रान्तिकारियों की निहायत निर्मंगता से आलोबना की है और यहां तक बढ़ गये हैं कि उन्हें देश का दुश्मन करार दे दिया है—केवल इस कारण कि वे आपके विचारों और तरीकों से मतभेद रखते हैं। आप सहनशीलता का उपदेश देते हैं लेकिन क्रान्तिकारियों की अपनी आलोचना में आपने उन्न असहिष्णुता दिखायी है। कान्तिकारियों ने मानुभूमि की सेवा करने के लिए अपना सर्वस्व दांव पर लगा दिया है, और अगर आप उनकी मदद नहीं कर सकते तो कम से कम उनके प्रति असहिष्णु तो न वनिये।"

मैंने कभी किसी से इस वात का वचन नहीं दिया कि कब और कैसे देश के राजनीतिक जीवन से सन्यास ले लेना चाहिए। पर मैंने यह अवश्य कहा था और इस समय फिर दृहराता हूं कि अगर मैं यह देखूंगा कि भारत मेरे संदेश को नहीं ग्रहण कर रहा है तथा भारत खूनी कान्ति चाहता है तो मैं निश्चय ही राजनीति से सन्यास ले लूंगा। उस आन्दोलन में मेरा कोई हिस्सा नहीं होना चाहिए वयोंकि मैं भारत के लिए, या विश्व के लिए, दोनों एक ही वात है—उसकी उपयोगिता में विश्वास नहीं करता।

मेरा यह निश्चित विश्वास है कि असहयोग के आह्वान पर आश्चयंजनक अनुकूल प्रतिक्रिया हुई थी, किन्तु मेरा यह भी निश्चित विश्वास है कि सफलता असहयोग की मात्रा के अनुपात से अधिक थी। जनता की आश्चर्यजनक जागृति इस तथ्य का स्थायी प्रमाण है।

मेरा यह भी निश्चित विश्वास है कि देश ने अत्यधिक आत्मिनियंत्रण का परिचय दिया है; पर मैं अपने इस मंतव्य को भी दुहराना चाहूंगा कि असहयोग का पालन अपेक्षित स्तर से बहुत कम हुआ। मेरा यह दिखान नहीं हि "मेरा दर्शन" तोमानीय और मुख के दर्शन का देगी थात है। मैं नहीं जातना कि तिवा दर्शके कि यह वहीं है जिसे मैं सहर मानता है। तो मानीय और पुज का में यहत दर्शन है। तोमानीय और पुज का में यहत दर्शन है। हिन्दू जिस्स के दर्शन है। हो मानद का दर्शन है। हो मेरा है। हो मोरा की तिसामी के सकते अपे का मिनीयाव करता है। हो मान है दि हो हो है। हो मान है। हो है मान ही सान है। हो हो हो है महत्व नहीं सहाता।

मैं जिस दर्मन का अतिनिधित्व करता हूं समे समके अपने गुण-दीय के काचार पर परमा जाने दोजिए । मेरा यह दिवार है कि संमार सशस्त्र बहाबनों में ऊर पूरा है। मेग यह भी विचार है कि इसरे देशों के लिए बुछ भी मन्य बरों न हो, भारत में मूनी चान्ति मकल नहीं होगी। आम जनता इसमें हिम्मा नहीं मेनी। ऐसा आन्दोलन जनना का कोई अना नहीं कर महता दिसमें जनता स्वयं मक्तिय हिस्सा न से । एक सफल गूनी कान्ति का एक मात्र अर्थ होगा आम जनना के लिए और अधिक तबाही। कारण यह कि बह अभी भी उसके लिए विदेशी शासन होगा। जिस ऑडसा कि मैं शिक्षा देता हुं वह मजरनम की मंत्रिय अहिंगा है। किन्तु उसमें निवंततम भी और अधिक निर्जन हुए दिना भाग ले सनते हैं। वे उसमें शामिल हीकर सबसतर ही होते। आम जनता आज पहले की तुलनामें वहीं अधिक गाहगी बन मुची है। बहिमात्मक समर्प में अनिवायतः सामृहिक पैमाने पर निर्माण सन्तिबिष्ट होना है। इसलिए वह तमस या अवकार या जडता की बोर नहीं से जा सकता। इसका अर्थ है राष्ट्रीय जीवन में गति का ममावेत । यह आन्दोलन अभी भी मौन और प्रायः अगोचर निन्तु सुनिश्चित रण में जारी है।

में जातिकारियों की बीरता और शनिरान से स्नकार नहीं करता। बिन्नु बुरे देव के जिए बीरता और वीरिशन भव्य यक्ति का अरव्यय है और बुरे देव के निए दुरुविध में नियोग येथी बीरता और वनिरान को जमक देमक अच्छे स्वेय की और ते स्थान हटा कर उने तुकसान चुड़ेसारी है।

अब्द अप न जान है। होते आपवालिशारी के सामते तन कर वहे होने में सिन्दन नहीं होना, नवालि मैं भी उसके मुहाबले में उतनी ही मात्रा में एक बहिताहरूक व्यक्ति की बीरता और बिल्यान देश करने की समना रखता हूं दिया पर निर्दाश की बीरता और बाल्यान है। हम निर्दाश व्यक्ति की है। हम निर्दाश व्यक्ति की हुआंनी सूनरों को सान दें है। एक निर्दाश व्यक्ति की हुआंनी सूनरों को सान के दौरान नारे जाने वालों लोगों की हुआंनी से लाखों मुना बांधक चिक्रवाली होंगी है। निर्दाश व्यक्ति का सहस्य बीलदान देवर या

ममुख्य द्वारा आज वह कल्लिन विके द्वा सके उद्यवसम् अस्तालार का समसे विकिथामी प्रशास है।

में स्वराय की राह की तीन अधी याधाओं ती और तास्तिकारियों का म्यान धारुतित अस्ता अहता हं—अस्त का अपूरा प्रभार, हिन्दुओं और मुसलमानी के बीच पुट और दिवय सभी पर जमानतीय प्रतिबन्ध । में उनसे अनुरोप करता है कि निर्माण के इस अपरे में वे मैसे के साथ अपना उचित हिस्सा ग्रहण करें। संभव है, इसमें चहुन भव्यता न हो। किन्तु इसी कारण यहेन्यहे आलिकारियों के लिए जिनमा संभव है। उतने संपूर्ण बीरतापूर्ण बैयें, मोन और अटल प्रयास तथा आत्मित्सभैन की भावश्यकता है। अधीरता कान्तिकारी की इंटिट को भूथला कर देवी और उसे गुमराह कर देवी। भूखों मर रही जनवा के बीच रायंबरण करके धीर-पीरे तथा गौरवहीन तरीके से भूखों मरला मिथ्या गोरतवश कामी के तरते पर भूल जाने से सदैव अधिक बीरतापूर्ण होता है।

हर आलोचना असहिष्णुता नहीं होती । मैंने कान्तिकारियों की आलो-चना इसलिए की कि मेरे ह्यंब में उनके लिए सहानुभूति है। उन्हें मुभी गलत मानने का उसी तरह अधिकार है जैसे मुक्ते उन्हें गलत मानने का ।

"गुले पत्र" में अन्य वातें भी उठायी गयी हैं। पर मैंने उन्हें छोड़ दिया है ग्योंकि में समभता हूं कि पाठक आसानी से उनका जवाब दे सकते हैं और उनमें से कोई भी मूल प्रश्न को स्पर्ग नहीं करता।

मो. क. गांबी

उन्हीं दिनों शचींद्रनाथ सान्याल गिरफ्तार कर लिये गये ये जिससे विवाद आगे नहीं चल सका। मैंने कुछ समय तक इंतजार किया और फिर वीड़ा अपने ऊपर उठा लिया। मैंने एक पत्र लिखा और उसे उसी तरह हस्ताक्षरित किया—"एक क्रान्तिकारी"। यह ६ अप्रैल १६२५ को यंग इंडिया में गांघी जी के उत्तर के साथ प्रकाशित हवा।

मेरे मित्र क्रान्तिकारी

जिन क्रान्तिकारी को मैंने कुछ समय पहले उत्तर देने की कोशिश की थी जन्होंने फिर अपना आरोप दुहराया है और जन्हें दिये गये मेरे पहले के उत्तरों से पैदा होने वाले कुछ प्रश्नों का उत्तर देने को ललकारा है। मैं प्रसन्नता से उत्तर देता हूं। मुक्ते ऐसा लगता है कि मेरी तरह वह भी प्रकाश की खोज में हैं और भनी प्रकार तथा विना ज्यादा आवेग के दलीलें पेश करते हैं। मैं वचन देता हूं कि जब तक वे शान्त चित्त से तर्क करेंगे, मैं बहस जारी रख्ंगा। उनका पहला प्रश्न है:

"क्या बाद समयुत यह बिदवास करते हैं कि मारत के कान्तिकारी, स्वर्याजियों, वापर्पियों और राष्ट्रवादियों से कम बनिदानी, कम उदात या अपने देश के कम प्रेमी हैं? क्या मैं आपको जनता के तामने कुछ ऐसे स्वरा-वियों, वापर्पियों या राष्ट्रवादियों के नाम पेस करते की चुनीलों दे सकता हूं कियों, वापर्पियों या राष्ट्रवादियों के नाम पेस करते की चुनीलों दे सकता हूं कियों, वापर्पियों या राष्ट्रवादियों के मान पेस करते की चुनीलों दे सकता हूं किया किया किया की देशते हुए स्वात से इनकार कर वें कि कार्याचार देशते हुए स्वात से इनकार कर वें कि कार्याचार पार्टी से अपने देश के लिए मारत की वेंचा करने का दावा करने वाली किसी अन्य पार्टी से अपने देश के लिए मारत की वेंचा अपने पार्टि से आप इसरी पार्टियों के साथ समझीते करने को तैयार हैं, जबकि हमारी पार्टि से आप इसरी पार्टियों के साथ समझीते करने को तैयार हैं, जबकि हमारी पार्टियों के साथ प्रधान करते हैं और हमारी भावनाओं की विषय ताती हैं। स्वा अप क्रिकेट कार्य पार्टि की आप इसरी करते हैं और हमारी भावनाओं के तिथ की स्वर्य की मित्रवादों के साथ करते कार्य करते की स्वर्य ही पर्टिया है, असहनदीसता मूनक इसरी पार्टि का स्वीम करते कांग नहीं आयेने ? उन्हें भुमराह देशमक या बहरीता सर्व पुकारने से आप करां करता वार्ट हैं।

में भारत के क्रान्तिकारियों को अन्य लोगों से कम विनदानी, कम उदात या अपने देदा का कम प्रेमी नहीं मानता। पर में सम्मान के साथ यह दावा करता ह कि उनका बिलदान, उनकी उदातता और उनका देश श्रेम म केवल निष्कृत हैं बल्कि अज्ञानपूर्णऔर पषभ्रष्ट होने के सारण देश की किसी भी दसरी गतिविधि से ज्यादा क्षति पहुचाते हैं और पहुंचाया है। नारण यह कि कान्तिकारियों ने देश की प्रगति में बाधा डाली है। अपने विरोधियों के जीवन के प्रति उनकी अंध उदासीनना के कारण ऐसा दमन हुआ है जिसने उन्हें, जो जनकी लड़ाई में भाग नहीं सेते, पहले की तुलना में ज्यादा कायर बना दिया है। दमन उन्हों के लिए लाभकारी है जो उसके लिए तत्पर हाँ। आम जनता वान्तिकारी गतिविधियों के कम मे होने वाले दमन का सामना करने और अनजान में उसी सरकार के हाथ मजबून करने के लिए तैयार नहीं है जिसे कान्तिकारी लोग दिनष्ट करने वा दादा करते हैं। यह मेरा निरियन विश्वास क्षात्वकारा चान विकास की हत्याए न हुई होती तो बारदोती में जिस आन्दो-हान अपर पान क्या गया था उसके परिचामस्वरूप स्तराज की स्थापना हो गयी होती । इसलिए क्या इसमें कोई आरबर्च को बात है अगर में ऐसा मत रखते हुए व्यक्तिकारियों को पर्यक्षण्ट और इसी कारण शतरताक देशमक रसत हुए अगर मेरा बेटा अपने अज्ञान और अप प्रेम के कारण अपने वहता हूं । अप शोवन को सनरे में बास कर उन विकित्साची में सड़ बाने जिनकी विकित्सा लोबन को लार । पद्धति मुक्ते नुक्सान पहुंचाती है पर शिक्षमें मैं सक्ने मीतर इच्छा प्रक्ति सा

मोगाना की कामी के कारण यन जाती सहका थी में उन प्राधाय और सनस् नाक परिचारक मार्नुगा । फल यह होगा कि में एक भने बेटे में हाथ भी बैट्रेगा और उन विक्रियमों का भी कीत भाजन यसगा जी बेट के कार्यकतार में मेरी मिलीभगा का मंदेर करके अवभी अभिकारक विभिन्ना का मिलसिवा नताते जाने के निया मुभी देखित करने की भी कीशिश कर सकते है। अगर वेटे ने चिकित्सकों को उनकी मलनी समझाने की, या चिकित्सा स्वीकार कर लेने में मेरी कमकोरी मुके समकाने की कोजिश की होती हो संभव था कि चिक्तिकों ने अपना नरीका मुधार निया होता या मेंने निकित्ना अस्वीकार कर दी होती या कुम ने कुम निवित्साकों का कीत आजन अपने में बच निकलता । में अन्य पार्टियों के साथ कुछ समकौते अवस्य करता हं पर्वोक्ति, हालांकि में उनसे मत-भेद रुपता हूं, फिर भी में उन ही गतिविधियों को उतना सकारात्मक दृष्टि से हानिकर और रातरनाक नहीं मानता जितना क्रान्तिकारियों की गतिविधियों को मानता है। मैंने कान्ति करियों को "जहरीला सर्व" कभी नहीं कहा। किन्तु में उनकी कुर्यानियों पर भायोत्मत्त हो जाने से इनकार करता हूं, चाहे वे कितनी भी महान गयों न हों, ठीक उसी तरत जैसे भेंने अपने पयभ्रष्ट बेटे की कुर्वांनी का जो कल्पित इष्टांत दिया है, उसकी कुर्वांनी की सराहना करने से इनकार करूंगा। भेरा निश्चित विश्वान है कि जो लोग क्रान्तिकारियों की कुर्वानियों के लिए अप्रकट या प्रकट रूप में उनकी प्रशंसा करते हैं, वे उन्हें तथा अपने अभीष्सित ध्येय को क्षति पहुंचाते हैं। पत्र-लेखक ने मुअसे उन गैर क्रान्तिकारी देशभक्तों का उदाहरण देने को कहा है जिन्होंने देश के लिए अपने प्राण दिये हों। इन टिप्पणियों को लिखते हुए मुक्ते दो समग्र उदाहरण स्मरण हो रहे हैं। गोखले और तिलक अपने देश के लिए ही मरे। उन लोगों ने अपने स्वास्थ्य की प्रायः विलकुल परवाह किये विना कार्य किया और समय से बहुत पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। फांसी के तख्ते पर भलकर मृत्यु प्राप्त करना अनिवार्यतः आकर्षक नहीं है, अक्सर ऐसी मृत्यु मलेरियाग्रस्त इलाकों में सब्त मेहनत और मशक्कत की जिन्दगी से ज्यादा आसान होती है। मैं इस बात से काफी संतुष्ट हूं कि स्वराजियों और दूसरों के बीच ऐसे लोग हैं जिन्हें अगर यह विश्वास हो जाये कि उनकी मृत्यु से देश को मूक्ति मिल जायेगी तो वे अपने जीवन का किसी भी दिन उत्सर्ग कर देंगे। में अपने क्रान्तिकारी मित्र को यह सुभाव देना चाहता हूं कि फांसी के तख्ते पर मृत्यु से देश की सेवा तभी होती है जब कि फांसी चढ़ने वाला "वेदाग निरीह व्यक्ति" हो।

"'भारत का रास्ता यूरोप का रास्ता नहीं है।' क्या आप सचपुच इस बात में विश्वास करते हैं ? क्या आप के कहने का यह तात्पर्य है कि यूरोप के संपर्क में अनि के पहुँते भारत में युद्ध तथा तेना के संगठन का अस्तिस्य नहीं था? अच्छे लड़्य के लिए बुद्ध — क्या सह भारत की बेठना के बिच्द हैं? "विना-पात ब बुख्काम्" = क्या सूरोप से आवात किया गया सिद्धाल हैं? मान लिया कि यह योग्य से आयात किया यहा है, तो क्या आय इतने हुठ्यमाँ हैं कि योग्य में जो कुछ अच्छा हो उसे भी नहीं प्रहुत करें हैं क्या आप नह मानते हैं कि योग्य में कोई अच्छाई संगव नहीं? अगर अच्छे लड़्य के लिए पहुर्यन, राज्यात और कुर्यानी भारत के लिए युरे हैं तो क्या योग्य के लिए भी युरे नहीं होगे?"

में इस बात से इनकार नहीं करता कि योरच के संपर्क में आने के पहले मारत में सेनाएं, युद्ध जादि होते थे। यर में यह भी कहता हूं कि यह मारतीय जीवन का सामान्य कम कभी नहीं रहा। योरच के विचरीत यहां आम जनता पुद्धारों मारतानों में अहता हो की यह पुका हूं कि में इत पूछों में पहले ही यह पुका हूं कि में सीता का उपासक हूं। पत्र-लेखक ने उक्त प्रतिबंद करोग भीता से उद्गृत किया है। कि में ते को भी किया जाना है, मैं उनते विवाहुक गिन्त अर्थ करता हूं। मैं उने भीतिक युद्ध का वर्णन या उपरेश नहीं मानता। और हर हातत में उक्त फारीक के अनुसार दुग्कर करने वालों का विवाह करने के लिए करने के उक्त स्वाह करने के लिए करने के तिया नहीं का प्रतिक से से प्रतिक से प्रतिक से प्रतिक से प्रतिक से प्रतिक से से प्रतिक से

"'मारत कतकता या थंबई नहीं है।' बचा में आपके महारमा-पद के मनार पूर्ण आदर के साथ यह तिबेदन कर ताहता हूं कि प्रान्तिकारी लोग भारत का मुगोम दतनी अब्बंधी तरह आतते हैं हि वे दग भौगोतित कर को आसानी से जान सकते हैं। हम इस तरप को उसी तरह आतते हैं जैसे हम पर मानते हैं कि छोड़े से परात कारते बाते लोग हो समूर्ण भारतीय राष्ट्र नहीं है। हम मान सकते हैं। हम इस तरप को उसे समूर्ण भारतीय राष्ट्र नहीं है। हम मान सकते हैं कि सिवानी, बगार और राष्ट्रोंन को ये समाई हमारी माकताओं को और हिसी चीज से ज्यारा तरप्रता तथा नहरायी से मममनी है? क्या आप यह नहीं मानते कि दिसी देशाहिक और मध्य भारत के नितान निरिक्त यता और हार्सीनक कारता के अवनत की कोशा स्थान और पूर्व निरिक्त मतिरोध हिसी भी संस्तु के निर्माण की से सारत के रिण्ड कर की प्रता बेहनर नहीं है ? भेरा मनसब उस मनपरना में है जो आपके अहिंगा के सिद्धान के उपदेश के मनरण, या यह महाना ज्यादा सही होगा कि इस सिद्धांत की मलत ज्यादा। और दृष्यपोग के भारण संपूर्ण भारत में ज्यान हो गयी है। अहिंसा निभेन और अगहाप का मिद्धान नहीं है, यह सबन का सिद्धान है। हम भारत में ऐसे लोगों को पैदा फरना जाहने हैं जो मीन में पींदे नहीं हरें— भन्ने ही पह किसी भी समय और किसी भी रात में आये—पीर जो मुख्त करते हुए मृत्यु का परण करें। हम इसी भागना के साथ गांवों में प्रवेश कर रहे हैं। हम परिपयों और जिला वोशों के लिए योड वसूनने के लिए गांव में प्रवेश नहीं कर रहे हैं बिक्त हमारा उद्देश है बेदा के लिए ऐसे साथी प्राप्त करना जो प्राप्त ये नकीं और कोई मूक पर्यर तक यह न बता सके कि उस बेचारे का अब कहा है। यया जाप मैजिनी की भांति यह मानते हैं कि यहीदों के सून में गोंपित होने पर यिवार कल्य परिष्त व होते हैं?

गलकत्ती और रेलवे ने दूर के गांवों के बीच भौगोलिक अंतर की जानना ही काफी नहीं है। अगर कान्तिकारियों को इनके बीच का आंगिक लंतर मालूम होता तो य भेरी तरह नरता कातने वाले बन गये होते। मैं अंगीकार करता हूं कि हमारे पास जो पोड़े से चरला कातने वाले हैं, वे ही सम्पूर्ण भारत नहीं हैं । लेकिन में यह दावा करता हूं कि सारे भारत से पहले की तरह चरला कतवा सकता संभव है और जहां तक सहानुभूति का सवाल है। बाज भी आन्दोलन के गाय लागों भारतवातियों की सहानुभूति है लेकिन वे कहीं क्रान्तिकारियों का साथ नहीं देंगे। में इस दावे का खंडन करता हूं कि क्रान्तिकारियों को ग्रामवासियों के बीच सफलता मिल रही है। पर अगर उन्हें सफलता मिल रही है तो मुक्ते इसका दुख है। में उनके प्रयासों को विफल करने में कुछ भी नहीं उठा रखूंगा। किसी पैशाचिक शक्ति के खिलाफ सशस्त्र पडयंत्र शैतान के मुकाबले शैतान को खड़ा करने जैसा है। किन्तु चूंकि एक शैतान ही मेरे लिए कई के बराबर है, इसलिए में उनकी संख्या नहीं वढ़ाना चाहूंगा। मेरी गतिविवि प्रयासहीन है या सप्रयास यह देखना अभी बाकी है। साथ ही, अगर जहां एक गज सूत काता जा रहा था वहां अगर दी गज काता जाने लगा तो यह अच्छा ही है। कायरता से मैं नफरत करता हूं, चाहे वह दार्शनिक हो या अन्य प्रकार की। और अगर मुक्ते यह समभाया जा सके कि क्रान्तिकारी कार्यकलाप से कायरता दूर हुई है तो इस तरीके के प्रति मेरी नफरत बहुत कम हो जायेगी, सिद्धान्त के आधार पर में उसका चाहे, कितना ही विरोध करता रहूं। पर जो भाग-दौड़ करता है यह देख सकता है कि अहिंसात्मक आन्दोलन के कारण ग्रामवासियों में वह साहस आ गया है जिससे अभी चन्द सालों पहले तक उनका कोई परिचय ही नहीं था। मैं यह

न्दीकार करता है कि महिमा मूलतः सयत का अस्त है। मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि अक्तर मुकदिती को अम से अहिसा समभ तिया जाता है।

मेरे बोस्त जब यह कहते हैं कि क्रानितारी वह है जो "सुहत करता है और पूर्य का परा करता।" दारो बात पर तो में आपित करता है। मेरे निवार से वे बुरुक्त करते हैं भी स्वार्य करते हैं। के कार्तिकारी भी बुरुक्त करते हैं। में करते हैं। में करते हैं। में करते हैं। पर किसी भी पिरिपति में हाया पा बच या आतकवाद को कच्छा नहीं मानता। में यह मानता है कि प्रहोंनों के सूत्र के पीरात होते दें। पर जो व्यक्ति तेवा के दौरात जनती बुलार से धीरे-धीर मरता। है अप उत्त के ही पर जो व्यक्ति होते हैं। पर जो व्यक्ति तेवा के दौरात जनती बुलार से धीरे-धीर मरता। है अप उत्त के प्रत मानता के स्वार्य करते पर मूनने वाला। और जगर कांबी के तक्ते पर भूनने वाला किसी इसरे के चून का बोधी है तो उत्तक पास ऐसे विवार हो नहीं जिनके परिचक्त होने की जरीश है तो उत्तक पास ऐसे विवार हो नहीं जिनके परिचक्त होने की जरीश हो।

कान्तिकारियों के विश्व आपका एक एतराज यह है कि उनका आन्दोलक जन आन्दोलन नहीं है, फलतः हम जिस कान्ति के लिए तैयार हो रहे हैं जससे जाम जनता की बहत ही कम लाभ होगा। यह परोक्ष रूप में यह कहना है कि इसने सबसे ज्यादा लाभ हम लोगों को होगा । क्या दरअसल यही आपके कहने का तात्पर्य है ? क्या आप यह मानते है कि वे लोग जो अपने देश के लिए गदा प्राण देने को तत्पर हैं, स्वदेश के वे पागल प्रेमी, मेरा मतलव भारत के क्रान्तिकारियों से है जो निष्काम कर्म की भावना से अनुप्राणित हैं, मातुन्तिम के साथ विश्वामधात करेंगे और इस जन्म के लिए-इस पुच्छ जीवन के लिए-विशेष मुख-मुविधायें हासिल करेंगे ? यह सही है कि अभी फीरत हम जनता को संघर्ष में नही खीचेंगे, मयोकि हम जानते हैं कि यह कमजीर है किन्तु जब सैयारी पूरी हो जायेगी तम हम उन्हें भी मैदान में उतारेंगे। हम वर्तमान भारत की मनोदशा की पूरी तरह जानने का दावा करते हैं क्योंकि हमें अपने बन्धुओं को स्वयं अपने साथ तौतन परखने का रोज मौका मिलता है। हम जानते हैं कि भारत की आम जनता आजिरकार भारतीय है, वह ए विश्वल मही है, किन्तु कुतल नेताओं की बमी है; इसलिए जब हम सतत प्रचार और शिक्षा द्वारा अपेक्षित संख्या मे नेता पैदा कर लेंगे और हथियार इवट्ठे कर लेंगे तो हम यह सिद्ध करने के लिए कि जनता शिवाजी, रणजीत. प्रताप और गौविद सिंह की संवान है जिसे खुले मैदान में उतारने में या जरूरत हुई तो घसीट लाने मे नहीं हिचकेंगे। इसके बलावा हम लगातार यह प्रतिपादित करते रहे हैं कि आम जनता नान्ति के लिए नही है बल्कि क्रान्ति ्ञाम जनता के लिए है । क्या यह इस संवय में आपके पूर्वपर को दूर करने के

में न मह बहुता है और न मह भेरा अनिवास है हि अगर अवाम की लाभ नहीं होता तो व्यक्तिकारी की ताम पहुंतना है। इसके विवरीत, आम अर्थ में क्यान्तिकारी को अभी ताम नहीं होता । यदि कान्तिकारी लोग जनता को अपनी और आक्षित इसने में, त ि "चुनीदने" में, मफल हो जायें तो वे धेरोंने कि काविताना अभियान सर्वेषा अनावश्यक है। "भिवाजी, रवजीत, प्रताप और गोबिद निह की मनानी" की दान करना यहा गुराद और उत्तेत-नात्मक मालूम होता है। पर प्या यह भव है ? त्या हम सभी उस अर्थ में इन बीरो की मंतान है जिस अर्थ में पत्र-लियक समभता है ? हम उनके देशवासी हैं किन्तु उनकी मन्तामें भैनिक धर्म के लोग हैं। हम भविष्य में जाति का मूलोच्छेद करने में सफल हो मनते हैं पर आज वह बरकसार है और इस कारण लेखक हारा किया गया दावा भेरी राय में सिद्ध नहीं किया जा सकता ।

"अंत में में आपने इन प्रश्नों के उत्तर मांगता हूं: यवा गुरू गोविंद सिंह इस कारण पथभ्रष्ट देशभक्त थे कि वह एक उदात्त ध्येय के लिए युद्ध में विश्वास करते थे ? आप वाशिगटन, गैरीवाल्डी और लेनिन के बारे में क्या कहना चाहेंगे ? आप कमाल पाशा और है वेलेरा के बारे में क्या सोचते हैं ? क्या आप शिवाजी और प्रताप को ऐसा नेकनियत या बिलदानी चिकित्सक कहेंगे जिन्होंने ऐसे समय संखिया का प्रयोग किया जविक उन्हें ताजा द्राक्षारस देना चाहिए था ? क्या आप कृष्ण को इसलिए यूरोपीयकृत कहेंगे कि वह दुष्कृतों के विनाश में विश्वास करते थे ?"

यह एक दुरुह या वेढंगा सवाल है। पर मैं इससे पलायन नहीं करूंगा। एक तो गुरू गोविद सिंह और दूसरे जिनके नामों का उल्लेख किया गया है, गुप्त हत्या में विश्वास नहीं करते थे। दूसरे, ये देशभक्त अपने कार्य और अपने लोगों को जानते थे, जबिक आधुनिक भारतीय क्रान्तिकारी अपना कार्य नहीं जानता। ऊपर गिनाये गये देशभक्तों को जैसे सहायक और जैसा वातावरण प्राप्त थे, वैसे सहायक और वैसा वातावरण हमारे क्रान्तिकारी को सुलभ नहीं हैं। मेरे विचार हालांकि मेरे जीवन सिद्धान्त से उद्भूत हैं, फिर भी मैंने उन्हें ह। नरावता है। का किया है। क्रांतिकारियों से मेरा इस लायार पर आचारित है। इसलिए उनकी गतिविधियों की

चुनना गुरू गोबिद सिंह या बाशिगटन या गैरीबाल्डी या लेनिन से फरना निहायत धमोत्यादक और रातरनाक होगा । विन्तु अहिंसा के सिद्धान्त की क्योंटो पर मुक्ते यह बहने में कोई हिचा नहीं है कि यह बहुत हद तक संसव है कि अगर में उनरा समसामधिक होता और उनने देशों में बहुना हो में उनम से हरेरे को मफल और बीर मोदा किन्तु पयभग्ट देशभक्त ही कहता। पर आब जैना कुछ है, मुने उनके बारे में निर्णय नही देना चाहिए। जहां तक बीरों के कृत्यों के विस्तृत स्पीरों का सवाल है, में इतिहास पर अविस्वास बरता हं। में इतिहास के मोटे-मोटे तथ्यों की स्वीवार करता ह और अपने वाचरण के तिए स्वयं सबक निकालता है। जहां तक मोटे-मोटे तथा जीवन कै उच्चतम नियमों का प्रत्याख्यान करते हैं, मैं उते दुहराना नही चाहता। किन्तु में इतिहास से प्राप्त अन्य सामग्री के बाबार पर व्यक्तियों के बारे में निर्णय करने से सर्वया इनकार फरता हूं। मृत व्यक्तियों की अच्छाई के सिवा और बुद्ध नहीं बहुना चाहिए। कमाल पासा और है वैलेश के बारे में भी मैं निर्णय नहीं दे सकता। पर मैं सरामर अहिमा में विश्वास करता है और जहां तक युद्ध में उनके विश्वास की बात है, वे मेरे जीवन के पथ-प्रदर्शक नही बन मकते। कृष्ण में मैं शायद पत्र-लेखक से ज्यादा विश्वास करता है। किन्तु भेरे कृत्व ब्रह्मांड के स्वामी, हम सभी के लावा, रक्षक और संहारक हैं। वे सहार कर सबते हैं, इसलिए कि सुच्टि करते हैं। पर मुक्ते अपने मित्र के साथ दार्श-निक या धार्मिक तर्क में नहीं उलफता चाहिए। मुफ्तमें अपने जीवन के दर्शन की शिक्षा देने की योग्यता नहीं है। मुक्तमें तो केवल उस दर्शन पर अमल करने की योग्यता है, जिसमें मैं विदवास करता हूं। मैं मन, वचन और कमें से सम्पूर्णतः अहिसारमक यनने के लिए जाकंटिन एक निरीह समर्पेट्स आहमा हैं किन्तु जिस आदर्श की मैं सत्य मानता हं उस तक पहुंचने मे असफल रहा हूं। में स्वीकार करता हूं और अपने कान्तिकारी मित्रों को आस्वासन देता हूं कि यह एक कट्टदायी चढाई है, पर इसना कट्ट मेरे लिए एक प्रत्यक्ष मुख है। ऊपर की और हर कदम के साथ में सबलतर हूं और अगले कदम के लिए सक्षम महसूस करता हूं। पर वह सारा कष्ट और सुख मेरे लिए है। कांतिकारी लीग मेरे सम्पूर्ण दर्शन की ठुकरा देने की आजाद हैं। उनके सामने में उसी तरह एक सहकर्मी की हैस्यित से अपना अनुभव पेरा करता हूं जैसे मैंने अभी बन्धुओं और अन्य अनेक मित्रों के सामने सफलता के साथ पेस किया है। वे मुस्तफा कमाल पाशा और सम्भवतः हे वैतरा और लेनिन के कार्य का पूरे हृदय मे गुण्यान कर सकते हैं और करते हैं। किस्तु वे मेरे साथ पह महसस करते हैं कि भारत तुर्शी या आयरलंड या रूस की तरह नहीं है और एक ऐसे देश में जो इतना विशाल है, इतनी बुरी तरह विमाजित है और जिसकी बनता

इतनी गहराई तक विद्या में इसी है और इतनी पायरता के साथ जातंकप्रस्त है, अगर गया नहीं भी इस देश के भी एवा भरण में हर हालव में, कोतिकारी कार्यगई आस्मपायक है।

मेंने एक और पत्र निया। यह भी उसी तरह ७ मई १६०५ को यंग इंडिया में प्रकाशित हुआ। पत्र तिम रूप में यंग इंडिया में छना ना वैंग ही नीने दिया प्राप्त है।

फिर वही प्रगंग

मेरे फ्रान्तिकारी मित्र ने फिर आरीप लगाया है। लेकिन में उन्हें यह बता यूँ कि उन्होंने इस पत के लियाने में पहले जैसे मैसे का परिचय नहीं दिया है। उन्होंने विचाराधीन पत्र में बहुत-सी अवासंगिक सागर्या का समावेग कर दिया है और दीले-टाले गरीके से सके किया है। जहां तक मैं देख मकता हूं, उनके सारे तक समान्त हो पुके हैं और उनके पाम कहने को कुछ भी नया नहीं रह गया है। किन्तु अगर वह फिर निराते हैं तो मेरी सलाह है कि वह अपना पत्र ज्यादा सावधानी में लिगों और मूलतः अपने विचारों को पेश करें। इस बार उनके लिए यह कार्य मुक्ते करना पड़ गया है। लेकिन चूंकि वह रोशनी योज रहे हैं, मैं जो इसलिए गुद्ध लिया रहा हूं उसे उन्हें सावधानी से पढ़ना चाहिए, और फिर अपने विचारों को स्पष्ट करना चाहिए तथा उन्हें साफ-साफ और संक्षेप में लिपिबड़ करना चाहिए। अगर उन्हें मुक्तसे सिर्फ प्रश्न पूछने हैं तो मुभे विख्वास दिलाने के लिए तक किये बिना उन्हें उन प्रश्नों की दर्ज कर डालना चाहिए। में कान्तिकारी आन्दोलन के बारे में सब कुछ जानने का दंभ नहीं भरता, पर चूंकि मुभी बहुत अधिक सोचना, निरीक्षण करना और लिखना पड़ा है, इसलिए कोई नयी बात बहुत कम वे मुक्तते कह सकते हैं। इसलिए मैं जहां खुला दिमाग रखने का वचन देता हं, वहीं मैं उनसे निवेदन करता हूं कि कृपा कर वे राष्ट्र के एक व्यस्त सेवक और क्रान्तिकारियों के एक सच्चे मित्र को ऐसा बहुत कुछ पढ़ने के श्रम से बचायें जिसे पढ़ने की उसे जरूरत नहीं। मैं इस क्रान्तिकारी से संपर्क वनाये रखने को उत्सुक हूं और यह काम मैं इन्हीं स्तंभों के जरिये कर सकता हूं। उनके प्रति मेरे हृदय में सहार्ज-भूति है क्योंकि उनके और मेरे बीच एक चीज समान है-कुट सहने की भीत है विशोध उनके जार भर वाच एक चाज समान है—कब्ट सहन का गोग्यता। किन्तु चूंकि मैं विनम्रता के साथ यह विश्वास करता हूं कि वे गलत और गुमराह हैं, इसलिए मैं चाहता हूं कि उन्हें गलती से हटा सकूं या इस प्रक्रिया में में खुद अपनी गलती से हट सक्।

मेरे क्रान्तिकारी मित्र का पहला सवाल है:

" 'क्रान्तिकारियों ने देश की प्रगति में वाद्या पहुंचायी है।' क्या आप

करने ही दिवार से मनभेद रुवने हैं वहांकि भारते वह अब के सिलसिते में लिया था : "विमाजन के बाद मोगों को संगा कि वाचिता का समर्थन शक्ति में होता चाहिए, और उन्ने बच्द सहत करने में सहाम होना चाहिए । इस भावना को विमायन का मुक्त नतीजा साना बाना बाहिए ।... जो कार्य सीम भरेपर कारते हुए और गुप्त क्य में बहते में बह तुल कर बहा और निला जाने लगा। ... भीग, यहा और बड़, किमी अंग्रेज का चेहरा देगते ही नी-दी-मारह हो बाउं थे; बब भीग इससे बचभीन नहीं होते । अब वे फसाद से, या केंद्र हो जाने में भी नहीं करते । आरत की 'कुछ थेप्टतम सानानें आज निवासित हैं। विमातन के बाद, या यह बहुना गठी होगा कि जनता की बेचैनी की अभि-कारित के रूप में जो आन्दोलन हुआ, यह कान्तिकारी आन्दोलन था. और भारते भारत की जिल केटराय संतानों की बात की है उनमें से अधिकादा वान्तिकारी या अर्थक्रान्तिकारी ही है। यह कैसे हुआ कि ये सथायवित अन भीर दिग्मिमन सोग भारत की गुजदिली की दूर करने में नहीं तो कम से कम उने घटाने में सफल हो सके ? बवा आप इनने असहित्य हैं कि क्रान्तिकारियाँ की इसलिए अज कहें क्योंकि के आपके अहिसा के अबचे गतवाद को सही मसाम स्वाने ?" इंडियन होन इस में, जिससे सेलक ने उदरण दिया है, व्यक्त किये गये विचार और मेरे द्वारा व्यक्त किये गमे विचारों में कोई अंतर नहीं है। जिन भीगों ने विमात्रन आन्दोलन का नेतृस्य किया, चाहे वे जो कुछ और जो नोई हों, उन्होंने अंग्रेजों के अब मी निस्सदेह दूर किया । वह देश की निश्चित सेना थी। किन्तु यह जरूरी नहीं कि जो बहादुर और आत्मवलिदानी है वह हत्या करें । अध्या हो, मेरे मित्र स्मरण करें कि जैसा कि इंडियन होम इस प्सितका

विचार आर सर हारा करता किया गय विचारों से काई क्षेतर नहीं हैं। जिल मोंगों ने दिमानून सारदोनन को नेतृत्व दिया, पार्ट्ड को तो कुछ कीर जो कोई हों, उन्होंने कंदेनों के अप को निरम्तर हुर किया। वह देश को निरिच्त सेवा मी। किन्दु कर अपने में ही कि सार कर दें। किया हो, मेरे पित्र कर कर कर रिक्त को स्वाहर और कारवस्तानों है वह हमा नरें। किया हो, मेरे पित्र कराव के रिक्त कर किया है, मेरे पित्र कराव के रिक्त किया है, के स्वाहर के कारवस्तान कीर तरिकों के जवाब में ही किया गयी है। का तिवक्त दियों में कारवस्तान कीर बाहरू के प्रवास में ही किया गयी है। को मानदा पार्ची कार्यों है। कार्य कर प्रवास के किया है। की स्वाहर के किया है जारों कर कर की कीशवा की गयी थी को, उनके पार को सुद्ध है की के मेरे पित्र के निर्माण की स्वाहर की किया है। मेरे किया है किया है की सुद्ध कर कारवी मानदीं समस्ते। मेरे किया है किया है की सुद्ध करना की भी नहीं समस्ते। मेरे किया है किया है वर्ग में से हरेक अपनी करना और अपने होगों की आवार की राज्य की सामसे।

इसरा सवाल है : "क्या टेरेन्स मॅकस्विनी एक 'बेदाग निर्दोष व्यक्ति' या जब वह ७१ दिनों की मुल-इक्तान के बाद मर गया ? हपया याद रसिये कि वह अंत तक पहयंत्र,

=

रकतात और आवंकताद का हिमायती चा, और भागी प्रसिद्ध पुस्तक ब्रिसिपरस आफ फोडम में रुपता किये गर्थ विभारी पर कायम रहा। अगर आप मैक रिचनी की 'विद्याग निर्देश रुपति' पृहारते हैं हो क्या आप गही पर गीपीमीहन साहा के लिए प्रयोग करने को सेयार गही होगे ?''

मुझे दृष्य के साथ यह कहाना पड़ता है कि मैं मैकरियनों के जीवन के बारे में इतना काफी नहीं जानता कि उसके बारे में कोई राय दे सकू। किन्तु अगर यह "पड़्यंत्र, रहावात और आतंक्ष्याद" का हिमायती था तो उसकी पढ़ित पर यही आपितायों होंगी जो इन पृथ्वों में पेदा की गयी हैं। मैंने कभी उसे "बेदाम निवांय व्यक्ति" नहीं माना। जब उसके अनदान का एलान किया गया था तब मैंने अपनी विनस राय दी थी। कि मेरे इंटिक्शेय ने यह मतती थी। मैं हर अनदान को उसित नहीं मानता।

वीसरा मवाल है :

"आप वर्णों में विश्वास करने हैं। इसिनए यह स्वतः सिद्ध है कि अप शित्यों की वही उपयोगिता मानते हैं जो किसी भी अन्य वर्ण की। क्रान्तिकारी लोग भारत के इस निःक्षित्रिय युग में क्षित्रिय होने का एलान करते हैं। 'धतात त्रायते इति क्षित्रिय'। में भारत की इस स्थिति की सर्वाधिक क्षद्य मानता हं जिससे भारत का कभी साधिका पड़ा हो, दूसरे शब्दों में यही समय है जब भारत में क्षित्रयों की सर्वोपिर आवश्यकता है। हिन्दू स्मृतिकारों के शिरोमण्य मनु ने क्षित्रय के लिए चार नीतियां निर्धारित की हैं: 'साम, दाम, देख, भेद'। इस प्रसंग में में विवेकानन्द का एक अंश उद्धृत कर रहा हूं जो मेरे विचार से आपके लिए मामले को पूरी तरह समभने में बहुत सहायक होगा।

"'सारे वड़े उपदेशकों ने सिखाया है "दुक्त का प्रतिरोध मत करो," उन्होंने सिखाया है कि अप्रतिरोध उच्चतम नैतिक आदर्श है। हम सभी जानते हैं कि यदि संसार की मौज़दा हालत में लोग इस सिद्धान्त का निर्वाह करें तो संपूर्ण सामाजिक ताना-याना छिन्न-भिन्न हो जायगा, समाज विनष्ट हो जायगा, उग्र और शठ लोग हमारो संपत्ति पर अधिकार जमा लेंगे, और संभव है हमारी जानें भी ले लें। इस प्रकार के एक दिन के भी अप्रतिरोध से देश रसातल में चला जायेगा।" मैं जानता हूं कि इस वेढव परिस्थित में आप क्या करेंगे, आप इसकी भिन्न प्रकार से व्याख्या करने की कोशिश करेंगे, पर आप पायेंगे कि उन्होंने इस तरह के मिथ्यार्थ के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी है क्योंकि वे फौरन आगे कहते हैं, 'शायद आप में से कुछ ने मगवद्गीता पढ़ी हो और शायद पश्चिमी देशों में आप में से अनेक को प्रथम अध्याय पर आश्चर्य हुआ हो जिसमें श्रीकृष्ण अर्जुन को इसलिए पाखंडी और कायर कहते हैं कि वे लड़ने या प्रतिरोध करने से इनकार करते हैं, क्योंकि उनके शत्रु उनके

मित्र और संबंधी लीग ही थे-जनके इनकार का आधार यह दलील है कि अवितरीय भ्रेम का उच्चतम आदर्श है। हम सभी के सीखने के लिए एक बहुत बड़ा सबक है और वह यह कि हर चीज के दीनों चरम बिंद एक जैसे होते हैं; चरम बनात्मक और चरम ऋणात्मक सदा एक जैसे होते हैं; जब अकास के कम्प अत्यधिक मन्द होते हैं ती हम उन्हें नही देख पाते. न ही हम उन्हें तब देख पाते हैं जब वे अत्यधिक तीत होते हैं: यही बात व्यति के साथ है, जब स्वरमान अत्यन्त निम्न होता है ती हमें स्नायी नहीं पहता, और अब अत्यन्त उच्च होता है तब भी हमें नहीं सुनामी पहता । प्रतिरोध और अप्रतिरोध के बीच के अंतर की धारणों भी ऐसी ही है।... हमें पहले यह समभने की। सावधानी बरतनी चाहिए कि हममें प्रतिरोध की धांक है या नहीं । तब शक्ति होने पर अगर हम उसका परित्याग करते हैं और प्रतिरोध नहीं करते तो हम प्रेम का भन्य कर्म करते हैं; किंतु लगर हम प्रतिरोध नहीं कर सकते और फिर भी साथ ही यह दिखाना और स्वयं विश्वास करना चाहते हैं कि हम उच्चतम प्रेम के ध्येपों से प्रेरित हैं तो नैतिक हप्टि से जो अच्छा है, हम उसके बीक विपरीत कमें करते हैं। अर्जुन अपने सन्मूख प्रचंड सैन्य-विन्यास देख कर कामर हो गये, उनके "प्रेम" ने अपने देश और राजा के प्रति उनके कर्तव्य की विस्मत करा दिया । इसी कारण श्रीकृष्ण ने जनसे कहा कि वे पासंही हैं : "तम युद्धिमान की तरह बात करते ही, किन्तु तुम्हारे कृत्व यह दिमाने हैं कि तम कायर हो, इसलिए उठ लड़े हो और लड़ो ।""

मैं फंट प्रस्त उठाने के सिवाजीर हुख नहीं नहुंगा। बया आप यह सीकरी आपके रामनान से आहिसारक गिया दस विदेशी मोकरसाही सरकार का मैरितक सीकि से प्रतिदेश कर सकते हैं। यदि हुए तो किस खायार पर; सबर नहीं, तो आपकी आहिसा सबस का अरुक केंसे रह बातों हैं। इपया इन प्रस्तो का नवाब सर्वेश अनुक क्य में सीजिए, जिससे कोई भी उनके असग-आवन अपने नक्षा की।

मेरे जीवन वर्तन में शांत्रकों के लिए स्थान है। निन्तुं उत्तरी परि-भाग की गीता में बीहें - शांत्रित वर है जो दूर मणीत नार ती मान जारी नहा होता । बीहने के साम जाति करणा है है है मान के मेर कहन कर तीह है जिल्ला और मन स्मृत्तिकारों ने मानवा के गावक विद्याल नहीं प्रस्तु के मिये थे। उन्होंने जीवन के मुद्ध शाइवत मून प्रतिपादित कर दिये और कमोबेंग उन्हों मूर्तों के अनुसार अपने मुग के लिए आनरण के लिगम प्रस्तुत किये। भारत की आजादी पाने के लिए तो दूर रहा, में स्वर्ग में भी प्रवेश पाने के लिए पूग और रहन के तरीकों को अपनाने में असमर्थ हूं। क्योंकि स्वर्ग, स्वर्ग नहीं रह जायेगा और आजादी, आजादी नहीं रह जायेगी, अगर इनमें से एक की भी ऐसे तरीकों से प्राप्त किया जाता है।

भैंगे उस उसरण को जांन कर नहीं देशा है जो विवेकानन्द का बताया गया है। इसमें न वह ताजकी है और न वह मंक्षिणता जो इस महापुरूप की रचनाओं में देशने में आती है। किन्तु चाहे यह उनकी रचनाओं में से हो या नहीं, यह मुर्फ संतुष्ट नहीं करना। अगर बहुत बड़ी संस्या में लोग अप्रतिरोध के सिद्धान्त का निर्वाह करें तो संसार की मौजूदा हालत ऐसी नहीं रह जाय। जिन व्यक्तियों ने इमको निभाया है उन्होंने कुछ भी गंवाया नहीं है। हिंस और घट लोगों ने उन्हें मार नहीं टाला है। उल्टे उन लोगों ने अहिसास्मक ग्रीर भले लोगों की उपस्थित में अपनी हिसा और शटता का परित्याग कर दिया है।

में गीता का जो अर्थ करता हूं, उसे में पहले ही कह चुका हूं। यह सर्व-असत् के बीच पादवत द्वन्द्व का निरूपण करती है। और जब सदसत् के बीच विभाजक रेखा इतनी सूक्ष्म हो और जब सही चुनाव इतना कठिन हो तो अर्जुन की तरह अवसर कौन हिम्मत हार नहीं जाता?

वहरहाल, में इस कथन का हृदय से अनुमोदन करता हूं कि सचमुच अहिसात्मक वही है जो प्रहार की क्षमता रखते हुए भी अहिसात्मक बना रहे। इसीलिए में यह दावा करता हूं कि मेरा शिष्य (मेरा एक ही शिष्य है और वह मैं स्वयं हूं) प्रहार करने की क्षमता रखता है—हां, उदासीन और शायद प्रभावहीन तरीके से, यह में स्वीकार करता हूं; किन्तु वह ऐसा करने की इच्छा नहीं रखता। मुभे अपने जीवन में अपने दिरोधियों को गोली से उड़ा देने और शहादत का सेहरा पहन सकने के कई मौके मिले पर मुभे उनमें से किसी को गोली मारने की इच्छा ही नहीं थी। क्योंकि में यह नहीं चाहता था कि वे मुभे गोली मारें, चाहे मेरे तरीकों को वे जितना भी नापसन्द क्यों न करते हों। में चाहता था कि वे मुभे मेरी गलती पर यकीन दिला दें जैसे में उनकी गलतियों पर यकीन दिलाने की कोशिश कर रहा था। "दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करों, जैसा वर्ताव तुम चाहोंगे कि दूसरे तुम्हारे साथ करें।"

दुख़ की बात है कि मेरे आज के स्वराज में सैनिकों के लिए स्थान है। मेरे क्रान्तिकारी मित्र को मालूम होना चाहिए कि एक पूरी जनता के निहत्थे बना दिये जाने और फलतः उनका तेज-हरण कर लिये जाने को मैंने अंग्रेजों का

सबसे जबन्य अपराध नहा है। मुक्तमें देश की सार्वभीम अहिसा का उपदेश देने की क्षमता नहीं है। इसलिए मैं जो ऑहसा का उपदेश देता हूं वह सही अर्थों में हमारी आजादी के प्राप्त किये जाने के उद्देश्य तक, और इसलिए शायद अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के बहिसारमक तरीके से नियमन का प्रतिपादन करने तक. सीमित है। किन्तु मेरी अक्षमता को गलती से अहिंसा के सिद्धान्त की अक्षमता नहीं मान लिया जाना चाहिए । मैं इसे अपनी प्रज्ञा से इसकी परी आस्वरता के साम देखता हूं । मेरा हृदय इसे बहुण करता है । किन्तु मेरी सिद्धियां अभी इतनी नहीं हैं कि मैं प्रमविष्णु तरीके से साबंभीम अहिंसा का प्रतिपादन कर सकूं। मैं इस महान दायित्व के लिए पर्याप्त प्रौढ़ नहीं हं। बभी मुम्में कीच है। अभी मुक्तमें द्वैतभाव है। मैं अपने भावावेगों का नियमन कर सकता है, में उन्हें बशीयत रखता है, किन्तू इसके पहले कि मैं प्रमविष्ण तरीके से सार्व-भीन बहिसा का प्रतिपादन कर सके, मुझे भावावेगों से पूर्णतः मुक्त हो जाना थाहिए। मुक्ते पाप करते में सर्वया अक्षम होना चाहिए। इन क्रान्तिकारियों को मेरे साय और मेरे लिए यह प्रापंना करनी चाहिए कि मैं शीझ ऐसा बन सकूं। किन्त इसी बीच उन्हें मेरे साथ इस दिशा में ऐसा एक कदम उठाना चाहिए जिसे में दिन की रोजनी की तरह साफ देखता हं अर्घात सख्ती के साथ अहिंसारमक साधनों से भारत की आंजादी प्राप्त करने का कदम । और फिर स्पराज में आपके और भेरे पास ऐसा अनुशासित, बुढिमान, और शिक्षित पुलिस बल होगा जो मीतर व्यवस्था रखेगा तथा बाहर के हमलावरों से सहेगा-अगर उस समय तक में या और कोई इन दोनों ने निबटने का कोई बेहतर रास्ता नही दिला देता है।

द्भा पत्रों ने उन दिनों जबदंत्त हलवन बचा दी वर्षों के ये तारे महत्वपूर्ण स्वारायलों में उद्धव किये गरे। अब राष्ट्रीय आप्योकन में निर्देश्य रूप से दो जितिर हो कु के व । आतिकारी तोग आरम्म से ही गांधी जो को सहत् इंग्ले तथा उनकी गतिविधियों को अप्य गतिविधियों का पूरक तक मानने वो तैवार थे, हिन्दु गांधी जी, और हुय हर तक वर्षाहरकाल नेहरू, हालाई सु अयराई के हि बेदेरा और हुई के कमान गांधा की सरहान मोर प्रमांता करते थे, क्रांतिकारियों का स्वाराय कर देशा बाहु में व नेहरू जो ने सूरीन में निर्वासन में रहने वाले पुष्टे कालिवारियों को चुरा-मता बहुने के लिए अपनी आरम्बा पर हु पूरा साधाय अपन कर दिशा है।

उत्तर की दस्तवियों के अलावा मान्याल द्वारा वान्तिकारियों के निष् तैयार की गयी पुस्तकों की आदर्स भूवी से कान्तिकारियों की दिवारपारा की मांकी पानी वा सकती थी। इस सूची में दि वेतरा, गैरीबास्टी, मेंदिनारे की और उनमें संबंधित पुष्तके आमिल थी। कुछ पुरतके हम में संबंधित थी। मुझे नाम नहीं माद है। मैंने दिन्दी में इस की राज्यकारत नाम की एक पुरतक कोड अन्य कई पुरतके खड़ीओं थी। उन दिनों मेंने किरकुप रचित एक पुरतक हिन्दी आफ सोझसिक्स पढ़ी थी। मेरा र्यात है कि उन दिनों ममाजयाद के इतिहास पर मही पुस्तक भारत में उपसद्य थी। इनके बलावा विभिन्त देनभितिपूर्ण निषमों पर यंगला, अंग्रेजी और हिन्दी में बनेक पुस्तकें थीं।

पैशानिक समाजवाद के विचार भारतीय गीजवानों के मस्तिष्क को तेजी के साथ अनिभून कर रहे थे। किन्तु एसी क्रान्ति का इतिहास पढ़ते समय हम लोग बोल्दोबिकों और गरोदयादियों के कार्यक्ताप के बीच कोई प्रभेद नहीं करते थे। हमारे लिए लेनिन उमी तरह एक अच्छे देशभक्त ये जैसे गैरीबाल्डी या सन यात-सेन। मैंने मावर्य के बारे में पढ़ा और मुना या, पर उन दिनों उनकी भूमिका को पूरी तरह समभने में अग्रमधं रहा। वह कमोबेश एक अव्यंत सम्य सज्जन प्रतीत होते थे, सर्वहारा के प्रति जिनकी प्रवृत्ति परोपकार की भावना से भरी थी। उनकी दाढ़ी और उनकी आंगें हमारे भीतर लत्यिक आदर भाव उपजाती थीं, किन्तु यह आदर भाव उस आदर भाव से ज्यादा भिन्न नहीं था जो हम लोग, उदाहरणायं, रवीन्द्रनाय ठाकुर के बारे में रखते थे।

यह देखते हुए कि १६२२-२५ में हम भारतीयों के लिए नसली तड़ाई अंग्रेजों के खिलाफ थी, यह कोई निचित्र वात नहीं थी। हमें देशभक्तिपूर्ण लड़ाई जीतनी थी, हां इसके साथ-साथ हम समाजनाद के लिए लड़ सकते ये या कम से कम लड़ने की तैयारी कर सकते थे। वह एक अलग सनान है। गांघी जी और तथाकथित गांघीनाद के खिलाफ लड़ाई हमारे कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण मुद्दा थी। इसे समाजनाद के लिए हमारी लड़ाई का एक मुद्दा होना है। चालीस साल पहले गांघीनाद के खिलाफ लड़ना कुछ कठिन था, किन्तु उत्तराधिकारियों और अष्ट शिष्यों की कृपा से अन यह दुष्कर नहीं। यह भ्रष्टाचार गांघीनाद में सन्निहित है; किन्तु नह एक अलग निषय है जिसका अलग से निनेचन किया जा सकता है।

मारत की राष्ट्रभाषा और गांधी जी

सरेन्द्र गोपाल

मौताना आजाद ने एक बार कहा या : "गांधी जी ने भारत की कई चीजें दीं. चैकिन शायद बहुत हो कम लोग यह महसूस करते हैं कि उनसे जो सबसे बड़ी भीजें मिली है उनमें से एक है राष्ट्रभाषा का विचार ।" मौताना आजाद एक हद तक ठीक थे। हालांकि राष्ट्रभाषा का विचार उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्ध से ही भारतीय नेताओं के मस्तिष्क को आन्दोलित करने लगा था, फिर भी इसे महात्मा गांधी ने ही स्वातंत्र्य आन्दोलन की तरह एक लोकप्रिय मसला बनाया । विचक्षण पूर्वहृष्टि से उन्होंने यह महसूस कर लिया कि राष्ट्रभाषा का अभाव न केवल राष्ट्रीय अनादर का प्रतीक है बल्कि देश के विकास में भी बायक है। जत: देश के राजनीतिक जीवन में सित्रय रूप में दाखिल होने के पहले ही उन्होंने हिंद स्वराज में भारत के लिए एक राष्ट्रभाषा की हिमायत की सीर इम निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह हिन्दी ही हो सकती है। जब यह देश के स्वातंत्र्य बात्रोजन में भाग जेते करे तो जनके विचार और निसर आये ।

महात्मा गांधी यह अनुभव करते थे कि राष्ट्रीय एकता के संवर्धन के लिए एक वास्तविक राष्ट्रभाषा अनिवार्य है।" उन्होंने कहा, "मैं भाषा का इतना आग्रह इसलिए करता हूं कि यह राष्ट्रीय एकता स्थापित करने का एक शक्ति-शाली साधन है और जितनी ही इदता से यह प्रतिष्ठित होगी, हमारी एकता छतने ही व्यापक आधार पर टिकी होगी।" एक विदेशी मापा, उदाहरणाय अंग्रेजी, भारतीय सन्दर्भ में "अवाम और अंग्रेजी-शिक्षित वर्ग के बीच एक स्थायी धीवार" खड़ी कर देती है, जो अपने गंतव्य की ओर देश की प्रगति को केवल अवरुद्ध ही करती है। महात्मा गांगी ने एक देशी राष्ट्रमाया के अमाव से

रामधारी सिंह 'दिनकर', राष्ट्रमाथा आन्दोलन और गांधी जो, पटना, १६६०. में चद्वत, पू. ४३.

भी. क. गांधी, चाँद्स आँन नेशनस संखेज, अहमदाबाद, १६६१, पृ. ३१. • वही, पृ. ४३-

[·] agt, 9. 64.

उरान्न होने नाने जनेन अस्य हानिनारक परिचामी को भी नक्षित हिया।

यह यह अनुभव करने भे कि निक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को बर-करार रक्तों में भारतीय प्रतिभा और ओज का क्षय हुआ है। उनका यह आग्रह या कि भारतीय विद्यार्थी अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा पाने में अपना रहुमूल्य समय तरुवाद करता है । अपनी मानुभाषा के माध्यम से वह कहीं ^{कम} मगम में यारी ज्ञान अजिल कर महाला है। उन्होंने स्वमं अवनी मिसाल पेश की, "अब में जानता हूं कि मुक्ते अंकमणित, ज्यामिति, बीजगणित, रसायन भीर ज्योतिय में जितना भीगने में चार वर्ष समे, उतना मैंने आसानी से एक वर्ष में सीम लिया होता, अगर मैंने उन्हें अंग्रेजी के माध्यम से नहीं विला गुजराती के माध्यम से मीगा होता । विषय को मैं ज्यादा सुगमता और स्पष्टता से समभता। पेरा गुजराती का शब्द-ज्ञान और समृद्ध हुआ होता।"" "अगर इसकी जगह मैंने उन बहुमूल्य सात वर्षों को गुजराती भाषा पर अधिकार प्राप्त करने में लगाया होता और गुजराती के माध्यम से गणित, विज्ञान, संस्कृत और अन्य विषय सीमे होते तो इस तरह प्राप्त शान में में अपने पट़ोसियों को आसानी से साफीदार बना सकता। मैंने गुजराती की श्रीवृद्धि की होती। कीन कह सकता है कि अध्यवसाय की अपनी आदत तथा देश और मानृभाषा के प्रति अपने अपरिमित प्रेम के यूर्त मैंने जनता की सेवा में और अधिक समृद्धिशाली व गुरुतर योगदान न किया होता।"

महात्मा गांधी ने लक्षित किया कि अंग्रेजी के प्रति आत्यांतिक लगाव का फल यह हुआ कि भारत की 'प्रांतीय भाषाएं' उपेक्षित और 'दिरद्वता का शिकार' हुई हैं जिससे एक सांस्कृतिक संकट और रिक्तता पैदा हो गयी है। किन्तु अंग्रेजी के विरोध ने उन्हें उसकी समृद्धता, महानता और उपयोगिता के प्रति अंधा नहीं बना दिया। उन्होंने लिखा, "...मैं अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी का प्रेमी हूं। किन्तु मेरा प्रेम विवेकपूर्ण और बुद्धिमत्तापूर्ण है। इसलिए मैं दोनों को वह स्थान देता हूं जिसके वे पात्र हैं।" उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय संव्यवहार के लिए अंग्रेजी भाषा के परम महत्व को स्वीकार किया। "उन विशिष्ट भारतीयों के लिए मैं दितीय भाषा के रूप में इसका ज्ञान अपरिहार्य-मानता हूं जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में देश के हितों का प्रतिनिधित्व करना है। मैं अंग्रेजी

^{&#}x27; वही, पृ. २३:

मो. क. गांधी, मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शन, अहमदाबाद, १६५८, पू. ८.

¹ वही, पृ.ं७.ं

^{*} थॉट्स..., पृ. ६७.

५ वही, पृ. ६६.

्भाषा को पारवात्य विजन और विज्ञानों की दुनिया में भाकते की खुली खिड़की मानता हूं। इसके लिए भी मैं एक वर्ग अलग कर देना चाहुंगा। उनके माध्यम से मारतीय भाषाओं के जरिये मैं उस ज्ञान का प्रसार करना चाहूंगा जिसे उर्होंने पश्चिम से प्राप्त किया है। किन्तु मैं भारत के बच्चों पर बीम नहीं भारता चाहुंगा और एक विदेशी भाषा के जरिये चनके मस्तिष्कों के प्रसार की बाह्य कर उनकी युवावस्था की शक्ति को नहीं सुखाना चाहूंगा।"

इस प्रकार महात्मा गांधी ने यह दिखाया कि अंग्रेजी द्वारा भारतीय भाषाओं के न्यायोजित स्थान के हड़प लिये जाने का कोई औजित्य नहीं हो सकता। अंग्रेजी को अपना उचित स्थान बनाये रखना चाहिए और भारतीय मापाओं को उनका अपना स्थान मिलना चाहिए जो कि राष्ट्रीय पुनर्जीकन का

योतक होया ।

गांधी जी के लिए शाब्दिक प्रतिवादन पर्वाप्त नहीं था। उन्होंने भारतीय भाषाओं के माध्यम से अञ्चतन वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार के सौर-तरीके भी सुमाये । विदेशी मापाओं से भारतीय भाषाओं में अनुसद का एक सउउ और सुयोजित कार्यक्रम होना चाहिए।' सबसे बढ़ कर बात यह है कि उरपुक्त सब्दावली और पाठव पुस्तको के अमाव से खोगों की हिम्मत नहीं हारती चाहिए। एक बार ने परी तत्परता के साम भारतीय भाषाओं में अध्ययन गुक् कर दें तो ये समस्यायें श्द-ब-जुद हल हो बायेंगी।

इस प्रकार 'महात्मा गांधी ने यह अकार्य रूप में दिला दिया कि राष्ट्र-भाषा के रूप में एक विदेशी भाषा को बताये रखना देश के मर्वो व हितों मे नहीं है और भारतीय मालाओं की अब कातित अवन्या मे उत्पन्न समस्तामी

को हल कर सकता असंभव नहीं है।

वह यह अच्छी तरह अनुभव करते वे कि भारत में एक देशी राष्ट्रमाचा ्र पर्व अन्धा तस्त अनुभव करा काल मार्च मार्च पर्व प्राप्त की तामने अनेक कडिनाइयों है। बारत एक बहुनायी देन है विडामें से अनेक भाषाएं महान अनीत का दावा कर सकती हैं और सानदार माहित्यक विद्यालय का दम भर सकती हैं। जनमें से किसी एक की प्राथमिकता का न्यान देने के रूसरी भाषाओं में ईर्या और जावज बन प्रकर्तिया वैदा होंदी । बहारना साथी के दिलाया कि ये आरोहाएँ विशाबार थीं । बारतीर बावाओं को एन-पूमरे के ा प्रश्ताया रह य आयाम्य प्राप्त करें से हेरी भाषा के बाँड हर दों के प्रति बीवय करते की अस्टत नहीं, बहिह उन्हें से हेरी भाषा के बाँड हर दों के प्रति बीवय रहता बाहिए ।' उनहीं मुक्त सहाई विदेशी मेंहेरी के लिहाक है, ये कि प्रश

[े] वही, पृ. १६-१७ भोडियम, पु. €.

^{&#}x27; पॉर्स... र १४६.४३

देशी और रचानीय भाषा के लिलाफ जी प्राथमिकता पाने के बाद मणिनी भाषाओं की उत्केदक नहीं, 'पूरक' होगी ।' ये इनके बाद और अधिक प्रगति समा श्रीमृद्धि के लिए मुक्त हो जायेंगी।

महारमा गांधी ने यह प्रतिपादित न स्के प्रांतीय भाषाओं की अन्य गलत-फरिमिमों को भी उपधामित कर दिया कि अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त राष्ट्र-नाषा सीमने की उनको अध्यक्ष है जिनका पेशा अंतप्रांतीय किस्म का हो। दूसरों के लिए यह चैनलिक ही होगा। कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि उस पर दूसरों की अपेक्षा 'अतिरिक्त बोक्त' डाला जा रहा है। संक्षेप में, महारमा गांधी ने यह साफ-साफ स्थापित कर दिया कि भारत की एक देशी राष्ट्रभाषा अवस्य होनी चाहिए। उनकी महानता इस तथ्य में निहित बी कि 'जहां उन्नीसवी धाताब्दी में दूसरे इस विचार पर कहावीह में पड़े थे, लिखा बा और यक्तस्य दिये थे, यहां स्वाधीनता के लोकप्रिय आन्दोलन से इसे महारमा गांधी ने ही जोटा।

जैसा कि पहले लक्षित विया गया है, महात्मा गांधी भारत की राष्ट्रभाषा के बारे में अपने निष्कषं पर मौजूदा सदी के पहले दशक में पहुंच गये ये जिस समय उन्होंने हिन्द स्वराज लिखा और हिन्दी को इस सम्मान के पात्र के हण में सुमाया था। इससे न केवल उनकी विशाल ह्दयता प्रकट होती है क्योंकि वह एक अहिन्दीभाषी क्षेत्र से आये थे, यिक उनकी महान राजनीतिक यथार्थ-वादिता भी जाहिर होती है। यह यह समभ सके थे कि सारी भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही अपेक्षाओं को पूरा करती है और राष्ट्रभाषा बन सकने की क्षमता रखती है।

संख्या की कसीटी का प्रयोग करते हुए उन्होंने यह निर्दिष्ट किया कि भारतीय भाषाओं में हिन्दी लगभग संपूर्ण उत्तर भारत के लोगों द्वारा बोली कौर समभी जाती है और इस कारण सबसे वड़े समूह द्वारा प्रयुक्त होने का दावा कर सकती है। साथ ही भारत के अहिन्दी भाषी लोग हिन्दी को आसानी से सीख सकते हैं। इसने इसे भगिनी भाषाओं के साथ सहमेल की एक और सुविधा प्रदान की। किन्तु महात्मा गांधी ने हिन्दी को अपनी ही परिभाषा दी। "मैं उस भाषा को हिन्दी पुकारता हूं जिसे उत्तर के हिन्दू और मुसलमान बोलते हैं और जो या तो देवनागरी या उर्दू लिपि में लिखी जाती है।" उन्होने हिन्दी और उर्दू को दो भाषाएं मानने से इनकार कर दिया। अंतर

^१ वही, पृ. ५२.

वही, पृ. ४, ६, ४३.

[ੇ] ਕहੀ, पृ. ५.

केवत लिपि का है। अरबी निर्मिण में तिल्ली जाने पर वह उर्दू पुकारी जाती है और देवनागरी में तिल्ली जाने पर वह हिन्दी कही जाती है। महारमा गामी ने २० अक्तूबर १६१७ को महत्व में हुए दिलीय मुजरात पीक्षक सम्मेलन में अपने अम्पक्षीय मापण में यही परिभाषा पेश नी थी।

अगर हम प्रयम विश्वयुद्ध के दौरान भारत की समसामविक राजनीतिक स्विति को ध्यान में रखें तो हम महात्मा गांधी के कथनों को ज्यादा अच्छी तरह समक्र सकते हैं। लखनक अधिवैदान में पहली बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के प्रतिनिधि एक साथ बैठे थे। बंग्रेजों के खिलाफ संयुक्त मोर्चे की संभावनाएं ज्यादा उज्ज्वल दिलायी पड़ रही थी। इसितए महारमा गांधी दोनों सम्प्रदायों के बीच एक स्थायी सेतु के निर्माण के लिए उत्सुक ये और इसी कारण उर्द की, जिसे मुसलमान अपनी माया होने भा दावा करते थे, हिन्दी की परिधि में शामित कर लिया जो राष्ट्रभाषा के रूप में भागे बढ़ने के लिए यरनशील थी। राष्ट्रभाषा के माध्यम मे वह राष्ट्रीय जीवन की मुस्त्रधारा से मुसलमानों की प्रयक्ततावादी प्रवृत्तियों को अवस्ट करना भाहते थे। इसके बाद से राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर उनका रत हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रति जनकी गहरी चिन्ता से प्रभावित रहा; जैसे, १६१= मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने हिन्दी की वह भाषां बताया "जिसे उत्तर में हिन्दू और मुसलमान दोनों बोलते हैं तथा। जो या तो नागरी या फारसी लिंगि में तिसी जानी है। हिन्दी न तो अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ है और न अत्यधिक फारसीनिष्ठ ।"

प्रयम विश्व युद्ध समाज हो जाने के बार पुरासमानों ने अपेजों के तिलाक कि साम में तिमाइन सालित पह कर दिया । महास्था गांधी रहा आया में तिमाइन सालित कर प्रवेह समर्थ को पीन हिए कर उद्द हा दिया साम के विभाव सालित के प्रवेह मार्थ के विभाव सालित के प्रवेह मार्थ के विभाव सालित प्रवेह मार्थ के सालित सालित प्रवेही सालित के सालित पर पुरासमानों को साल सालित रिवार के स्वित के स्वाम पर पुरासमानों को सालित सालित के स्वाम पर पुरासमानों को सालित सालित के स्वाम पर पुरासमानों को सालित सालित के सालित के सालित कर प्रवेह सालित के सालित कर के सालित कर सालित के सालित के सालित कर सालित के सालित के सालित कर सालित के सालित के सालित कर सालित कर सालित कर सालित के सालित के सालित कर सालित के सालित के

[े] बहा

^{&#}x27; बहो. पू. १०

^{*} वहाँ,

ं दोनों लिपिया सीसने की जरूरत नहीं । "अधिकारियों को दोनों ही सिपियां - जाननी चाहिए ।"" यहीं हिन्दुस्तानी संबंधी उनकी भावी योजना के बीज़ - पद्रे थे ।

भाषा समस्या के प्रति महातमा गांधी के नये हिन्दकोण में एक स्पष्ट सामी थी। हिन्दू-मुस्लिम एकता का मसला यहूत व्यापक मसला था और भाषा का मसला अधिक से अधिक उसका एक हिस्सा था। साथ ही, उस समय तक हिन्दू-मुस्लिम एकता की समस्या एक पेचीदा राजनीतिक प्रश्न बन जुकी थी और राष्ट्रभाषा के मसले ने भी, उससे नत्यी कर दिये जाने पर, राजनीतिक रूप ने लिया जिससे ठंडे दिमाग से, निम्द्रेग भाव से और विवेकपूर्ण तरीके से सीच गकना मुश्कित हो गया।

यहां से महात्मा गांधी ने अपनी स्थिति बदल दी, हालांकि वह इस बात से इनकार करते रहे कि वह अपनी पहले की स्थिति से कभी हटे हैं।

अभी तक वह हिन्दी को राष्ट्रभाषा वताक र संतुष्ट हो लेते थे, हालांकि उसमें उर्दू भी धामिल थी। अब उन्होंने यह गुहार की कि हिन्दी नहीं बिल्क हिन्दुस्तानी देश की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। हिन्दुस्तानी को सरल हिन्दी और उर्दू का मिश्रण बताया गया जो न तो अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ हो और न फारसीनिष्ठ। उन्होंने यह स्वीकार किया कि हिन्दुस्तानी का जैसा वह वर्णन करते हैं उस रूप में देश में उसका अस्तित्व नहीं है और वह अभी 'ढल रही है',' और उसकी सावधानी से देखभाल की जरूरत है। लिपि के प्रश्न पर उन्होंने अपने दो-लिपि सूत्र (फार्मूला)—देवनागरी और फारसी—को दुहरा दिया।' इस प्रकार वह भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के समर्थंक से हिन्दुस्तानी के प्रचारक बन गये।

उनके प्रभाव में उन दिनों के देश के सर्वप्रमुख राजनीतिक संगठन, भारतीय राज्ट्रीय कांग्रेस ने १६२५ में अपने कानपुर अधिवेशन में हिन्दुस्तानी को भारत की राज्ट्रभाषा स्वीकार कर लिया। उसी अधिवेशन में उनकी प्रेरणा से कांग्रेस ने अपना कार्य हिन्दुस्तानी में करने का भी संकल्प ले लिया। एक बार निश्चय कर लेने के बाद वह भारत की राज्ट्रभाषा के रूप में हिन्दुस्तानी के

^{&#}x27; वही.

^{&#}x27; वही, पृ. १६४.

^{&#}x27; वही, पृ. ५२, ६५.

^{*} वही, पृ. ११४.

५ वही, पृ. ६१, १०५.

^{&#}x27; वही, पृ. २१-२२.

प्रवार के ज़िए धन-मन से जुद एवं । बहुएहाल, उन्होंने हिन्हों के स्पेय को क्षेत्रे बहुने के लिए कार्यत सर्वप्रमुख संस्था हिन्दी साहित्य सम्मेनन से संबंध-विचेदित हों किया । उन्होंने दूसरे सभी लोगों को अपने विचार में वालने की कीट्य की 1. कुछ हुद तक बहु कफल हुए क्योंकि वह एक बार फिर १२३४ में हिन्दे साहित्य सम्मेसन के इन्देश अधिवेदान के आध्या चुने गये। उनके मार्ग-निवंधन में साम्मेसन ने एक प्रस्ताव द्वारा धारसी निर्धि में विश्वत उर्दू शे हिन्दी का एक अंग स्वीकार करा, हालांकि साहित्य सम्मेसन ने देवनायारी को ही अपनी अधिकृत लिथ बनामे रखा । देस क्यार दिन्दी के समर्थक राष्ट्र के इस्तर हितों में महास्मा जो के विचारों के लिए गुंबाइस निकास तने ने वे

१६३७ में जब कांग्रेस भारत के कई मानों में सत्ता में मांगी, उत्तने विधा गंदावों और सरकारी स्वयतों में हिन्दुस्तानी सामु करने की गीति को क्रिया-नित्त करने की ओद्या की। ' इस प्रयोग के उन नदीजों को नहीं निवासा ना सका जिनको आसा महास्मा वांधी ने कर रसी थी।

वक हात का जनह जन कराय आमानी में हदियार दान देने वा नहीं बा

वही, पृ. ३२. वही, पृ. ४२.

will a \$40.65

a61. S. e. . . .

२ मई १६४२ को उन्होंने हिन्दुस्तानी प्रवार मभा का संगठन किया जिसके दो सबसे मित्रम कार्मकर्ता हुए श्रीमन्त्रारायण और काका साहंच कालेलकर । किन्तु उसके पहले कि नय-स्मालित संस्था अपनी छाप छोड़ सके, १६४२ का भारत छोड़ो आन्दोलन छिड़ गया स्था भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेम के अन्य नेताओं समेत महात्मा गांगी जेल में डाल दिये गये। जो लोग मुक्त रहें उन्होंने हिन्दुस्तानी के प्रचार का कार्य जारी रूपा किन्तु उनकी कोशियों फलीभूत नहीं हो सकीं। जेल से छुटने के बाद महात्मा गांगी ने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा को पुनः कियाभील बनाया। अपनी तत्परता जनाने के लिए उन्होंने १६४५ में हिन्दी माहित्य सम्मेलन से इस्तीका दे दिया और इस प्रकार लगभग तीन दशकों का सम्बंध समाप्त कर दिया।

ितन्तु महात्मा गांधी ऐसी लड़।ई लड़ रहें भे जिसमें वह दांव हार नुके थे। पाचवें दशक के आरम्भ से मुस्लिम पृथकतावाद और भी प्रवल हो गया या। शीझ ही देश के विभाजन के जरिये उसका पाकिस्तान का स्वप्न एक स्वापित तथ्य बनने जा रहा था। हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम करने का महात्मा गांधी का मिशन असफल हो चुका था। इससे भारत की राष्ट्रभापा बनने का हिन्दु स्तानी का दावा निराधार हो गया। जब भारत आजाद हुआ, तो देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी उत्तर प्रदेश की राजभापा स्वीकार कर ली गया। इस फैसले से गांधी जी को असीम वेदना हुई। इसमें उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता के अपने प्रिय आदर्श पर प्रहार होते देखा। भविष्य का संकेत स्पष्ट या। संविधान सभा ने भारत की राजभापा के रूप में हिन्दी के पक्ष में मत दिया, हालांकि इसके कियान्त्रयन को उसने भविष्य के लिए स्यिगत कर दिया। बहरहाल, हिन्दुस्तानी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का गांधी जी का प्रयास विफल हो गया।

यहां महात्मा गांवी की भाषा नीति की असफलता के कारणों पर विचार करना प्रासंगिक होगा। यह इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने उन कठिनाइयों को घ्यान में नहीं रखा था, या घटा कर आंका, जिनसे उनका मुकावला पड़ने को था। उनके देशवासियों के एक तबके की अंग्रेजी के प्रति मोहासिक्त थी और उदीयमान राष्ट्रभाषा को अच्छी तरह जड़ जमाये हुए इस न्यस्त स्वार्थ से होड़ लेनी थी। प्रांतीय भाषाओं के समर्थकों का

^{&#}x27; वही, पृ. ११२.

वही, पृ. ११६-१६.

^{&#}x27; वही, पृ. १३६.

^{*} वही, प. १७१-७२.

... । यार भय एह और मन्भीर विश्व था। जिल्ल अमाने में उन्होंने जीवन विज्ञाया वह तथा उनकी योजना की कुछ सामियां उनकी असफनता के लिए विम्मेदार थीं।

विस समय महारमा मांधी ने अवनी नीति प्रतिचादित की, उस समय स्माजिक-आदिक एकियों चरीत परिषक नहीं थीं। देश में बढ़े पैमाने पर वैद्योगीकरण के अनाव में औरत नागरिक के लिए इस बात की कोई दास बादसकता नहीं थी कि वह नीकरी की ततादा में अबना पर खों। तिस्ताता के केने प्रति मन के कारण राष्ट्रमाया की जावस्वकता और भी पट गयी। स्मित्य देश महारमा गांधी के आहुमां की मुन ती सहता था, किन्तु समाज एह राष्ट्रमाया स्वीकार कर सकने में असमर्थ था।

कि पुराशों के लिए मेहासा गांधी के जायह से मामना और भी जनके गया। हिन्दुस्तानी देखिल बातों के निष् दिनातीय सी कौर जलर वाले जसते व्याप्त हिन्दुस्तानी देखिल बातों के निष् दिनातीय सी कौर जलर वाले जसते व्याप्त हिन्दुस्तानी देखिल बातों के निष्ट किनातीय सी कौर कर वह सुवा वेशाहन कम गरिपेंच हो ने तो वे लोग सम्यन्द करते थे जिन्दु बहु सुवा करता हिन्दुस्तानों के आवरण के गींधे महाराम गांधी उर्दू को 'संराल देने' की कीशित कर रहे हैं जिसते स्वार्य कंपये के लिए मुस्तानानों के आवरण पि सहसे निष्टुस्तानों के आवरण के गींधे महाराम गांधी उर्दू को 'संराल देने' की कीशित कर रहे हैं जिसते स्वार्य कंपये के लिए मुस्तानानों के वास्त्र पा सक्ते, तथा जब यह अनुमन कर लिया गया कि रन रिवारातों के जिस्से पासमीन में पुरालकातानों मांगों को रोका नही जा सकता, तब व्याप्तिसंक्त मारायीयों में जलता होने वाली प्रतिक्रिता के साथ यह नीति पराशायी हो गया। महाराम गांधी ने यह कह कर ऐसे दिरोय को रफा-रफा कर देने की लीशित की लिए सिंगों को पिताना तिरों को थोड़ान है ने बेड़ार उत्तराम कहती नहीं हैं", किन्दु वह इस वात को समक सकते में अवस्त्र प्रतिक्र प्रतासन के सिए स्कूत को इस्त्रामों की श्रीसा कि लिए साराम के सिंग्र स्वाराम के स्वरास करना के स्वरास नाती है।

बहरहाल, असफ बता से महात्मा साधी के महात अवदान को दिशाया नहीं जा सकता। उन्होंने ऐसी महत्वपूर्ण समस्या पर पहनी बार राष्ट्र मर का ब्यान आकर्षित किया और ऐसी बहुत गुरू कर दी दी बाद भी जारी है।

गांधी जी, जैंसा कि मैंने उन्हें जाना

भदंत भागभ्द कीसल्यायन

इस राष्ट्र के जैसे दो राष्ट्र भीत है, दैसे ही दो स्वतंत्रता दिवस भी। २६ जन-वरी और १४ अगस्त । एक स्वतंत्रता प्राप्ति का निद्श्य करने का दिन, दूसरा साक्षात स्वतंत्रता प्राप्ति का । यदि हमने २६ जनवरी को पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति होने तक अनवस्त संघर्ष गरते रहने का अविष्ठान न किया होता, तो १४ अगस्त के दिन हमें स्वतंत्रता की कभी प्राप्ति न हुई होती। इसीलिए २६ जनवरी के दिन का महत्व १४ अगस्त से किसी भी तरह कम नहीं।

२६ जनवरी १६४८ को हमने अपने स्वतंत्रता दिवस की, अपने सर्वप्रभूल-संपन्न लोकतंत्र राज्य के स्थापना-दिवस की वर्षगांठ मनायी ही थी कि कुल चार दिन बाद हमें अपने बापू की श्राइ-श्रिया में सम्मिलित होना पड़ा—उस बापू की जिसने हमें स्वतंत्रता की श्राप्य दिलायी, उस पिता की जिसने हमें स्वतंत्रता प्राप्ति की राह दिखायी।

भाज हम भी हैं, हमारी स्वतंत्रता भी है, किन्तु हमारे वापू नहीं हैं।

३० जनवरी की मनहूस संध्या को मैं बनारस स्टेशन पर उतरा ही या कि बापू के निधन का समाचार सुना। वह समाचार या कि जंगल की आग यी—दहकती, लहकती, चारों ओर बढ़ी चली जा रही थी।

शायद ही कभी किसी राष्ट्र का वापू इस तरह परलोक सिघारा हो— अपने ही देश में, अपने ही धमंं के एक हत्यारे की गोली का निशाना बना हो। और कहा जाता है कि वह पाखंडी वापू के खुले सीने को गोली का निशाना बनाने से पहले उनको प्रणाम करना नहीं भूला।

सामान्य लोगों का निधन होता है तो उनके संबंधी ही रोते हैं, किन्तु बापू का निधन हुआ तो स्वयं उनके पुत्र देवदास गांधी से भी ज्यादा न सिर्फ उनके अन्य संबंधी, उनके मित्र, उनके उपासक रोये, बल्कि ऐसे लोग भी फूट-फूट कर रोये जो इस गलत विचार के शिकार थे कि गांधी जी उनके शत्रु थे। लाखों ऐसे लोग रोये जिन्होंने बापू को कभी देखा तक नहीं था।

ये लोग क्यों रोये ? इतना अधिक क्यों रोये ? एक ही उत्तर है-क्योंकि

è

4

. ६ दिसम्बर '४५ की साम मैं बापू की ध्यस्तता का रूपाल कर सेवायाम, वर्षों, में उनकी कुटिया के भीतर पैर रखने में हिचकिचा रहा था। आवाज कुनायी दी: 'आइये, आइये।''

मैं भीतर चला गया।

"अब आप यहां रहने के लिए आवे हैं, एक महोना, दो महोने, तीन महोने, पार महोने, जितना रह सकें, रहें।" दो-बार और बातें हो चुकी को बोले, "बच्छा तो भोजन की घंटी अब चुकी हैं, पहले जाकर भोजन कर लोजिए।"

"मोजन तो में नहीं करुंगा बापू, थोड़ा दूध पी लूंगा।"

श्रीमन्त्रायण जी (गुजरात के वर्तमान राज्यपाल) को इशारा ही गया श्रीर मुक्ते उनके साथ भीजन के कमरे में जाना पड़ा।

वेशमाम में भोजन के समय भोजन न करने पर उसी तरह दूसरे समय या दूसरे दिन तक हतजार करना पड़ता था जेसे एक रेजमाड़ी के छूट जाने पर फिर दूसरी गाड़ी ना हुंजजार। समय की पाजनी की हॉस्ट से देखा जाय तो यह उत्तम व्यवस्था थी, पर समय की पाजनी ही तो बच्छी नहीं होती

मैं महापंडित राहुन साकृत्यायन का घनिष्ठ मित्र रहा हूं, और उनके साथी मुक्ते विश्वसतीय मानते हैं। मैं कई बार वस्वई के कस्युनिस्ट पार्टी के प्रवान नार्यालय में अतिथि के रूप में टिका था। वहां भी खाना निश्वित समय पर खिलाया जाता था, पर अगर किसी कारण कोई मेहमान या खुद उनका कोई साथी निश्चित समय पर लाना नहीं लाता तो उसका खाना परोस कर रस दिया जाता था और अपनी सुविधा के अनुसार मीजन करने के लिए उसकी प्लेट रखी रहती थी। जान तौर से अतिबि को माना साने के लिए अकेले नहीं छोड़ दिया जाता था । कोई न कोई उसकी मेजवानी के लिए और उसे जिन्दादिली से भरी बातों में लगाये रहने के तिए जरूर साथ होता । इस तरह आतिथ्य को गरमाहट किसी न किसी तरह बनाये रुखी जाती, अन्यया क्षाने में स्थाद नहीं आ सकता या—लास तौर से आहे के दिनों में । मैं अपना लान म स्वाद गहाजा उपन्यास स्वाता याऔर मुक्केनहीं साद कि मैंने सब लाना ज्ञान निरंपत कर नाया हो। फिर भी, जब में साने बैटना तो एक साथी पाल्या के ताथ बठकर का किया किया की हो हो स्था अपने इस हालत पर्कर मर साथ हाता । असे साना हो तो साऊं, न साना हो तो न साऊं। में नहीं छोड़ा गया कि मुक्ते साना हो तो साऊं। म नहा छाड़ा थया राज अपने साम देने थे। संमय है कि उन्हें एक यह भी काम अवतर महत्त्र आवान नाम । सींपानमा हो कि किसी अतिमि की उरेसान होने पाये। संमद है कि सह

मेरी अमलोरी हो, पर सानियों का यह हात्कि व्यवतार मुक्ते सेवाबाम की भाय-स्टार्य समय भी पायन्त्री से ज्यादा सना ।

नेवासाम पहुंचने के दूसरे दिन का एक असुभव मुफे माद आ रहा है। में योपहर का भोजन समाप्त कर भुका था और थोड़ा विश्वाम करना चाहता मा । जिन्हें विना मिर्न-ममाने का भीवन नहीं कृत्या उन्हें भने ही मिकायत हो, किन्तु पौष्टिक होने के नाने मुक्ते भेयाग्राम का भोजन हर तरह से पसंद था। भीजन ही नुका नी एक आश्रमयामी ने कहा, "यहां का नियम है कि पाहे गोर्ड अनिषि हो हो, भोजन के नाद उसे काम करना पहला है।"

"मुक्ते काम करने में इनकार नहीं, किन्तु मेरा अपना नियम है—भोजन के बाद थोड़ा आराम करने का ।"

में जाकर लेट गया, आधे पटे या पटे भर के बाद मैंने उठ कर पूछा: "बताइमे, गया काम है ? में तैयार हूं ।"

"अब तो काम करने का घंटा समाप्त हो गया ।" उत्तर मिला ।

दूसरे दिन मेंने ही अपने टाइमटेबल में कुछ परिवर्तन कर लिया —भोजन, काम और तब विश्राम । इस थोड़े से परिवर्तन से मुफ्ते कोई असुविधा नहीं हुई, न्योंकि काम के लिए निर्वास्ति समय बहुत थोड़ा होता था।

दूसरे दिन दोपहर के भोजन के बाद जब में काम के लिए तैयार हुआ तो मुभी 'काम' दिया गया आचे घंटे के लिए किसी दाल को साफ करने का। यह मेरे लिए एक नया पाठ था और में समकता हूं, परिणाम कर्तई संतोपजनक नहीं रहा होगा। थोड़ी दाल साफ हो पायी थी कि काम की घंटी समाप्त हो गयी। मैंने उस भाई से कहा, "आज सुबह और दोपहर आपने मुभे जैसा भोजन खिलाया है, यदि मुभे इसका विश्वास दिला दें कि आप इमेशा ऐसा ही खाना खिलाते रहेंगे और जैसा 'काम' आपने मुक्तसे आज लिया है, बदले में केवल उतना ही 'काम' लेते रहेंगे, तो में हमेशा यहीं रहने का निश्चय करने के लिए तैयार हूं।"

हो सकता है कि मेरी मान्यता गलत हो, किन्तु मैंने उस दिन सोचा, और आज भी सोचता हूं, कि मेरे 'काम' का कम से कम उतना मूल्य तो होना चाहिए था कि मुक्ते वैसा भोजन खिलाने का कुछ ओचित्य सिद्ध किया जा सकता। मुभी ऐसा लगा कि गांधी जी का आश्रम उतना ही अच्छा या बुरा है, जितना किसी साधुका आश्रम। निश्चित समय पर भोजन कर लेने की पावन्दी आदि आश्रम के सदस्यों या अधिक से अधिक आश्रम के अतिथियों के लिए थी। आश्रम में काम करने वाले मजदूरों के लिए ये मुविधाएं सुलम नहीं थीं । आश्रम में रहने वाले साधु प्रायः उदार दाताओं के दान पर अपना निर्वाह करते हैं, और गांधी जी के आध्यम में स्थिति भिन्म नहीं थी। सेवाग्राम को भी कृष जाने-माने धनकृबेरों से सहायता मिलती थी।

हां, तो उस दिन जब मैं दूध पीकर लौटा तो बापू को बुरी तरह ध्यस्त पाया । एक के बाद एक समस्या निवटायी जा रही थी । बात कहने का आग्रह करने में अपनाही मन संकीच मानताया! तब तक डा मुझीला नायर ने सलाह दी-- "बापू ! अब जैसे भी बने, मौन धारण कर लें।"

"नहीं, यह तो नहीं हो सकता।"

"बापू ! स्ट्रेन बढ़ जायगा ।"

"जिनको समय दिया जा चुका है, उनके साथ बात करना तो धर्म है। वबन भंग कैसे किया जा सकता है ?"

देगा आती थी... अभी तो रात दस बजे बाद तक समय बंघा हुआ था। तब तक वह लोगों से मिलने और हरेक से दो-चार बार्ते करने पर मजबूर थे।

सैर को निकले तो थीमन्नारायण जी ने ही जैसे तैसे "राष्ट्रमापा" के बारे में मेरी बात संक्षेप में वह दी अथवा उसकी भूमिका बाघ दी। तब बापू ने मुक्तते दो-एक याक्य कहे और अंत में बोले, "अब आपका आध्यम से जाना नहीं होगा । यहां रहना, नहीं तो मैं बम्बई से लौट कर लड़ूंगा।"

कहने को तो जी चाहा कहूं कि यदि यही बना रहा, तब तो आपके लिए लड़ने का कोई कारण नहीं रहेगा और यदि चला गया तो आप लीट कर आखिर लड़ेंगे किससे ? लेकिन बैसा कुछ न कह कर निवेदन किया, "बापू. आप तो ऐसे मेजबान हैं कि अतिथि को घर पर छोड़ कर स्वयं चले जा 信言!"

बाप जोर से खिलखिला कर हसे और बोले, "हां, मुक्ते ऐसा हो अतिथि नाहिए जो मेरी गैर हाजिरी में घर को घर ही समसे।"

तव तक बाद को फिर मौन को बाद करायो गयी। मैंने भी वहा, "हां,

विव आप भीन से ही लें।"

उसके बाद किसी और ने कुछ कहना चाहा। भट मुंह पर अंगुली चली ायी। मेरे मुंह से निकला, "बापू, मौन तो बाणी का हो है न ! चलते-चलने एक सुनते रहने में तो हुन नहीं ?" तुरंत दोनो हायों की दत्तों अंगुनियां दोनों ुध भुनत रहन न ता है। जिने वर पहुंच गयी। मैं समभता हूं कि यदि किसी कैमरान्मन ने उसी समय ार्पा पर क्षेत्र पर विषा होता तो उसका वह कित आज किसी भी की सत ापू पर कार । इ. बिक सकताथा। सबमुच वह अद्भुत मुदायो। मेरेमन में तो वह चित्र दि । बक्त सकता । सेट यही है कि वित्र के रूप में उसे पाउकों के सन्मत

नहां कर जन्म हुसरे दिन प्रातः वर्षाहो रही थी। बापू बरामदे में दो वश्वियों के कंपों

पुत्र लाग पार करता रहे थे। में जुनर में एतरा तो जनती नजर पड़ी। हेमी-साम पह है, नगरनार के लिए । मेने लिन प्रमापन समस अभिनासन स्थीतार किया। बीच, व्याप भी इस महत्यों में था महते हैं, विस्तु पर्यो बही ग्लेगी

वृत गमम विभी की हुई यात महाभाषी जा ग्री भी। में भी उपर जा सद्य हुआ। भेर सद होने भी जमत मुख मीनी थी। यारू में न रहा गया। चीरि, "जगह गीमी है, भेग शहरों पन क्ला है कि आप बहां पड़े नहीं, ती बत की है।

अय यापू हो यार न्यम अपनी चानवीत में निराम निह्न नगा के थे। मुक्त समा कि एक विशम निह्न है तमा दूनों जावद अनुपंपुक्त न होगा। इसर मूरी में आते ।" बीला, "बापू ! में जो केयल एक मिनट में एक ही बात पृक्षी के लिए सड़ा है

गया था।"

"वापू, में पह जानना नाहना हूं हि आपका यम्बई जाने का दिन तो "हा, यह तो में ममक ही गया।"

्रिता, बम्बई में एक नारियल मिलता है, जिसमें पानी नहीं होता। यह निश्चित है, लोटने का दिन भी निश्चित है गया ?" जिल्ला साह्य ने मुभे येसा ही नारियल दिया, तब तो में रवियार को ही तौर आसंता जीन गरियल दिया, तब तो में रवियार को ही तौर आकंगा और यदि उसके साथ गुड़ भी दिया और यह भी कहा कि अब कुछ

मसाला भी देंगे, तो जिल्ला साहब मुक्ते गुछ दिन ठहरा भी सकते हैं।" म समक्त गया कि वापू हर संभावना के लिए तैयार थे। महापंडित राहुल सांग्रत्यायन ने इस बात पर आपत्ति की थी कि में गांधी जी को 'बापू' (विता) कहता हूं। मुभे उनको इस तरह संबोधित करने में कोई हानि नहीं दिखायी दी. हालांकि संने हम कर के दी, हालांकि मेंने इस रूप में उन्हें कभी स्वीकार नहीं किया। अर संबोधन कर नहीं किया। का दूसरा कोई तरीका संभव भी कैसे था, वयों कि गांची जी अपनी निहीं पत्री तक में अपने वस्ताध्य की पत्री तक में अपने हस्ताक्षर की जगह 'वापू' लिखते थे। जहां तक मंत्री की की वात है, 'वाप' घटट जानियान ने की बात है, 'बापू' शब्द जातियाचक संज्ञा नहीं रह गया था, व्यक्तिवाचक संज्ञा

वापू के कार्यक्रम की जानकारी मिली और मुक्ते लगा कि वस्वई में उनकी को कार्यक्रम की जानकारी मिली और मुक्ते लगा कि वस्वई में उनकी को कार्यों संभावना है तो कि विलंब होने की काफी संभावना है तो मैंने निवेदन किया, "बापू ! अपने मेरे निवेदन किया, "बापू ! अपने मेरे निवेदन किया, "बापू ! कोजना है। वन गया था ! रापाता । जाप वह ता वे अपना कुछ काम कर आऊं।" भाष प्राप्त मेरे साथ जाने में एक लाभ है। तीसरे दर्जे का टिकट लेते पर

भुच्छ। जगर की क्या बात । गांधी जो और उनके साथ वालों के ^{तिए} अच्छी जगह की क्या बात । भी अन्छी जगह मिल जाती है।"

नीय नायपुर में ही एक स्पेसन किया रिजर्व करा देते थे। कोई उसमें पुसने भी हिम्मत नहीं कर साता था। वर्षों में उस दिस्ते में हुम जैसे समेद ताबिये भीर दिस्तर नमा दिये पर्व। उस किये को "तीमार दर्जा" निर्फ उसमें बनावट के आभार पर कहा जा नहता था, अन्या बात पुरते द से तो भी बढ़ कर था। यह अपने आा में एक दर्जा था। यह "साथी दर्जा" था। हुस दिन, मैंने मी "साथी दर्जा" की मुख्यिओं का साम उठाया और उसी किये में बापू के साथ याना की

देश की राष्ट्रभाषा को लेकर हिन्दी-हिन्दुलानी का जो विवाद चल पहा पा, उन निवासित में मुख्ये बनेक बार बारू के निकट सम्पर्क में आने का अवसार निवार, वर्ष वर्षों तक मैं उम "राष्ट्रभाषा अवार सामिति" का मंत्रे रहा निवाके बागू मंत्रपार से और कुछ वर्षों नक सरस्य में अब्देन पुर्वश्वातवाद टंटक हारा बागू को हिन्दी साहित्य मम्मेनन का सहस्य बनाये रखने के लाख प्रयत्नों के बावहुद बागू मामेनत के सहस्य नहीं, और उन्होंने वनहीं सहस्यता की हस्तीचा है दिया। आगित यह "हिन्दी साहित्य सम्मेनन" के सहस्य करी कोर कोर देशे रहने, जब बागू का आयह मान कर टंटनजी मी बागू हारा स्थापित उनकी नवी "हिन्दुलानी प्रवाद समा" के सहस्य वनने के लिए तैयार न ये। अब न बाड है, न टहन जी। कोरों की व्यवस्त्रति ही वेष रह नथी की

एर दिन नी बात है, मुबह बापू ने मुक्तमें कहा, "हवामी जी, जाएकी देहाना सहित ने आज धाम पहा आधम से एक प्रवचन करने के लिए कहा है या नहीं?" पता उत्तर था: "हा, किन्तु मेंने देहाना बहिन से आधह किया है कि जब में मैं आधम में आया तब से आध्यम में बाहू मा एक भी प्रवचन नहीं हुआ। यह दिनती बड़ी बात होगी कि मुक्ते बाहू का प्रवचन नुनने को निस्त

गांधी जो जहां अन्य बातों में महान वे, वहां पाक्पहुता में भी अदितीय थे। मुक्ते ही हार माननी पड़ी और यह स्वीकार करना पड़ा कि बाम को में आश्रमनाहियों के सामने थीलंका और बोद धर्म के बारे में कुछ प्रवयन करना।

उन दिनों सेवाधाम में थीं पुलारों जो रहते थे, जो विधिव स्वानों पर होने वाले काविस अधिवेधानों के इंनीनियर कहें जा सहते थे। भैने उनसे पूषा, "आज बागू ने पुरूने वचन निता है कि मैं साम को आपनावाशियों के सामने अध्ययन कहें। उनका समय बहुदूत्व है। पूर्व पूर्व क्याना बता सीविए कि ऑपह से अधिक नितने समय तक बोजू ?" मुनाटी जी का उत्तर विधित था: "आग बाहें नितनों देर बोजते रहिंगे, बाजू सो किसी के प्रवचन में रहते नहीं। प्रवचन करने वाले को प्रवचन करने के निष् कह कर स्वयं बले साते हैं।"

्. म स्वीकार करता हूं कि मेरे अहंकार को चोट लगी ! मैंने निश्चय किया कि आज आम को में मापू को जपने प्रवत्तन में बैठा कर रहाूंगा। दोपहर भीजन के समय जब सापू के पास ही जैठा अपने तोड़े के शिक्षा पात्र में भोजन कर का भा भो निर्मा ने पूछा, "बापू ! रतामी भी भा पात लोहे का गरी है ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "इमलिए कि कोई उंदा मारे तो सिर की रक्षा भी

तार सर्वे ।"

मुभी लगा कि अदिया के इस किन्द्र में यह हिया का मुंआ कैसा ? बाद में सूनना मिली कि आश्रमवानियों की अहिमा का परीक्षण करने में इलाहाबाद का एक प्रसिद्ध विजकार कृष्य ही दिन पहले अपना सिर तुड़वा चुका था। बापू के दिमाग में यह प्रकरण नाजा भा और गदानित इमीनिए उन्हें मेरे लोहे के भिक्षान्यात्र का यह अतिरिक्त उपयोग सूका था।

जब बापू की जुहुन से जलका विनोद की मरसराहट शांत हुई तो मैंने कहा, "बापू, मेंने मुना है कि आप इतने व्यस्त है कि शाम की अवनी प्रायना-सभा में भी ज्यादा देर नहीं बैठते । और आप किसी को भी प्रवचन करने के लिए कह कर स्वयं उठ कर घले जाते हैं। में एक-दो बातें सास तीर पर आपको ही सुना कर कहना चाहता है, आप बता दीजिए कि आप आज साम मेरे प्रव-चन में बैठे रहेंगे या नहीं ? यदि न रहते हीं तो एवामरवाह शाम तक उन वातों का भार गयों वहन करूं।"

"अवश्य रहूंगा," बापू बोले, "किसी की अनुपरियति में उसकी टीका करना

उसकी निन्दा करने के समान है।"

शाम को नियमानुसार "प्रायंना" हुई। आश्रमवासियों द्वारा दिन भर में काते गये सूत के धागों की गिनती लिखी गयी। मुक्ते यह देख कर आश्चर्य हुआ कि बाजार भाव से सारे दिन का काता वह सूत शायद एक रुपये के आस-पास का ही था। कुछ न होने से एक रुपया भी क्या बुरा ! पर किसी न किसी कारण में अपने को यह विश्वास नहीं दिला सका कि एक रुपये की आमदनी के इदं-गिदं चलता चरखा कभी समाज में कोई परिवर्तन ला सकता है। सूत का लेखा-जोखा हो चुका तो मेरा प्रवचन बारम्भ हुआ।

मैंने बौद्धधर्म और श्रीलंका के बारे में जैसी मेरी भली-बुरी जानकारी थी, सब उगल दी। प्रवचन समाप्त हुआ। लोग उठ कर जाने लगे। मुक्ते ध्यान आया कि जो दो वातें खास तौर पर में वापू को सुनाना चाहता था, वे वेकही ही रह गयीं ! मैंने वापू को यह बात कह दी। उन्होंने दोबारा लोगों को बैठा ए। प्रेंसे कोई किसी पत्र पर हस्ताक्षर कर चुकने के बाद पुनश्च लिख देता है, उसी तरह मुक्ते अपने भाषण में परिशिष्ट जोड़ना पड़ा। मैंने कहा :

"बापू ! श्रीलंका में जहां आपके प्रशंसकों की कमी नहीं, वहां दो बातों को लेकर आप की टीका भी कम नहीं होती। लोग कहते हैं कि जब कांग्रेस के हाय में ताकत न थी, तब गांधी जी ने कहा था कि जिस दिन हमारे हाथ में ताकत आयेगी, हम कलम के एक भटके से बौढ़ों का बुद्धगया मंदिर उन्हें सौंप देंगे । विहार में सात महीने तक कांग्रेस की मिनिस्ट्री रही, तब भी गांधी जी हमें हमारा बद्धनया मंदिर न दिला सके ! दसरी बात लोग यह कहते हैं कि जब गांधी जी यहां आये थे तो हमने एक एक पैसा भांग कर अपनी सामध्यं के अनु-सार उन्हें काफी घन संग्रह करके दिया था, लेकिन जब ग्रहां मलेरिया का प्रकीप हुआ और हजारों परिवार काल के गाल में बले गये तो गांधी जी ने हमारी कछ। भी मदद नहीं की । हमें सिर्फ उनके सेकेटरी का पत्र मिला, जिसमें विश्वास दिलाया गया था कि 'गांबी जी अपने भरसक प्रयस्त करेंगे. वे ऐसा कछ करने के लिए अपने अन्त:करण की आवाज का इन्तजार कर रहे हैं।' लोग कहते हैं कि हम मनेशियों की तरह मरते गये । गांधी जी का अन्तःकरण बर्फ की तरह ठंडा बना रहा।"

यह वह मौका या जब महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकर ने कछ सहायता भेजी यो । केवल उन्होंने ही नहीं, राजेन्द्र बाबू ने भी कुछ दवायें श्रीलंका भेजी यी -कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से नहीं, बल्कि व्यक्तिगत रूप में। किन्तू अगर बापू ने, प्रतीक के रूप में ही सही, कछ भेज दिया होता तो भारतवागियों और श्रीलंका के निवासियों के संबंधों पर बहत गहरा असर पहता । गेर की बात है कि बाप जक गये थे।

ऐसा नहीं कि मैंने जो कुछ कहा था, उतका उत्तर बापू के पास नहीं था। बाप के पास उन दोनों आपितयों का बुख न कुछ उत्तर तो अवदय रहा होगा. किन्तु बह एक भी शब्द न बीते । बच्छा होता कि वह कुछ नहते, किन्त उन्होंने एक ठंडी सांस ली और उठ कर चले गये।

नहीं कहा जा सकता कि मैंने जो चुछ कहा था, यह मौन उसकी सच्चाई का सुबक या या वापू पूरे मतते को नजरअंदाज कर गरे । दोनों बानें संभव हैं । जो हो, इस देश में नाथीवाद का एक ही सच्चा अनुवादी पंडा हुआ है-

और वह ये स्वयं महात्मा गांघी। हमारे जैसे अन्य लोग तो केवन गांची धाताब्दी मता सकते हैं, गांपीकाद को एक भी कदम आगे बढ़ा नहीं सकते !





